स्वयं की सत्ता

प्रवचन-क्रम

1. स्वयं की सत्ता का बोध...2
2. स्वयं की सत्ता ही सत्य है..16
3. सीखे हुए ज्ञान से मुक्ति...30
4. छोड़ें दौड़ और देखें..43
5. जागो और देखो..56
6. भार क्या है?...70
7. पूछें--मैं कौन हूं?...84

स्वयं की सत्ता
पहला प्रवचन

स्वयं की सत्ता का बोध

आपसे क्या कहूं, इस पर सोचता था। जो कहने का मन है, शायद उसे कहने को शब्द नहीं मिल पाते हैं। और आज तक मनुष्य के पूरे इतिहास में जिन लोगों ने कुछ जाना है, उन्हें कहना कठिन हो गया है। अनुभूतियां प्राणों की किसी गहराई में अनुभव होती हैं और शब्दों में उन्हें प्रकट करना मुश्किल और कठिन हो जाता है। ऐसा भी प्रतीत होता है कहने के बाद कि जो कहना चाहा था, वह पूरी तरह पहुंच नहीं पाया होगा। एक छोटी सी घटना मुझे स्मरण आती है, उससे ही अपनी बात को प्रारंभ करना चाहूंगा।
ऐसी ही किसी सांझ को किसी देश में बहुत से लोग किसी फकीर को सुनने को इकट्ठे हुए थे। फकीर आया और तो सामने खड़ा हुआ और थोड़ी देर मौन खड़ा रहा, और फिर उसने नाचना शुरू किया, थोड़ी देर नाचता रहा और फिर उसने लोगों से पूछा कुछ समझ में आया? अब नाचने से कुछ भी समझ में नहीं आ सकता। लेकिन उस फकीर ने कहा कि शब्दों से तो फिर और भी समझ में नहीं आएगा।
मैं भी जब आपसे कुछ कहने को होता हूं तो मुझे लगता है कि शब्दों से क्या समझ में आ सकेगा? शायद नाचने से थोड़ा समझ में आए, लेकिन उससे भी क्या समझ में आ सकेगा? शायद गीत गाने से कुछ समझ में आए, लेकिन उससे भी क्या समझ में आ सकेगा? जो भीतर प्राणों में आनंद की ऊर्जा, जो भीतर प्राणों में आनंद अनुभव होता है, उसे कैसे प्रकट किया जाए? उसकी पीड़ा को शायद वे थोड़े से लोग समझ पा सकते होंगे, जिन्होंने किसी को प्रेम किया हो, और जिसको प्रेम किया हो और उसके पास गए हों, और बहुत कुछ कहने को सोचा हो और फिर पाया हो कि शब्द व्यर्थ हो गए हैं। और कुछ भी कहने को सूझ नहीं पड़ा होगा। जिन्होंने कभी किसी को प्रेम किया है, उन्हें अनुभव होगा कि शब्द कितने छोटे पड़ जाते हैं, और प्रेम में कोई भी शब्द काम नहीं देता। वहां शायद मौन ही कुछ कह पाता है। लेकिन प्रेम से भी बड़ी बात परमात्मा है। और प्रेम में अगर शब्द छोटे पड़ जाते हों तो परमात्मा के लिए तो शब्द बहुत ही व्यर्थ हो जाएंगे, शायद असत्य भी हो जाएंगे। इसलिए शब्द कहते से ही आधा तो असत्य हो जाता है, फिर आधा जो बचता है, वह सुनते से असत्य हो जाता है। इसलिए बड़ी परेशानी और बहुत कठिनाई है। फिर भी कुछ बातें आपसे कहूंगा, इस आशा में कि शब्दों पर बहुत ध्यान नहीं देंगे, मेरी पीड़ा पर ध्यान देंगे, मेरे प्रेम पर ध्यान देंगे और शब्द जिस तरफ इशारा करते हैं, उस तरफ ध्यान देंगे। मनुष्य को देखता हूं तो जो पहली बात मुझे खयाल में आती है कि उससे कहूं वह यह कि हम अपने ही हाथों से, अपने ही हाथों से वे सब द्वार बंद किए हुए हैं, जहां से प्रकाश आ सकता था और आनंद आ सकता था। हम अपने ही हाथों से उस ओर पीठ किए हुए खड़े हैं, जिस ओर से जीवन की ज्योति हमें जगा सकती थी और हमारे प्राणों को स्पंदन से और नृत्य से और संगीत से भर सकती थी। आपको भी देखता हूं, तो मुझे ऐसा ही लगता है कि आप भी द्वार बंद किए हुए हैं, और कैसे हम द्वार बंद किए हुए हैं? एक छोटी सी बात से सारे द्वार बंद हो गए हैं। जीवन में जो भी पाने जैसा है, वह नहीं पाया जा सकेगा अगर उस छोटी सी बात पर हमारा ध्यान न जाए। इस जमीन पर बहुत से आश्चर्य हैं, लेकिन उस छोटी से बात से बड़ा और कोई आश्चर्य नहीं है। और वह छोटी सी बात यह है कि हम अपने को अस्वीकार किए हुए खड़े हैं। हममें से बहुत कम लोग हैं, जिन्होंने अपने को स्वीकार किया हो। जिन्होंने माना हो कि वो हैं। मैं हूं यह बोध हमारा खो गया है। हम जीते हैं, हम काम करते हैं, हम उठते हैं, चलते हैं और मर जाते हैं। लेकिन होने का, एक्झिस्टेंस का, अपनी सत्ता का, अपनी आत्मा का अपने प्राणों का कोई भी अनुभव नहीं हो पाता।
यह अनुभव होगा भी नहीं। क्योंकि अनुभव की शुरुआत जिस द्वार से हो सकती थी, वह यह है कि हम यह स्वीकार करते हैं, हम किसी तल पर यह अनुभव करते हैं कि मेरा होना है। मेरी कोई सत्ता है। मैं हूं। हम कहेंगे... मेरी बात को सुन कर आप कहेंगे हम तो अस्वीकार नहीं किए हुए हैं, हमें तो अनुभव होता है कि हम हैं। लेकिन कभी आपने खयाल किया है, यह अनुभव आपके होने का है या आपके

आस-पास जो चीजें हैं, उनके होने का है? एक आदमी छोटे पद पर होता है, बड़े पद पर चला जाता है, तो उसे अनुभव होता है कि मैं हूं। उसे अनुभव होता है मैं कुछ हूं। यह कुछ होना उसकी सत्ता का अनुभव है या उसके बड़े पद का? एक आदमी के पास बहुत धन होता है, तो उसे अनुभव होता है कि मैं हूं, यह अनुभव उसकी सत्ता का है, या उसकी संपत्ति का?
अगर हम स्मरण करेंगे, तो हमें ज्ञात होगा, हमें अपने होने का कोई अनुभव नहीं होता, कुछ और चीजों के अनुभव होते हैं और उनको ही हम मान लेते हैं कि हमारे होने का अनुभव है। अगर आपसे आपकी सारी सम्पत्ति छीन ली जाए, आपके वंश का गौरव छीन लिया जाए, आपका धर्म छीन लिया जाए, आपके वस्त्र छीन लिए जाएं, आपकी उपाधियां छीन ली जाएं, जो ज्ञान आपको सिखाया गया है, वह छीन लिया जाए; प्रशंसा और निंदा जो आपको मिली है, वह छीन ली जाए, तो आपके पास क्या बच रहेगा? जो दूसरों ने दिया है अगर वह छीन लिया जाए, तो फिर आपके पास क्या बच रहेगा? आप एकदम खाली हो जाएंगे और लगेगा कि मर गए। आपके पास अपनी सत्ता का कोई अनुभव नहीं है, और जिसे हम कहते हैं मेरा होना, मुझे लगता है कि मैं हूं। यह होना मेरा नहीं है, बल्कि और लोगों ने जो मुझे दिया है, उसका ही संग्रह है। स्वयं का यह अनुभव नहीं है, बल्कि आस-पास से आई हुई प्रतिध्वनियों का संग्रह है। कोई मुझे आदर देता है, कोई सम्मान देता है, कोई निंदा करता है, कोई बड़े पद पर बैठाता है; इस सारी बातों को मैंने इकट्ठा कर लिया है, और इसी के संग्रह को मैं समझता हूं कि मैं हूं। यह मेरा होना नहीं है। यह मेरा बीइंग नहीं है, यही मेरा प्राण नहीं है, यह मेरी आत्मा नहीं है। लेकिन हम इसी को अपना होना समझे हुए हैं।
अगर मैं आपसे पूछूं, आप कौन हैं? तो अपना नाम बताएंगे, अपना घर बताएंगे, अपना पद, पदवियां बताएंगे, क्या यही आप हैं? अगर ए सब आपसे छीन लिया जाए, तो आपके पास क्या होगा? अगर यही आप हैं, तो मृत्यु आपसे सब छीन लेगी और फिर आपके पास कुछ नहीं बचेगा, यही वजह है कि हम सारे लोग मृत्यु से डरे हुए हैं। हम सारे लोग मृत्यु से घबराए हुए हैं, क्योंकि मृत्यु हमें मिटा देगी। जिसे हम जानते हैं हमारा होना, वह मृत्यु पोंछ देगी, क्योंकि वह हमारा होना ही नहीं है। मृत्यु केवल उसे मिटा सकती है, जो नहीं है। जो है उसे मृत्यु नहीं मिटा सकती, उसे कुछ भी नहीं मिटा सकता, जो है उसका मिटना असंभव है। जो है वह नहीं कैसे होगा?
एक छोटे से रेत के कण को भी तो नहीं मिटाया जा सकता। विज्ञान की सारी ताकतें भी लग जाएं, तो उसे नहीं मिटा सकतीं। वह रहेगा, वह अपनी मूल सत्ता में रहेगा। आज तक जगत में एक छोटे से रेत के कण को भी नहीं मिटाया जा सका। उसकी सत्ता को नहीं मिटाया जा सकता है, किसी चीज की सत्ता नहीं मिटाई जा सकती। जो है उसे मिटाना असंभव है, और जो नहीं है, उसे बनाना भी संभव नहीं है। तो हम कैसे मिट जाएंगे? मैं कैसे मिट जाऊंगा? आप कैसे मिट जाएंगे? लेकिन लगता है कि मृत्यु मिटा देगी। असल में जिसे हमने अपना होना समझा है, उसे निश्चित ही मृत्यु मिटा देगी। क्योंकि वह होना होना ही नहीं है। वह कोई सत्ता नहीं है, उसका कोई अस्तित्व नहीं है, उसका कोई एक्झिस्टेंस नहीं है। वह केवल हमारी कल्पना है और कल्पना मिट जाएगी, और सपने मिट जाएंगे। तो मैं आपसे कहूं, मैं हूं, मेरी सत्ता है, इसका बोध हमें नहीं है। और जिसे इसका भी बोध न हो, उसके जीवन में आगे और क्या होगा? जिसे अपने होने का बोध न हो, उसके जीवन में फिर आगे और क्या हो सकता है? उसके जीवन में कुछ भी नहीं हो सकता है। उसके जीवन में सिवाय दुख के, पीड़ा के और चिंता के कुछ भी नहीं हो सकता। उसके जीवन में आनंद और आलोक नहीं हो सकता। जीवन की किसी भी प्रगाढ़ अनुभूति की जो पहली आधारशिला है, वह है स्वयं का होना। समय लगेगा कि हम अपने को जानते हैं और मानते हैं, और हमें हंसी आएगी अगर कोई कहे कि हम अपने को नहीं मानते। मैं आपसे कहूं आप अपने को बिल्कुल भी नहीं मानते। एक छोटी सी कहानी मुझे स्मरण आती है, जब मैंने कहीं भी उसको कहा, तो लोग हंसने लगे। कहानी ऐसी है कि हम हसेंगे, हमें लग सकता है कि हंसने जैसी है। इसमें कोई भी संगति नहीं मालूम पड़ती, बहुत असंगत मालूम होती है, लेकिन ऐसी कहानी हम सबके जीवन में घट रही है।

एक सूफी फकीर था। एक रात बहुत देर तक एक मस्जिद में बैठ कर कुछ लोगों
से चर्चा करता रहा। चर्चा में इतना तल्लीन हो गया कि भूल गया कि कब सांझ हो गई, कब सांझ बीत गई? रात के भोजन का समय बीत गया और वे सारे लोग जो उसे सुन रहे थे, वे भी भूल गए। रात कोई ग्यारह बजे चर्चा पूरी हुई, फकीर उठ कर जाने लगा, तो उन लोगों ने कहा कि मित्र! तुमने ये बातें की और हम भूल गए, सांझ का भोजन का समय भी व्यतीत हो गया, अब क्या होगा? उस फकीर ने कहा, तो फिर मेरे साथ आओ। मेरे घर पर ही आज भोजन ले लेना। वे सारे लोग उस फकीर के साथ हो लिए। जब फकीर गांव के बाहर अपने झोपड़े के बाहर पहुंचा, तो उसे खयाल आया कि उसके झोपड़े में इतने लोगों के खाने के लायक होगा भी क्या? और आज तो सुबह से वह कुछ भीख मांग कर भी नहीं लाया है, बड़ी मुश्किल हो गई, तो उसने लोगों को कहा कि मित्रों! तुम थोड़ा बाहर ठहरो, मैं जाऊं और अपनी पत्नी को जरा पूछ लूं कि क्या व्यवस्था हो सकती है?
वह भीतर गया, लोगों को बाहर दरवाजे पर छोड़ कर। पत्नी को उठाया और उसने कहाः आज तो घर में हमारे खाने को भी कुछ नहीं है, तुम सुबह से कुछ मांग कर लाए नहीं। और कल सांझ जो बचा था, वह तुमने बांट दिया। उस फकीर का नियम था, सुबह मांग लेना और सांझ बांट देना, जो बच जाए। रात निपट संपत्तिहीन होकर सो जाना। उसने कहा आज तो मैं भूखी बैठी हूं, तुम्हारी प्रतीक्षा थी, लेकिन तुम कुछ लाए नहीं। पच्चीस लोगों के लिए कैसी व्यवस्था हो सकती है आधी रात में? तो उस फकीर ने कहाः फिर क्या होगा? एक काम करो, जाओ उन लोगों से कह दो कि फकीर घर पर नहीं है। उसकी पत्नी ने कहा कि वो क्या कहेंगे? यह कैसे पागलपन की बात है? तुम उन्हें साथ लाए हो, और मैं उन्हें जाकर कह दूं कि फकीर घर पर नहीं है! उसने कहा फिलहाल जाओ और कहो।
वह पत्नी बाहर गई, सर्व सीधी स्त्री थी, उसने जाकर उन लोगों से पूछाः कैसे आप लोग आए हैं? उन्होंने कहाः हमें तुम्हारे पति लाए हैं, निमंत्रण देकर भोजन के लिएः उसने कहाः कैसी बात करते हो? वे तो सुबह से गए अभी तक लौटे नहीं, वे घर पर नहीं हैं। उन लोगों ने कहाः यह कैसी मजाक है, वे हमारे साथ आए हैं, और अभी भीतर गए हैं। और वे विवाद करने लगे, और वह फकीर भीतर छिपा हुआ सुनता रहा, जब उसके सुनने की सामर्थ्य के बाहर बात हो गई, तो उसने छप्पर में से सिर निकाला, उसने कहा कि महानुभव क्यों व्यर्थ की बकवास कर रहे हो, क्यों विवाद कर रहे हो? यह भी हो सकता कि फकीर तुम्हारे साथ आया हो, फिर पीछे के रास्ते से कहीं चला गया हो। उसने कहा यह हो सकता है कि फकीर तुम्हारे साथ आया हो, और फिर पीछे के रास्ते से कहीं चला गया हो, यह भी तो हो सकता है, विवाद की क्या जरूरत है?
उन लोगों ने कहाः गजब आश्चर्य कर रहे हो, खुद कह रहे हो कि तुम घर पर नहीं हो? उसने कहा हां मैं कहता हूं कि मैं घर पर नहीं हूं, और वापस लौट जाओ। उन लोगों ने कहा हम कैसे इसे माने? क्योंकि तुम जब खुद कहते हो कि मैं घर पर नहीं हूं, तो तुम्हारे होने का प्रमाण मिल जाता है।
लेकिन हम सारे लोग यह कह रहे हैं कि हम घर पर नहीं हैं। हम पूरे जीवन
यह कह रहे हैं कि हम घर पर नहीं हैं। हम सुबह से सांझ तक यह कह रहे हैं कि हम घर पर नहीं हैं। और हमें उस फकीर की बात में तो पागलपन दिखाई पड़ सकता है, हमारी बात में हमें दिखाई नहीं पड़ता। सुबह से लेकर सांझ तक आप क्या कर रहे हैं? आप यह इनकार कर रहे हैं कि आप घर पर नहीं हैं। चौबीस घंटे आपके सारे विचार, आपकी सारी वासनाएं, आपकी सारी इच्छाएं, आपके सारे काम इस बात को इनकार कर रहे हैं कि भीतर कोई आत्मा है। भीतर कोई है, इस बात की इनकारी चल रही है। क्योंकि अगर भीतर आत्मा का बोध हो, अगर भीतर स्वयं के होने का पता हो, तो जीवन बिल्कुल दूसरा हो जाएगा, यह नहीं हो सकता, जो है। जिस आदमी को यह पता हो कि उसके पास बहुत संपत्ति है, वह रास्तों पर भीख मांगता हुआ मिलेगा? और अगर वह रास्तों पर भीख मांगता हुआ मिले, तो इस बात का प्रमाण होगा कि उसे पता नहीं कि उसके घर पर संपत्ति है। लेकिन हम सारे लोग मांगते हुए खड़े हैं। और यह सिवाय इसके क्या प्रमाण हो सकता है कि भीतर हमारे उस मालिक का, उस बादशाह का, उस परमात्मा का, उस सत्ता का हमें कोई बोध न हो, जिसे कुछ भी मांगने की जरूरत नहीं है, जिसे कुछ भीख मांगने की जरूरत नहीं है। और हम सारी कामनाओं और वासनाओं में जिसकी आकांक्षा कर रहे हैं, वह इस

बात का प्रमाण है कि हमें पता नहीं है कि हमारे भीतर कोई है, जिसकी कोई कामना नहीं है, जिसकी कोई आकांक्षा नहीं है। हम अशांत हैं, यह इस बात की सूचना है कि हमें उसका पता नहीं है, जो कि भीतर परम शांति में निरंतर विराजमान है। हम दुखी हैं और पीड़ित हैं, क्योंकि भीतर जो आनंद जिसका स्वरूप है, उसकी हमें कोई खबर नहीं है। हममें में से प्रत्येक अपने जीवन भर स्वयं को अस्वीकार करता है, इनकार करता है। अपने सारे कामों से, अपने सारे विचारों से, स्वयं को असिद्ध करता है। इस तरह स्वयं को असिद्ध करने को मैं अधर्म कहता हूं। और जो व्यक्ति अपने जीवन में, अपने विचार में, अपने आचरण में, अपनी कामनाओं में, अपनी इच्छाओं में स्वयं को सिद्ध करने की ओर प्रविष्ट होने लगता है, उस व्यक्ति को मैं धार्मिक कहता हूं, उस व्यक्ति की जीवनचर्या को उस व्यक्ति की जीवन दिशा को मैं धर्म कहता हूं। स्वयं के बोध के प्रति हमारी जो दिशा है, और जो क्रांति है, और जो गति है, वह धर्म है। हम स्वयं को अस्वीकार क्यों कर रहे हैं? और हम स्वयं को कैसे स्वीकार
कर सकते हैं? इस संबंध में ही मैं सारी बातें इन तीन दिनों में आपसे कहना चाहूंगा। पहली बात तो यही कहना चाहता हूं कि इस बात का बोध, इस बात का खयाल पैदा होना चाहिए कि मैं... मैं ही हूं। हम सब स्वीकार करते हैं, यह दीवाल है, यह मकान है, ये रास्ते हैं, ये चारों तरफ घेरे हुए लोग हैं, इन सबको हम स्वीकार करते हैं, ये हैं। लेकिन हम अपने को, और इधर पीछे विचार के कुछ पंथों ने, परंपराओं ने कहना शुरू किया, मनुष्य के भीतर कोई आत्मा नहीं है। मनुष्य केवल शरीर है और पदार्थ का जोड़ है। और अणुओं का संग्रह है। और बिखर जाने पर उसमें कुछ शेष नहीं रह जाएगा। इधर यह कहना शुरू किया, यह कहना तो अभी नया-नया शुरू किया लेकिन हम सारे लोग करीब-करीब इसे मानते हैं। कहीं हमारे भीतर हमें अपने होने का पृथक बोध नहीं होता।
यह संभव है ईश्वर न हो। यह हो सकता है ईश्वर हमारी कल्पना हो। यह संभव
है, कोई मोक्ष न हो, यह संभव है कि कोई स्वर्ग और नरक न हों, यह भी संभव है कि यह बाहर जो दुनिया दिखाई पड़ती है, यह भी न हो, यह भी संभव है कि मैं यहां बैठा हूं, और आप सब यहां कोई भी न हों, मैं केवल सपना देखता हूं। लेकिन यह संभव नहीं है कि मैं न हूं। मेरे लिए इस सारे जगत में मेरे अतिरिक्त और कोई बहुत प्रमाणिक सत्ता नहीं है, और न किसी दूसरे के लिए हो सकती है! क्या कभी आपने विचार किया है, रात जब सो जाते हैं, तो दिन में जो जगत देखा था, वह असत्य हो जाता है। स्वप्न में उसका कोई पता भी नहीं रह जाता, गहरी निद्रा में उसका कोई बोध भी नहीं रह जाता। स्वयं को आपने जागरण में माना हुआ है, धनी हैं या दरिद्र हैं, पद पर हैं या पदहीन हैं, बहुत प्रतिष्ठित हैं या बहुत अपमानित हैं, बहुत बड़े भवनों में हैं, या झोपड़ों में हैं, या सड़क पर पड़े हैं; रात नींद में सब विलीन हो जाता है। आप जागने में जो भी जानते हैं, वह सब विलीन हो जाता है। सपने में जो आप जानते हैं, वही मालूम होने लगता है, कि सत्य है। सपने में किसी को ज्ञात नहीं होता कि वह जो देख रहा है, वह सपना है, झूठ है। सपने में ज्ञात होता है, जो दिखाई पड़ रहा है, सत्य है।
मन की हमारी कुछ ऐसी पकड़ है कि जो दिखाई पड़ता है उसी को सत्य मान लेता है। जो दिखाई पड़ता है उसी को सत्य मान लेता है। सपने में सपने को ही सत्य मान लेता है। तो जो मन सपने को सत्य मान लेता हो, वह मन अगर इस दुनिया को सत्य मान रहा हो, तो कोई बहुत आश्चर्य की बात नहीं है। लेकिन हो सकता है, जैसे सपना झूठा है, वैसे यह दुनिया भी झूठी हो। लेकिन एक बात तय है कि सपना चाहे झूठा हो, सपने को देखने वाला झूठा नहीं होता। नहीं तो सपना कौन देखेगा? सपना भले ही असत्य हो, लेकिन सपने को जो देखता है, वह सत्य होता है। यह हो सकता है कि ए दुनिया जो मैं देख रहा हूं, असत्य हो; लेकिन मैं असत्य नहीं हो सकता। एक ही चीज है जो असत्य नहीं हो सकती, वह मेरी सत्ता है।
च्वांगत्सु का नाम शायद आपने कभी सुना हो, चीन में एक अदभुत विचारक हुआ। उसने एक रात सपना देखा कि वह सपने में तितली हो गया है। और बगिया में घूम रहा है, फूलों पर डोल रहा है। सुबह वह उठा तो बहुत उदास बैठा हुआ था। उसके शिष्यों ने पूछाः आज आप उदास क्यों हैं? उसने कहा मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया हूं, एक बड़ी उलझन में पड़ गया हूं; रात मैंने सपना देखा मैं तितली

हो गया हूं, अब मुझे यह शक पैदा हो रहा है कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि तितली सपना देख रही हो कि च्वांगत्सु हो गई है? यह भी हो सकता है। अगर च्वांगत्सु यह सपना देख सकता है कि तितली हो गया, तो तितली भी यह सपना देख सकती है कि च्वांगत्सु हो गई। उसके बाद तीस साल तक वह जिंदा रहा, मरते वक्त भी उसने कहा कि तीस साल हो गए, यह मामला सुलझता नहीं कि मैंने सपना देखा था, तितली होने का, या तितली मेरे होने का सपना देख रही है?
अगर सपने में आप असत्य दुनिया को सत्य मान सकते हैं, कोई भी वजह नहीं
है कि जो दुनिया आप सत्य मान रहे हों, वह भी असत्य हो। यह मैं नहीं कहता कि वह असत्य है, संदिग्ध है। जो हम जान रहे हैं, वह संदिग्ध है। जो भी हम जान सकते हैं, संदिग्ध होगा, वह कभी असंदिग्ध नहीं हो सकता। कोई आंख, कोई कान कभी असंदिग्ध जगत को नहीं देख सकते। इंद्रियों से जो भी जाना जा सकता है, वह संदिग्ध होगा और काम चलाऊ होगा। यही वजह है कि विज्ञान या साइंस की सारी खोजें कामचलाऊ हैं, वे सभी संदिग्ध हैं, और दूसरी बात मिल जाती है, तो पहली बात गलत हो जाती है। न्यूटन गलत हो जाता हो, तो आइंस्टीन आ जाए, कोई आएगा, आइंस्टीन गलत हो जाएगा। संदिग्ध को हम पकड़ लेते हैं, इतनी देर तक काम देता है, फिर कुछ और ज्यादा काम देने वाली बात मिल जाती है, उसको पकड़ लेते हैं, वही सत्य हो जाती है। विज्ञान कभी असंदिग्ध सत्य पर नहीं पहुंच सकता है। क्योंकि उसका संबंध उस दुनिया से है, जो देखी जाती है, सुनी जाती है। इंद्रियों के द्वारा पकड़े जाने वाली दुनिया पर हम कभी असंदिग्ध नहीं हो सकते, कभी वह इंडिविटेबल नहीं हो सकता। कभी ऐसा नहीं हो सकता कि उस पर शक न किया जा सके, संदेह न किया जा सके। लेकिन एक तथ्य हमारे भीतर है, जो असंदिग्ध है, और असंदिग्ध है, और असंदिग्ध हो सकता है। और वह तथ्य हमारी सत्ता है। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर जो उसकी चेतना है, उसके अतिरिक्त इस जगत में और कुछ भी असंदिग्ध नहीं हो सकता। लेकिन हम इस संदिग्ध दुनिया पर अपने सारे जीवन का भवन खड़ा करते हैं। यह रेत पर भवन खड़ा करने जैसा है। यह ताश के महल बनाने जैसा है। जिसकी नींव ही संदिग्ध हो, उस पर कुछ खड़ा करना केवल पागलपन है। लेकिन हम सारे लोग उस पर ही खड़ा करते रहते हैं। नींव को भूल जाते हैं, क्योंकि नींव को अगर विचार करेंगे तो भवन को खड़ा करना मुश्किल हो जाएगा। इसलिए नींव की बात ही भूल जाते हैं। नींव संदिग्ध है, तो भवन असंदिग्ध नहीं हो सकता। और नींव अगर सपना है, तो भवन सत्य नहीं हो सकता। लेकिन हम सारा इस खेल में ही हमारा जीवन व्यतीत होता है। एक छोटी सी बहुत पुरानी पौराणिक कथा है।

बिल्कुल ही असत्य होगी। नारद, नारायण को पूछे कि मैं सुनता हूं कि कुछ लोग हैं, जो कहते हैं जगत माया है। और जगत असत्य है, मेरी समझ में नहीं आता कि यह माया क्या है? यह असत्य होना क्या है, यह इलूजन क्या है, यह भ्रम क्या है? तब उस समय दोपहर की एक तेज धूप से भरे हुए दिन में नारायण और नारद एक घने वृक्ष की छाया में बैठे थे। नारायण ने कहा, फिर तुम्हें बताऊंगा मुझे प्यास लगी है, तुम थोड़ा पानी ले आओ। धूप थी तेज इसलिए नारद एकदम उठ कर न गए, ठंडी थी छाया वृक्ष की, थोड़ी देर बाद गए। गांव में पहुंचे, एक दरवाजे पर जाकर दस्तक दी, एक युवती ने द्वार खोला ब्राह्मण का घर था; बहुत सुंदर उसकी लड़की थी। नारद ने उसको देखा, उनका मन बहुत-बहुत तीव्र आकर्षण अनुभव किया। उन्होंने कहा कि मुझे पानी चाहिए। नारद ने कहाः मुझे पानी चाहिए, मेरे मित्र प्यासे बैठे हैं। उस युवती ने कहा भीतर आएं, धूप में बाहर खड़े न हों, पानी लें, खुद पानी पीएं, लेकिन खाली पानी कैसे दूं? कुछ थोड़ा सा खा लें, फिर पानी लें। नारद भीतर गए, उस युवती ने उन्हें भोजन कराया, पानी दिया, और उस बीच उनका मन उससे बहुत आकर्षित हुआ, और उसकी सेवा और उसके प्रेम से प्रभावित हुआ; और उसका पिता आया और नारद ने कहा कि क्या युवती अविवाहित है? मैं अपना हाथ बढ़ाता हूं, मैं इससे विवाह करना चाहता हूं। और वे विवाहित हुए, और उस घर में रहे और भूल गए कि नारायण के लिए पानी लेने आए थे। दिन बीते, माह बीते और वर्ष बीते और उनके बच्चे थे, और बच्चे हुए। कोई बारह वर्ष बीते। और फिर गांव में बहुत जोर से वर्षा हुई, और गांव की जो नदी थी उसमें बहुत पूर आया, सारा गांव डूब गया, घर द्वार बहने लगे, नारद अपनी

पत्नी को, अपने तीन बच्चों को लेकर गांव से बाहर निकलने की चेष्टा किए; जोर का पूर था, पानी था तेज, पहले उनका एक बच्चा बहा, उसको बचाने को गए तो दो बच्चे और छूट गए, उनको बचाने को गए तो पत्नी भी बह गई, वे रोते और चिल्लाते नदी पार किए, बेहोश होकर गिर पड़े, सारा घर, सारा परिवार नष्ट हो गया था। वे बेहोश पड़े थे, तब किसी ने उन्हें उठाया और कहा कि नारद, उठो। कितनी देर हो गई, मैंने तुमसे कहा कि पानी ले आओ, और लेकिन तुम हो कि सो ही गए।
ठंडी हवा थी, शीतल छाया थी, नारद की नींद लग गई थी, और यह सारा सपना उन्होंने देखा। नारायण ने कहाः कुछ समझे? नारद ने कहाः सब समझ गया। मेरा तो यहां सब बना और सब मिट गया, और थोड़े ही क्षणों में बारह वर्ष की जीवन कथा मेरी व्यतीत हुई। नारायण ने कहा इससे ज्यादा और कुछ संसार नहीं है। और जो उसे माया कहते हैं, इस वजह से माया कहते हैं। वह हमारी कामनाओं का प्रतिफलन है। और हमारी इच्छाओं का बहुत घना रूप है, और हमारे मन का सपना देखने की बड़ी तीव्र आकांक्षा का प्रतिफलन है, उसका प्रक्षेपण है।
यह हमें लगता है कि यह कैसे हो सकता है कि नारद थोड़े से क्षण को सोए और बाहर वर्ष बीत गए? आपने सपने में देखा होगा, थोड़ी देर में वर्षों का सपना आप देख सकते हैं। थोड़ी देर में वर्ष बीत सकते हैं, सपने में। यह जो हमारा समय है, यह जो हमारी कल्पना है, वह सपने में प्रगाढ़ हो सकती है। लेकिन जाग कर पाया जाता है कि सब सपना था। जो लोग इस जीवन से भी जागे हैं, उन्होंने भी इसे सपने से ज्यादा नहीं पाया है। जो सोए हैं उन्हें सत्य है, जो जाग जाते हैं उन्हें असत्य हो जाता है। सोने में ही संसार की सच्चाई है, जो जाग जाता है उसे संसार सत्य नहीं मालूम होता। ऐसा अर्थ नहीं है कि दीवालें मिट जाती हैं, और रास्ते मिट जाते हैं, और लोग मिट जाते हैं; अर्थ है कि संसार के प्रति जो हमारा मूल्यांकन है, संसार को देखने की हमारी जो धारणा है, संसार को सत्य मान कर, सब कुछ मान कर उसके केंद्र पर जीने की जो कल्पना है, वह व्यर्थ हो जाती है, और ज्ञात होता है कि हम कुछ ऐसी जगह भवन बना रहे थे, जहां कोई बुनियाद नहीं थी, और हम कहीं हवा के घर बनाने में तल्लीन थे। लेकिन इस सारी समृद्ध दुनिया के बीच, इन सारे सपनों के बीच कुछ एक सत्य भी है। और वह स्वयं की सत्ता है। बाहर की सारी दुनिया उस अर्थ में सत्य नहीं है, जिस अर्थ में स्वयं का होना सत्य है। वह हमारी निकटतम सच्चाई है। उससे निकट हमारे और कोई भी नहीं है। वही हम हैं, उसे छोड़ कर हम सब खो चुके हैं। यह पागलपन है। उसे छोड़ कर हम सबकी तलाश करते हैं, अंत में हम पाएंगे हमारे हाथ खाली हैं और कुछ भी हमने नहीं पाया है। उसे छोड़ कर हम जो भी बनाएंगे, हम पाएंगे कि वह बना हुआ सब गिर गया है और धूल-धूसरित हो गया है। उसे छोड़ कर हम जो भी पा लेंगे, आखिर में हम पाएंगे, वह पाने का भ्रम है, और उपलब्धि कुछ भी नहीं हैं।
इसलिए मैंने कहा कि पहली बात, पहला आधार जीवन को सत्य की ओर ले जाने का स्वयं की सत्ता है। मुझे किसी न किसी रूप में स्वयं की सत्ता के प्रति जागना होगा। अगर मैं चाहता हूं कि मैं जीवन की सच्चाई को जानूं, अगर मैं चाहता हूं कि मुझे आनंद, आलोक उपलब्ध हो, अगर मैं चाहता हूं अंधकार... होने की कोई गुंजाइश नहीं है। शेष सब असत्य हो सकता है, शेष सब व्यर्थ हो सकता है, शेष सब अर्थहीन हो सकता है, शेष सब सपना हो सकता है; लेकिन कुछ है, जो सपना नहीं है। सपने को देखने वाला सपना नहीं है। सपने के बीच घिरा हुआ सत्य है। तो मैं सत्य की क्या परिभाषा करता हूं? सपना मैं उसे कहता हूं जो दिखाई पड़ता है, सत्य मैं उसे कहता हूं, जो देखता है। सपना मैं उसे कहता हूं जो बाहर है, सत्य मैं उसे कहता हूं जो भीतर है। सपना मैं उसे कहता हूं, जो स्वयं से अन्य है, सत्य उसे कहता हूं जो स्वयं की सत्ता है।
इस स्वयं की सत्ता का बोध इसका विचार, इस दिशा में प्राणों की अभीप्सा
और प्यास जगनी चाहिए।
मैं देखता हूं अगर आपकी कल्पना में, आपके विचार में, आपकी दृष्टि में कभी खयाल भी उठे कि हम आनंद को कैसे पाएं, सत्य को कैसे पाएं? तो भी आप कहीं और खोजेंगे, स्वयं को छोड़ कर; कोई शास्त्र में खोजने चला जाएगा, कोई संसार को छोड़ कर संन्यास में खोजने चला जाएगा। यह बड़ी आश्चर्य की बात है कि जो लोग इस पूरे संसार को असत्य कहने में समर्थ हैं, वे लोग फिर भी संसार को

छोड़ कर संन्यास खोजने की चेष्टा करते हैं। अगर यह पूरा संसार असत्य है, तो सन्यास कैसे सत्य होगा? अगर यह घर-द्वार असत्य हैं तो इनको छोड़ना कैसे सत्य हो जाएगा? अगर धन असत्य है, तो धन का त्याग कैसे सत्य हो जाएगा? अगर धन असत्य है, तो धन का त्याग तो और भी असत्य होगा। क्योंकि वह असत्य का भी असत्य, उसकी भी छाया होगी। अगर एक आदमी कहता हो कि जो रात भूत दिखाई पड़ते हैं, वे असत्य हैं, इसलिए उनसे भागो, तो हम कहेंगे तुम्हारा मस्तिष्क दुरुस्त है या गड़बड़ है? अगर भूत असत्य हैं, तो भागने का कहां कौन कारण है? जो भूत को देख कर भागता है, वह भूत को सत्य ही मानता होगा। संसार को देख कर भागने वाला उतना ही संसार को मानता है, जितना संसार को पाने की इच्छा से लालायित मन। इन दोनों के मानने में कोई भेद नहीं है, ये दोनों संसार के सत्य को मानते हैं। कि संसार कुछ है। कोई कपड़ों को मानता है, तो अच्छे से अच्छे कपड़ों को खोजता है, वह भी कपड़ों को मानता है, जो कपड़ों को छोड़ने की कोशिश करता है। और वहां खोजता है।
कोई व्यक्ति जब सत्य के प्रति उत्सुक होता है, तो एक नई भ्रांति पैदा होती है, वह भ्रांति होती है, वह संसार को छोड़े और संन्यास को पकड़े। मैंने कहा आपसे, जो भी दिखाई पड़ता है, वह असत्य है, संसार भी असत्य है और संसार में ग्रहण किया गया, संन्यास भी असत्य है। जो देखता है और जानता है वह सत्य है, जो संसार को भी देखता है वह सत्य है और जो संन्यास को भी देखता है, सत्य है। वह देखने वाली जो हमारे भीतर एक सत्ता है, वह जो सारे अनुभव को अनुभव करने वाला, हमारे प्राणों का केंद्र है, उस केंद्र को जब तक कोई नहीं पकड़ता और नहीं पहुंचता, तब तक वह विकल्पों को बदलेगा। कपड़े बदल सकता है, भोजन बदल सकता है, घर-द्वार बदल सकता है और इस भ्रम में होगा कि मैं सत्य की ओर जा रहा हूं, लेकिन वह सत्य की ओर नहीं जा रहा, वह असत्य से असत्य को बदल रहा है। वह नया सब्स्टीट्यूट खोज रहा है। वह नई पूर्ति कर रहा है, एक नये असत्य को पकड़ रहा है, एक नया सपना देख रहा है। एक सपना उसने देखा कि बड़े भवन में रहे, एक सपना उसने देखा कि पत्नी-बच्चे मेरे हैं; अब वह एक दूसरा सपना देख रहा है कि न भवन मेरा है, न पत्नी-बच्चे मेरे हैं, मैं तो संन्यासी हूं। अब वह दूसरा सपना देखता है।
सपने से जागना बड़ी दूसरी बात है, सपने से जागने का अर्थ है कि अब हम अपना तादात्म्य, अपनी आइडेंटिटी, किसी से भी नहीं कर रहे, जो भी दिखाई पड़ता है रूप, जो भी दिखाई पड़ती हैं आकृतियां, जो भी दृष्टि में आता है जगत, अब उसमें हम कहीं भी अपना कोई संबंध नहीं खोज रहे; हम उसकी तरफ जा रहे हैं, जो सबको देख रहा है और सबके पीछे खड़ा है। उस साक्षी की तरफ हमारी गति हो रही है, हम उस प्राणों के मूल बिंदु को पकड़ रहे हैं, जो केंद्र में है, और परिधि पर हम कोई परिवर्तन नहीं कर रहे हैं। संन्यास और संसार दोनों परिधि पर हैं। जो दोनें से पीछे हटता है, और उसको पकड़ा है, जो संन्यासी हो सकता है या संन्यासी हो सकता है, जो संसारी हो सकता है, या संन्यासी हो सकता है। जो भोगी हो सकता है या त्यागी हो सकता है। उस बीच के बिंदु को जो पकड़ रहे हैं, जो दोनों के बीच में खड़ा है, और कभी भोगी बन जाता है और कभी त्यागी बन जाता है, वह कौन है? सवाल यह नहीं है कि भोग छोड़ कर कोई त्याग में चला जाए, सवाल यह है कि वह कौन है, जो भोग में होता है या त्याग में होता है? वह कौन है, जो मकान में रहता है या मकान छोड़ देता है? वह कौन है, जो वस्त्र पहनता है, या नग्न हो जाता है? वह कौन है सत्ता हमारे भीतर? उस बिंदु को उस केंद्र को पकड़ना, स्वयं को पकड़ना है, और उसे छोड़ कर हम जो भी करेंगे उससे हम केवल सपने बदल लेंगे। सपने कभी सुखद भी हो सकते हैं, सपने दुखद भी हो सकते हैं। न तो सुखद होने से सपना कोई सत्य हो जाता है, न दुखद होने से असत्य हो जाता है। यह हो सकता है कि एक संसारी दुखी हो और एक सन्यासी सुखी हो जाए। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, सपने भी सुखद हो सकते हैं, और होते हैं। और खतरा यही है कि दुखद सपनों को छोड़ना तो बहुत आसान होता है, सुखद सपनों को छोड़ना बहुत कठिन हो है। सुख देता है इसलिए छोड़ना मुश्किल हो जाता है। इसलिए संसार क ो छोड़ देना बहुत आसान है, संन्यास को छोड़ना बहुत कठिन हो जाता है। और जो संसार को छोड़ कर गया है, और फिर सन्यास को छोड़ने में असमर्थ है, वह स्वयं से वंचित हो जाता है। वह स्वयं को पाने में समर्थ नहीं हो पाता।

संसार को छोड़ें और सन्यास को भी छोड़ें। छोड़ने का अर्थ यह नहीं है कि उनसे भाग जाएं, छोड़ने का अर्थ कि उसे देखें, जो दोनों के पीछे है, और जिसे कभी भी नहीं छोड़ा जा सकता, जो हमेशा आपके साथ है। मैं चाहे वेश्यालय में चला जाऊं तो मेरे साथ में मैं हूं, और चाहे मैं भगवान के मंदिर में चला जाऊं तो मेरे साथ में हूं। वेश्यालय भी बाहर है और भगवान का मंदिर भी बाहर है, मैं चाहे नरक में चला जाऊं, तो भी साथ रहूंगा अपने और चाहे मैं मोक्ष में चला जाऊं, तो भी मैं साथ रहूंगा अपने। मोक्ष का भी कोई मूल्य नहीं है और नरक का भी कोई मूल्य नहीं है, वेश्यालय का भी मूल्य नहीं, मंदिर का भी मूल्य नहीं; मूल्य तो उसका है, जो सदा मेरे साथ है और जिसे छोड़ा नहीं जा सकता। उसे जानना आत्मा को जानना है। उसे पहचानना स्वयं को पहचानना है। लेकिन हम बाहर के मकान बदलते रहते हैं, दुकान से ऊब जाता है मन, तो मंदिर को पहुंच जाते हैं। खाता-बही से ऊब जाता है मन, दफ्तर की किताबों से ऊब जाता है, तो गीता, रामायण और बाइबिल को खोजने लगते हैं। लेकिन गीता, रामायण, बाइबिल भी उतनी ही बाहर हैं, जितने कि आपके दफ्तर के रजिस्टर आपसे बाहर हैं। कोई बहुत भेद नहीं है, रजिस्टर को पढ़ते वक्त आप एक सपना देख रहे हैं, बाइबिल को पढ़ते वक्त, गीता को पढ़ते वक्त दूसरा सपना देख रहे हैं। दोनों हालत में आप अपने बाहर देख रहे हैं। वेश्यालय में गए हैं, तब एक सपना देख रहे हैं, मंदिर में गए हैं, तब दूसरा सपना देख रहे हैं; दोनों स्थितियों में अपने बाहर देख रहे हैं।
स्वयं को देखना है। और स्वयं को देखना बड़ी दूसरी बात है, बड़ी क्रांति
की बात है। स्वयं को देखने का अर्थ है कि मैं दृष्टि को दृश्य से खाली कर लूं, जो भी दिखाई पड़ता है, उसे छोड़ दूं, क्योंकि जब तक कुछ मुझे दिखाई पड़ता रहेगा, तब मेरा मन बाहर है, किसी न किसी चीज को पकड़े रहेगा और अटका रहेगा। तब तक मैं स्वयं को नहीं पा सकूंगा। दृश्य खाली हो जाए, और दृष्टि शून्य हो जाए तो स्वयं के दर्शन शुरू होते हैं। उसका मैं विचार करूंगा कि कैसे स्वयं के दर्शन हो सकते हैं? कैसे दृष्टि खाली हो सकती है? कैसे हम उपलब्ध हो सकते हैं, उसे जो कि सत्य है? लेकिन उसके पहले आज तो इसी बात पर आपसे कहना चाहता हूं कि आपके खयाल में कहीं यह आघात पड़ ही जाना चाहिए कि जिसे हम जीवन मानकर चल रहे हैं, वह स्वयं से पलायन है, अपने से भागते जाना है। लेकिन अपने से भागकर जाइएगा कहां? कोई अपने से भाग सकता है? चाहे कितनी ही संपत्ति उपलब्ध हो जाए, तो भी अपने से भाग नहीं सकते, और चाहे कितना ही बड़ा पद उपलब्ध हो जाए, तो भी अपने से भाग नहीं सकते। चाहे कहीं भी पहुंच जाएं, अपने से भाग नहीं सकते। अपने से भागना असंभव है, यह एस्केप संभव नहीं है। यह पलायन संभव नहीं है। हम भुला सकते हैं, अपने को; लेकिन अपने से भाग नहीं सकते, अपने से बच नहीं सकते। कैसे कोई अपने से बचेगा? क्या यह संभव है? लेकिन हमारी सारी चेष्टाएं इसी तरफ लगी हैं। हम अपने को भूलने में लगे हैं। अगर आधुनिक मनुष्य के मन का विश्लेषण हो, तो एक ही बात दिखाई पड़ेगी कि हर व्यक्ति अपने को भूलने में लगा है। चौबीस घंटे हम अपने को भूलने में लगे हैं। हम अपने से बचना चाहते हैं। किसी और में अपने को भुला लेना चाहते हैं। कोई संगीत में भुलाता होगा, कोई संपत्ति में भुलाता होगा, कोई साहित्य में भुलाता होगा, कोई शक्ति की ख्ल्लज में, पद की खोज में, अधिकार की खोज में भुलाता होगा। राजनीति किसी का नशा होगी, धर्म किसी का नशा होगा, साहित्य किसी का नशा होगा, धर्म किसी का नशा होगा, हम अपने को भुलाए रखना चाहते हैं, जो चीज भी हमें अपने से बचा ले, हम उसी की तलाश में लग जाते हैं। हर आदमी लगा हुआ है। लेकिन मौत सबके निकट है। और सारे पलायन, और सारा भागना तोड़ देगी। और तब ज्ञात होगा हम अपने से वंचित ही रह गए हैं पूरे जीवन, हमने कभी कोशिश ही नहीं की, हमने कभी खोज ही नहीं की। अगर आपको थोड़ी देर अकेला छोड़ दिया जाए तो घबरा जाएंगे। मित्र चाहिए, क्यों? क्योंकि मित्र स्वयं को भूलने में सहायता कर देते हैं। अगर आपको अकेले जंगल में भेज दिया जाए, घबरा जाएंगे, बस्ती की तरफ भागेंगे। क्यों? क्योंकि भीड़-भाड़ में अपने को खोना आसान है। हर आदमी भीड़ की तरफ भाग रहा है, जहां भीड़ है, वहां आप जा रहे हैं। जहां आप अकेले रह जाएंगे, वहां कोई भी नहीं जा रहा है। और जो अकेले होने की तरफ नहीं जा रहा है, वह व्यक्ति स्वयं को कैसे जानेगा? और जो

सभ्यता भीड़ की तरफ बढ़ती जा रही है, वह सभ्यता आत्मा से वंचित हो जाएगी। वह सभ्यता आत्मा को नहीं जान पाएगी। हम सब भीड़ से घिरते जा रहे हैं। और एकांत में और अकेले में होना घबड़ाहट देने लगा है। कोई अकेला नहीं होना चाहता। आप अकेले होना चाहते हैं? अपने से पूछें। किसी शांत क्षण में अपने से पूछें, क्या मैं अकेला होना चाहता हूं? क्या मैं अकेला रह सकूंगा? क्या मैं अकेला जी सकता हूं? और अगर नकारात्मक उत्तर आए, और अगर भीतर से खबर आए कि अकेले तो नहीं हो सकते, अकेले तो नहीं जी सकते, तो फिर स्मरण रखें, कभी सत्य का आपको अनुभव नहीं हो सकता है। सत्य का अनुभव भीड़ में नहीं अकेले में है। सत्य का अनुभव दूसरे लोगों में नहीं, स्वयं में है। और अगर आप अकेले नहीं हो सकते तो आप सत्य से विपरीत दिशा में जा रहे हैं। स्वयं से विपरीत दिशा में जा रहे हैं।
जर्मनी में एक फकीर था, इकहार्ट। एक दूर जंगल में गया हुआ था, एक झाड़
के नीचे अकेला बैठा था। कुछ और लोग भी शिकार को जंगल गए थे। उन्होंने देखा गांव का फकीर है, इकहार्ट अकेला बैठा है, सोचा कि ऐसा अकेले में उसे बुरा नहीं लग रहा होगा? सोचा अकेले में कैसा परेशान नहीं होता होगा? चलें और उसे साथ दें। वे उसके पास गए और उन्होंने उससे कहाः इकहार्ट, सोचा हमने, अकेले बैठे हो, घबड़ा गए होओगे, ऊब गए होओगे। कोई पास नहीं बिल्कुल अकेले बैठे हो, कैसी परेशानी नहीं मालूम होती होगी? यह सोच कर हम आए कि चलो तुम्हें साथ दें। इकहार्ट ने आंखें खोलीं और उसने कहाः मित्रो, तुम्हारी बड़ी कृपा है, लेकिन इतनी देर मैं अपने साथ था, तुमने आकर मुझे अकेला कर दिया।
हममें से कोई भी अपने साथ नहीं होना चाहता है। हम हमेशा किसी और के साथ होना चाहते हैं। और उसको हम मैत्री का नाम देते हैं और प्रेम का नाम देते हैं। समाज का नाम देते हैं, समूह का नाम देते हैं। ये सब नाम झूठे हैं। ये हमारी तरकीबें हैं स्वयं को भुलाने की। ये सब हमारे नशे हैं, ये सब इनटॉक्सीकेंट हैं--चाहे हम प्रेम कहें, चाहे हम मित्रता कहें--ये सब नशे हैं, जिनमें हम अपने को डुबाना चाहते हैं। उस शराबी के तो हम विरोध में हैं जो सड़क पर नशा करके पड़ा हुआ है। सारी दुनिया में लोग विचार करते हैं कि शराब बंद हो जानी चाहिए। सारी दुनिया में लोग विचार करते हैं कि शराब पीने को नहीं मिलनी चाहिए, लेकिन क्या आपको पता है कि हमने कितनी-कितनी तरह की शराबें ईजाद कर ली हैं, जिनमें अपने को भुलाने का उपाय है। जहां भी आप अपने को भुलाते हैं, वहीं शराब है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।
एक आदमी रेडियो खोल कर बैठा हुआ है, एक आदमी सिनेमा में बैठा हुआ है,
एक आदमी मित्रों के बीच बैठा हुआ है, एक आदमी ताश खेल रहा है; एक आदमी अखबार पढ़ रहा है, एक आदमी चुनाव लड़ रहा है, एक आदमी कुछ और कर रहा है; कोई कुछ कर रहा है, ए सारी की सारी चेष्ठाएं हैं अपने को भूलने की, अपने से बचने की, अपने साथ से बचने की। और क्या कभी आपने सोचा कि जब आप अपने साथ रहने से डरते हैं, तो दूसरे आपके साथ रहने से परेशान ही होते होंगे। जब मैं अपने साथ नहीं रह सकता तो मेरे साथ जो भी रहेगा, उसको परेशानी ही दूंगा और क्या दूंगा। जब मैं खुद परेशान होता हूं अपने साथ, तो दूसरे लोग मेरे साथ कैसे आनंद को उपलब्ध हो जाएंगे? लेकिन इस दुनिया में सारे लोग अपने साथ परेशान हैं और दूसरे के साथ शांति खोजना चाहते हैं, अजीब बात है! वे दूसरे लोग भी आपके साथ शांति खोजने को आए हुए हैं। मैं किसी को प्रेम करता हूं, तो मैं उसमें शांति खोजना चाहता हूं, कोई मुझे प्रेम करने इसीलिए आया हुआ है कि मुझमें शांति खोज सके, भिखमंगे जैसे भिखमंगे के सामने खड़े होकर अपनी झोलियां फैला रहे हों। और तब अगर दुनिया बिल्कुल पागल हो जाए, और एक पागलखाना मालूम होने लगे तो इसमें आश्चर्य क्या है? जो व्यक्ति अपने साथ रहने में समर्थ नहीं है, उसने योग्यता खो दी किसी के भी साथ रहने के योग्य वह आदमी नहीं है। मैं फिर से दोहराता हूं, जो व्यक्ति अपने साथ रहने के योग्य नहीं है, उसने योग्यता खो दी, वह अब किसी के साथ रहने के योग्य नहीं है। जो अपना मित्र नहीं हो सकता, वह किसी का मित्र समर्थ नहीं है कि हो जाए। और जो अपने को प्रेम नहीं कर सकता, निपट अकेलेपन में वह किसी को भी प्रेम कैसे कर सकेगा?

लेकिन हम सारे लोग मित्र हैं, और सारे लोग एक-दूसरे को प्रेम कर रहे हैं। यह सब झूठे शब्द हैं, और हम प्रेम में नाम तो प्रेम का लेते हैं, और दूसरे की गर्दन पर हमारे हाथ कस जाते हैं। नाम तो हम प्रेम का लेते हैं। जरा आप खयाल करना, जिसको आप प्रेम करते हैं, उसकी गर्दन तो नहीं पकड़े हुए हैं? और जो आपको प्रेम करता है, अपनी गर्दन पर खयाल करना, वो आपकी गर्दन पकड़े हुए है। आप प्रेम कर ही नहीं सकते। जिनको आप कह रहे हैं कि हम मित्र हैं, बहुत विचार करना, आप ही उनके शत्रु होओगे। क्योंकि आप अपने ही साथ रहने में समर्थ नहीं हो। जो व्यक्ति अपनी निपट निजता में डरा हुआ है, घबराया हुआ है, भागता है, दूसरे में अपने को भुलाता है, वह व्यक्ति दुनिया में जहां भी होगा, वहीं उपद्रव होगा, वहीं गड़बड़ होगी, वहीं हिंसा होगी, वहीं घृणा होगी, वहीं क्रोध होगा; नाम प्रेम का होगा, भीतर घृणा होगी, क्रोध होगा, हिंसा होगी। नाम मित्रता का होगा, भीतर शत्रुता होगी। और कब एक-दूसरे की छाती में हम छुरा भोंक देंगे पता नहीं चलेगा।
यही वजह है, यही कारण है कि दुनिया रोज से रोज बदतर से बदतर होती जाती है। जिन राजनीतिज्ञों के हाथ में दुनिया की सत्ता है, राजनीति उनके लिए नशा है, इनटॉक्सीकेंट है, वो घबड़ाए हुए हैं अपने से पद में और चुनाव में अपने को भुला लेते हैं। लेकिन ऐसे मूर्च्छित और पागलों के हाथ में दुनिया की सत्ता होगी, तो स्वाभाविक है कि युद्ध हो, हिंसा हो, विनाश हो और रोज, दुनिया में हत्या का नया से नया आयोजन होता रहे। यह बिल्कुल स्वाभाविक है। ये मूर्च्छित और भागे हुए लोग हैं। आप शराबियों के हाथ में दुनिया की हुकूमत देना नहीं पसंद करोगे, लेकिन राजनीति एक बड़ा नशा है और शराब है। और उन शराबियों के हाथ में दुनिया भर की ताकत है। स्वाभाविक है कि दुनिया में उपद्रव हों। पचास साल नहीं बीत पाए कि दो महायुद्ध हो गए, तीसरे महायुद्ध की तैयारी है। स्वाभाविक है, पागलों के हाथ में सत्ता है। जो अकेले होने से डरे हुए हैं, और जो पद को पाना चाहते हैं उनके हाथ में ताकत है, और खतरनाक ताकत है। और ताकत रोज बढ़ती जाती है और पागलपन रोज बढ़ता जाता है, हम एक ज्वालामुखी पर बैठे हैं, जो कभी भी फूट सकता है। और इस सबके बुनियाद में, इस सबके बुनियाद में क्या है? इस सबके बुनियाद में एक छोटी सी बात है, जो खो गई है, अपने साथ होना, खो गया है।
पुरानी संस्कृतियां अपने साथ होने की किसी बुनियादी बात पर जोर देती थीं, वह विलीन हो गई। उसका हमें कोई विचार नहीं है। उसका हमें कोई खयाल नहीं है। आज तो मैं यही कहना चाहता हूं कि यह खयाल आपको पैदा हो कि क्या आप अकेला होना चाहते हैं, क्या अकेले होने की आकांक्षा आपके मन में कहीं है? क्या आप अपने को जानना चाहते हैं? क्या आप उस सत्य से परिचित होने के प्यासे हैं, जो आपके भीतर मौजूद है? हमेशा से मौजूद है। हमेशा मौजूद रहेगा, आप कितने ही भागें और कितने ही दौड़ें; उससे आप बच नहीं सकते। और वही अकेला सत्य है, जो वास्तविक है, और जिसपर कोई आधार रखे जा सकते हैं। और उससे ही हम भाग रहे हैं, जो हमारा है, उससे ही हम भाग रहे हैं और जो हमारा नहीं है, उसे हम पाना चाहते हैं।
जो हमारा है उससे हम बचना चाह रहे हैं, और जो हमारा नहीं है, उसे पाने
की आकांक्षा में हम पागल हो गए हैं। यह पागल वृत्ति हमारे सबके मनों को पकड़े हुए है, धर्म को विचार को, दर्शन को, तत्वचिंतन को मैं इसी अर्थ में देखता और लेता हूं कि वह मनुष्य के भीतर अकेले होने की क्षमता पैदा कर दे। क्योंकि जो अकेला होता है, वही स्वतंत्र होता है। जो अकेला हो सकता है अपने भीतर इतना साहस इकट्ठा कर सकता है, अकेले होने का, जो अपने साथ हो सकता है, वह व्यक्ति हो जाता है। हम व्यक्ति नहीं है, वह इंडिविजुअल हो जाता है। हम इंडिविजुअल नहीं है, हम तो भीड़ के एक हिस्से हैं, हम तो भीड़ के एक बड़े हिस्से हैं। भीड़ हमसे कुछ भी करा ले सकती है, हमार अपना कोई निजी व्यक्तित्व थोड़े ही है।
हीथल ने एक सूत्र लिखा है, उसने लिखा है कि अगर यह बात पूरी हो जाए, तो
सब पूरा हो जाए। उसने एक सूत्र लिखा हैः बी इंडिविजुअल। छोटी सी बात है। व्यक्ति हो जाओ। हमें लगेगा यह क्या खास बात हुई, हम सभी व्यक्ति हैं। आप कोई भी व्यक्ति नहीं हैं, व्यक्ति होना इस जगत में सबसे कठिन बात है। थोड़े

से लोग व्यक्ति हो पाते हैं, बाकी लोग भीड़ के हिस्से होते हैं। भीड़ का हिस्सा, भीड़ जैसा चाहे आपसे करा ले। अगर हिंदुओं की भीड़ बिगड़ जाए, मुसलमानों पर, अगर आप हिंदू हैं तो उसी भीड़ में सम्मिलित हो जाएंगे। अगर मुसलमानों की भीड़ बिगड़ जाए हिंदुओं पर, अगर आप मुसलमान हैं तो उसी भीड़ में सम्मिलित हो जाएंगे, आप कोई व्यक्ति हैं? आपसे कोई भी मूर्खता कराई जा सकती है। बस भीड़ अगर करने को राजी हो जाए, तो आप भी राजी हो जाएंगे। अभी हिंदुस्तान-पाकिस्तान का बंटवारा हुआ, तो हिंदुओं ने मुसलमानों के साथ, मुसलमानों ने हिंदुओं के साथ जो किया वह कोई व्यक्ति कर सकते हैं? अगर उन भीड़ के लोगों को अलग पकड़ लिया जाए, और उनसे पूछा जाए अकेले में तुमने जो किया क्या तुम अकेले करने को राजी हो सकते हो? तो वो राजी नहीं होंगे। वो कहेंगे, वो तो सब लोग कर रहे थे, इसलिए हमने भी किया। तो सारे लोग कर रहे थे, इसलिए हमने भी किया। आप खुद ही खयाल करो, बुराई, बड़ी से बड़ी बुराईयां दुनिया में भीड़ ने की हैं, अकेले व्यक्तियों ने नहीं की हैं। दुनिया में जितने बड़े उपद्रव, जितनी हिंसा, जितने युद्ध, जितनी अमानवीयता होती है, वह भीड़ से, क्राउड से होती है, इंडिविजुअल से, व्यक्ति से नहीं होती। और स्मरण रखो आप यह भी कि दुनिया में जो भी ऊंचाइयां हैं, जो भी श्रेष्टताएं हैं, जो सौंदर्य की या सत्य की या प्रेम की अनुभूतियां हैं, वह भीड़ की नहीं, व्यक्तियों की हैं, निपट अकेले व्यक्तियों की। दुनिया में जो भी श्रेष्ठ जन्म पाता है, वह व्यक्तियों से पाता है, और जो भी निकृष्ट जन्म पाता है, वह भीड़ से पाता है। अब तक दुनिया में महावीर की, या बुद्ध की, या क्राइस्ट की, या कृष्ण की अनुभूतियां कोई भीड़ की अनुभूतियां नहीं हैं कि किसी क्राउड ने की हों, किसी समूह ने और समाज ने की हों, निपट अकेले व्यक्तियों की अनुभूतियां हैं। कोई बड़ा काव्य हो, कोई बड़ा गीत हो, कोई बड़ा संगीत हो, कोई बड़ा सत्य हो सब व्यक्तियों से पैदा होते हैं, भीड़ से कुछ पैदा नहीं होता। भीड़ एकदम सुंदर को, शिव को, सत्य को पैदा करने में असमर्थ है। लेकिन जो भी असत्य, जो भी हिंसा, जो भी युद्ध, जो भी बुराई पेदा होती है, वह भीड़ से पैदा होती है। और हम सब भीड़ के हिस्से हैं क्योंकि हम व्यक्ति नहीं हैं, हम अपने साथ होने से डरे हैं, इसलिए हम दूसरों के साथ खड़े हो जाते हैं। सारे लोग डरे हुए हैं, इसलिए सारे लोग खड़े हो जाते हैं। दुनिया पागलखाना बनती जाती है, क्योंकि दुनिया भीड़ से संचालित हो रही है, व्यक्तियों से नहीं। और हम व्यक्ति नहीं हैं। हम में से कोई भी व्यक्ति नहीं है। हम तभी व्यक्ति होंगे, जब हम अकेले में, अपने साथ होने की क्षमता को उत्पन्न करें।
इसलिए आज मैं आपसे यह कहूं कि व्यक्ति होने की अभीप्सा, निपट निज की सत्ता को अनुभव करने का खयाल पैदा होना चहिए, अन्यथा फिर आप अपने को मनुष्य कहने के हकदार नहीं हैं। कोई मनुष्य अपने को मनुष्य कहने का हकदार तब तक नहीं होता, जब तक वह इंडिविजुअल न बन जाए, व्यक्ति न बन जाए, सारी भीड़, समाज, संप्रदाय, समूह और धर्मों के नाम से खड़े हुए दुनिया भर के आर्गनाइजेशंस इनका कोई संबंध सत्य से नहीं है। जहां भीड़ है, वहां सत्य से कोई संबंध नहीं है, जहां आप अकेले हैं, निपट अकेले हैं, वहां आपका सत्य से संबंध हो सकता है, इसलिए धर्म के जो संगठन हैं, उनको मैं धर्म नहीं कहता, धर्म के सब संगठन राजनीति के संगठन हो जाते हैं, संगठन होने से राजनीति के हो जाते हैं। धर्म तो निपट व्यक्ति की बात है। प्रेमियों का कोई संगठन है दुनिया में? और अगर प्रेमियों का संगठन हो, तो क्या होगा? प्रेम मुश्किल हो जाएगा। लेकिन धर्म के संगठन हैं, प्रार्थना के संगठन हैं, अगर प्रेम का संगठन नहीं हो सकता, तो प्रार्थना के संगठन कैसे हो सकते हैं? प्रार्थना तो निजी बात है, स्वयं के और सत्य के बीच, कोई बीच में उसके आने का कोई सवाल नहीं है। लेकिन ये संगठन खड़े हैं, हिंदू हैं, मुसलमान हैं, जैन हैं, ईसाई हैं ये संगठन खड़े हैं, और ये संगठन खतरनाक सिद्ध हुए हैं, इन्होंने धर्म को नष्ट कर दिया है, जमीन से। ये हैं कारण धर्म को नष्ट करने के। कोई नास्तिक नहीं है कारण, कोई वैज्ञानिक नहीं है कारण, कोई भौतिक समृद्धि कारण नहीं है धर्म के विनाश की। धर्म के विनाश का कारण है, धर्मों के नाम से संगठन। क्योंकि धर्म का संबंध तो व्यक्ति से है, संगठन से नहीं है। और जहां संगठन शुरू हुआ, वहां राजनीति प्रविष्ट हो जाती है, वहां धीरे-धीरे राजनीतिक पकड़

और राजनीतिक समझ बैठ जाती है। और तब फिर वह भी दौड़ उन्हीं लोगों की हो जाती है, जो अकेले से बचना चाहते हैं। फिर भीड़ खोजने लगते हैं, तो मैं आपको कहूं, व्यक्ति बनें, तो ही आप सत्य को जान सकेंगे और व्यक्ति बनने की पहली आधारशिला यहीं से शुरू होती है कि हम यह जानें कि असंलिप्त रूप से जो सत्य मेरे निकटतम है, वह मैं हूं। कोई दूसरा मेरे लिए उतना सत्य नहीं है, जितना मैं हूं। कोई दूसरा किसी के लिए सत्य नहीं है, उसकी स्वयं की सत्ता है, और वहां प्रवेश करना है, और वहां पहुंचना है। और इसके लिए जरूरी है कि ये जो भीड़ के संगठन हैं, ये जो भीड़ के चारों तरफ आयोजन हैं, उनसे थोड़ा अपने को बचाएं, और स्वयं में प्रवेश करें। थोड़ा एकांत खोजें, अकेलापन खोजें, थोड़ी देर अपने साथ रहें, वह मैं आपसे चर्चा करूंगा। कैसे अपने साथ रह सकते हैं? मेरी बातों को इतनी शांति से आपने सुना है, इतने प्रेम से सुना है, उससे मैं आनंदित होता हूं। साथ ही मुझे खयाल तो होता है कि अगर केवल सुना, तो बात व्यर्थ हो जाएगी, उसका कोई मूल्य न रह जाएगा। यह भी मैं सोचता हूं कि अगर मेरी बात मान ली, तो भी व्यर्थ हो जाएगी, क्योंकि वह दूसरे की बात हो गई। तो मुझे बड़ी दिक्कत होती है कि आपसे मैं क्या कहूं? तो यह मैं नहीं कहता कि मेरी बात मानें या मेरी बात न मानें, मैं तो अपनी बात आपसे कह रहा हूं, अगर आपके भीतर मेरी बात से कोई खुद का खयाल पैदा हो जाए, मेरी बात आपको नहीं पकड़ लेनी है, मेरी कोई आकांक्षा नहीं है, थोड़ी भी कि मेरी बात आप पकड़ लें, कि मेरे अनुयायी हो जाएं, भगवान करे कोई किसी का अनुयायी न हो, क्योंकि अनुयायी होना सबसे खतरनाक बात है, इसका मतलब है आप दूसरे के पीछे चल पड़े। और दूसरे के पीछे चलने का मतलब हैः आपने अपनी निज सत्ता को छोड़ दिया, आपने कोई सपना पकड़ लिया।
तो यह मैं नहीं चाहता कि मेरी बात आप मान लें, बिल्कुल न मानें। चाहता
यह हूं कि मेरा विचार आपके खयाल में अगर कोई प्यास जगा दे और आपको लगे कि यह बात हो सकती है कि मैं अपने को डुबा रहा हूं दूसरे लोगों में--काम में, धंधे में, पद में, मैं अपने को भूलने की कोशिश में लगा हूं--प्रेम में, पत्नी में, बच्चों में--अपने को भुलाने की कोशिश में लगा हूं, और यह सारी चेष्टा आखिर में कहां ले जाएगी? अगर मैं पूरी जिंदगी भी अगर मैं सफल हो गया अपने को भुलाने में, तो क्या होगा फिर? क्या मौत के वक्त मुझे नहीं लगेगा कि मैं अपने से जानने से वंचित रह गया हूं, मैं अपने को बिना जाने मौत के द्वार पर आ गया हूं। उस वक्त तो यह सवाल सामने खड़ा हो जाएगा, इस सवाल को आज ही खड़ा कर लें, इस सवाल को आज ही खड़ा कर लें कि मैं जब अकेला हो ही जाऊंगा, और मौत मुझे सारी दुनिया से अलग कर देगी, मित्रों से, प्रियजनों से, संबंधों से, संसार से, धन से, पद से, सबसे अलग कर देगी और मैं निपट अकेले रास्ते पर बढ़ूंगा, तो पता नहीं इस अंधकार में, उस अकेले में क्या होगा? उस एकाकीपन में, उस लोनलीनेस में क्या होगा? वह होना है, आज मुझे होगा, कल आपको होगा, परसो किसी और को होगा, रोज होगा और एक दिन हम बिल्कुल अकेले हो जाएंगे। तो उसे अकेले होने की तैयारी आज शुरू हो जानी चाहिए। और जो आज तैयार हो जाएगा, उस दिन मौत को कंधे लगाने में स्वागत करने में, गले भेंट लेने के लिए तैयार हो जाएगा। जो आदमी जिंदगी में मृत्यु को गले लगाने में समर्थ नहीं हो पाता, उसने जिंदगी व्यर्थ खो दी, और जो आदमी जीवन में इतना समर्थ हो जाता है कि मृत्यु को गले लगा ले और प्रेम कर ले, वह सफल हो गया। मृत्यु बताती है कि जीवन सफल गया या असफल गया। और मृत्यु बताती है कि आप ठीक से जिए कि गलत जिए, मृत्यु बताती है कि आप ठीक दिशा में चले या गलत दिशा में चले, अगर आप ठीक दिशा में चले, तो आप पाएंगे कि मृत्यु एक आनंद की घड़ी है, क्योंकि उस दिन आप समग्र रूप से अकेले हो सकेंगे, स्वयं हो सकेंगे। और अगर आप गलत दिशा में चलते रहे, तो पता चलेगा कि मृत्यु सबसे बड़ी घबड़ाहट, चिंता और बेचैनी है, क्योंकि जीवन में हम हमेशा साथ थे, अकेले होना कभी जाना नहीं और अब मृत्यु अकेला किए देती है। मृत्यु अगर आपको जबरदस्ती अकेला करेगी तो वह मृत्यु ही रह जाएगी और अगर आप स्वयं अकेले होकर मृत्यु का स्वागत करने गए, तो मृत्यु भी मोक्ष हो जाती है।
आज तो इतना ही कहूंगा। धन्यवाद।

मेरी बातों को इतने प्रेम से सुना है, कल सुबह इस संबंध में कुछ भी पूछने को हो उसकी चर्चा करूंगा। और तीन दिन इसी संबंध में कुछ विचार रखूंगा कि कैसे हम अकेले हो सकते हैं और स्वयं को जान सकते हैं। पुनः आपको धन्यवाद देता हूं।

स्वयं की सत्ता
दूसरा प्रवचन

स्वयं की सत्ता ही सत्य है

स्वयं की सत्ता ही सत्य है, वही असंदिग्ध आधारभूमि है जो अनुभव हो सके। उस संबंध में थोड़ी सी बातें आपसे कहूं।
केंद्रीय रूप से यह आपसे मैंने कहना चाहा, हमें पूरा जीवन जो दिखाई पड़ रहा है, उसके पीछे भागते हैं और उसका विस्मरण हो जाता है, जो हमारे भीतर है और सारे दिखाई पड़ने वाले जगत को देख रहा है और अनुभव कर रहा है। जिसकी सत्ता है, वह विस्मरण हो जाता है, और सत्ता पर जो दृश्य घूमते हैं, केवल वे ही हमारे मन में बैठ जाते हैं। जैसे कोई नाटक देखने गया हो, और भूल जाए स्वयं को और नाटक में चलती हुई कथा के साथ एक हो जाए। और नाटक के बाद उसे स्मरण आए कि मैं भी था। वैसे ही मृत्यु के समय प्रत्येक को स्मरण आता है कि मैं भी था। और जो आंख के सामने दृश्य चलते थे, वो जो जीवन का प्रवाह था, उसमें अपने को भूल गया था, लेकिन तब कुछ भी किया नहीं जा सकता। जो भी किया जा सकता है, वह अभी किया जा सकता है। और यदि हम स्वयं का स्मरण न कर पाएं, तो जीवन दुख की और पीड़ा की एक लंबी कथा हो जाती है। फिर हम चाहे कुछ भी खोजें और कुछ भी पा लें, फिर चाहे हमारी कोई भी उपलब्धि हो, धन की, संपदा की, स्वास्थ्य की, पद की, यश की; उस सारी उपलब्धि के पीछे दुख और पीड़ा मौजूद ही रहेंगी।
एक छोटी से कहानी स्मरण आती है, उससे अपनी आज की चर्चा को मैं प्रारंभ करना चाहूंगा।
एक राजा हुआ, बिल्कुल ही काल्पनिक कहानी है, उसने सारे देश जीत लिए, पृथ्वी पर जो भी था, सबका मालिक हो गया। और सब जीत कर भी उसने पाया कि मैं तो खाली का खाली हूं, जिस दिन विजय की यह यात्रा शुरु की थी, उस दिन जितना दरिद्र था, उतना ही दरिद्र आज भी हूं। पास में ही उसके भवन के, झोपड़े में एक फकीर रहता था। उसने उस फकीर को बुलवाया और पूछा कि तुम तो दरिद्र हो और तुम्हारे पास कुछ भी नहीं, फिर भी सुबह सांझ तुम्हें गीत गाते देखता हूं; और सब है मेरे पास, और जो भी उपलब्ध किया जा सकता था, सब मैंने पा लिया लेकिन मेरे जीवन में तो दुख और उदासी के सिवाय कुछ भी नहीं है। तुम्हारे इस गीत का रहस्य क्या है? फकीर इसके पहले कि कुछ बोलता, उसके शिष्य भी उसके साथ आए थे और उन्होंने कहा, हमारे गुरु ने अमरता उपलब्ध कर ली है। और जो अमरता को उपलब्ध कर लेता है, वह फिर दुख के बाहर हो जाता है।
राजा नीचे उतरा और उस फकीर के चरणों को पक ड़ लिया, और उसने कहाः किसी भांति मुझे भी अमरता मिल जाए, मैं भी अमरत्व को उपलब्ध हो जाऊं। फकीर बोलाः बहुत ही सरल बात है, व्यर्थ ही तुमने दौड़-धूप की, इतने राज्य जीते, यहीं पास ही में पहाड़ी के पास एक झरना है और उस झरने का पानी जो भी पी लेता है, वह अमर हो जाता है। तो तुम जाओ और उस झरने का पानी पी लो। अकेले जाना, और कोई कितना ही रोके रुकना मत, क्योंकि जो रुक जाता है, फिर पी नहीं पाता। अकेले जाना किसी को साथ मत ले जाना और वहां अगर कोई रोके तो रुकना मत, तुम पी ही लेना। राजा और क्या चाहता था, आपको भी कोई बताने वाला मिल जाए, तो और क्या चाहेंगे? और फिर पास ही झरना था, पहाड़ी करीब थी। उस राजा ने कहा कोई कितना ही रोके, मैं क्यों रुकूंगा।
राजा गया पहाड़ी के इस पार ही उसने अपने साथी छोड़ दिए, वह अकेला ही पैदल उतरा और पहाड़ी के झरने के पास पहुंचा, जैसे ही वह झरने में हाथ डालने को था, कि पीछे से अनेक लोग चिल्लाए कि रुक जाओ, अन्यथा मुश्किल में पड़ जाओगे। एक क्षण ऐसा लगा कि इसमें रुकने की क्या बात है? लेकिन पीछे से आवाजें आईं कि इतनी जल्दी भी क्या है, एक क्षण हमारी बात सुन लो, फिर पी लेना। और उसने देखा कि पीछे तो बहुत से वृद्ध और बहुत कुरूप वहां तो जंगल उनसे ही भरा है, उसने पूछा यह बात क्या है? उन्होंने कहा हम सब इसी झरने का पानी पीकर भूल में पड़ गए, अब मरना मुश्किल हो गया है। अब हम मरना चाहते हैं, और मरने का रास्ता नहीं है। और हमें हजारों वर्ष हो गए हैं, हम बूढ़े हो गए हैं, हाथ-पैर कमजोर हो गए हैं, आंखों में दिखाई नहीं पड़ता, लेकिन मर नहीं सकते, पहाड़ पर

से गिर पड़ते हैं, हाथ-पैर टूट जाते हैं, लेकिन मौत नहीं आती। जहर खा लेते हैं, सुस्त हो जाते हैं, लेकिन मौत नहीं आती। कोई उपाय करें हम मर नहीं पाते, रुक जाओ, थोड़ा समझो हमारी बड़ी दुर्गति हो गई है। फिर तुम्हें पीना हो तो तुम पी लो। एक क्षण खड़े होकर उसने सोचा कि यह तो सच में विचारणीय था। अमर होकर फिर क्या करेंगे? और उन बूढ़ों ने कहा हम बहुत मुश्किल में पड़ गए, पहले सोचा था अमर हो जाएंगे, अब रोज-रोज वही दोहर रहा है, वही दोहर रहा है, वही दोहर रहा है; हम घबरा गए हैं और मरना चाहते हैं। परमात्मा की बड़ी कृपा है कि लोग मर जाते हैं, और हम अपने हाथ से अभागे हो गए हैं।
राजा वापस लौट आया। आप में से भी कोई होता, मैं समझता हूं वापस ही लौट आता। फकीर ने पूछा कैसे वापस लौट आए? उसने कहा यह तो बड़ा कठिन है। बूढ़े हो जाएंगे, दुर्बल हो जाएंगे, इंद्रियां शिथिल हो जाएंगी, और मरेंगे नहीं, फिर तो बड़ी कठिनाई होगी। तो उस फकीर ने कहा इसमें भी क्या बात है? तुम्हारे भवन के दूसरी तरफ जो पहाड़ी है, वहां ऐसे फल हैं, कि उन्हें कोई खा ले तो फिर कभी कोई बूढ़ा नहीं होता। तुम उन फलों को खा लो और सदा के लिए चिर-युवा हो जाओ। और फिर जाकर वह पानी पी लेना तो कभी नहीं मरोगे। उसने कहाः यह बात तो समझ में आती है। लेकिन उसने कहाः अकेले वहां जाना और कोई कितना ही रोके, रुकना मत। वह वहां भी गया और वही हुआ। जैसे ही वह फल तोड़ने को था, चारों तरफ से आवाजें आई कि ठहर जाओ, फिर बहुत पछताओगे। बहुत लोग थे जो जवान थे। लेकिन जवानी से ऊ ब गए थे, कितनी देर जवान रहा जा सकता है? कितने वर्ष? कितनी देर तक जवानी और जवानी के सुख अर्थ रख सकते हैं? उन्होंने कहाः हम बहुत मुश्किल में पड़ गए हैं, बुढ़ापा आता नहीं। ऊब गए हैं, वही-वही दोहरता है, वही-वही दोहरता है, सैकड़ों वर्ष हो गए हैं, वही-वही दोहराते, अब सब सुख दुख हो गए हैं। एक ही सुख बार-बार पुनुरुक्त हो तो व्यर्थ हो जाता है। सुख में तो रस है, जब वह नया हो, नवीन हो। और जब बार-बार वही पुनुरुक्त हो तो व्यर्थ हो जाता है। इसीलिए सब सुखों से आदमी ऊ ब जाता है, कोई सुख मनुष्य को सदा सुखी नहीं कर सकता। सुख तो ऊबा देगा, क्योंकि वह दोहरेगा, दोहरेगा और जितना दोहरता जाएगा, उतना ही व्यर्थ होता जाएगा।
जिसको आपने पहले दिन प्रेम किया हो, दूसरे दिन उतना प्रेम आप नहीं कर पाते। तीसरे दिन और भी कम, चौथे दिन बात हवा हो जाती है। जिस भवन में आप गए हों, नये-नये, बड़ी खुशी से गए होंगे, थोड़े दिन बाद भवन पुराना पड़ जाता है, और मन नये भवनों में जाने के लिए उत्सुक हो जाता है। जिस धन को आपने पाया हो, पाकर प्रसन्न हुए हों, थोड़े दिन बाद व्यर्थ हो जाता है, क्योंकि वही धन काफी नहीं है। मनुष्य का मन नये से नया चाहता है।
उन युवकों ने कहाः चिर-युवकों ने कि हम बहुत मुश्किल में पड़ गए हैं, सब दोहर रहा है और हम घबरा गए हैं। परमात्मा किसी भांति हमें बूढ़ा कर दे। राजा वापस लौट आया, उसने फकीर से कहा कि बड़ा कठिन है।
यह कहानी बड़ी अर्थपूर्ण है। यह मैंने आपसे क्यों कही? यह मैंने क्यों कहना चाही आपसे? यह मैंने इसलिए कहना चाही कि कुछ चीजें छोटे में ठीक से दिखाई नहीं पड़ती हैं, जब उन्हें बड़ा करके देखें तब ही दिखाई पड़ती हैं। मैग्निफाइन ग्लास न हो कोई खुर्दबीन न हो तो बहुत सी चीजें दिखाई ही नहीं पड़तीं। हमारी जिंदगी इतनी थोड़ी है, जवानी इतने थोड़े दिन टिकती है, जीवन इतना छोटा है कि हमें उसकी व्यर्थता दिखाई नहीं पड़ती। उसे थोड़ा मैग्निफाई करें। जिस जिंदगी को आप जी रहे हैं सुबह से सांझ तक, अगर ऐसी ही जिंदगी एक हजार वर्ष आपको जीनी पड़े, एक लाख वर्ष आपको जीनी पड़े, एक करोड़ वर्ष जीनी पड़े तो क्या होगा? क्या आप घबड़ा न जाएंगे, ऊ ब न जायेंगे, संताप से न भर जायेंगे? इसको थोड़ा बड़ा करें, कुछ चीजें थोड़ी बड़ी करने से ही समझ में आती हैं। बहुत छोटी होती हैं तो आंख से बच जाती हैं।
हमारी आंख बहुत गहरा नहीं देखती। थोड़ी अपनी जिदंगी को लंबा करें, और लंबा करके आपको दिखाई पड़ेगा कि जो भी आप कर रहे हैं, वह सभी ऊ बा देगा, घबड़ा देगा, परेशान कर देगा। लेकिन अगर कोई चीज हजार वर्ष में ऊबा देगी तो क्या सौ वर्षों में अर्थपूर्ण हो सकती है? और जो चीज सौ वर्ष में ऊ बा देगी तो क्या एक दिन में अर्थपूर्ण हो सकती है? जो हजार वर्ष में ऊबाने वाली हो जाएगी, वह सौ वर्ष में भी ऊ बाने वाली है, वह एक दिन में भी ऊ बाने वाली है।

वह एक क्षण में भी ऊ बाने वाली है, यह दूसरी बात है कि हमें दिखाई न पड़ती हो। आंख हमारी ठीक से उस अणु को न देख पाती हो। इसलिए मैंने यह कहानी कही। उस राजा को घबड़ाहट हो गई, अमरता लेने को राजी न हुआ। चिरयुवा होने को राजी न हुआ। क्यों? क्योंकि जिसे हम जिदंगी जानते हैं, अगर वही जिंदगी है और हमेशा के लिए हमें दे दी जाए तो इससे बड़ा कोई कष्ट, इससे बड़ा कोई नरक संभव नहीं है। निश्चित ही वह जिंदगी नहीं है, अगर कोई आए और आपको कहे कि जो आपकी जिदंगी है, जो भी आपकी जिंदगी है, हम सदा के लिए, अनंतकाल को आपको दिए देते हैं, क्या आपके प्राण थरथरा नहीं जाएंगे, घबड़ा नहीं जाएंगे? और अगर अनंतकाल तक इसी को भोगने से प्राण घबड़ा जाएंगे, तो जो विचारशील है, वह आज ही घबड़ा जाएगा। जिसके पास आंख है, वह आज ही सजग हो जाएगा। क्योंकि जो बड़ा होकर व्यर्थ है वह छोटा होकर भी व्यर्थ है। और अगर व्यर्थता नहीं दिखाई पड़ती तो हमारी आंख की कमी है, हमारे पास आंख का न होना है।
यह जीवन व्यर्थ है, जिसे हम जीवन जानते हैं। यह जीवन इतना व्यर्थ है, इतना पीढ़ा और इतने दुख से भरा है इसीलिए कि हम उस जीवन को नहीं जानते, जो कि वास्तविक जीवन है। हम करीब-करीब छायाओं में जीवन को बिता देते हैं। कल मैंने आपसे कहा, अपने बाहर के जगत में जो जीवन को व्यतीत कर देता है, वह वास्तविक जीवन से वंचित रह जाता है। वास्तविक जीवन की दिशा कहीं भीतर है। कहीं प्राणों की उस आत्यंतिक अवस्था में केंद्र पर। हम सबके भीतर कोई केंद्र है या नहीं, हम सबके भीतर कोई सेंटर है या नहीं। या कि हम केवल परिधि हैं? कोई परिधि ऐसी नहीं होती, जिसका कोई केंद्र न हो, कोई बीच का बिंदु न हो। लेकिन जिसे हम जीवन जानते हैं, वह परिधि का जीवन है, प्राण का, कमाई का, भाग-दौड़ का, यश का, प्रतिष्ठा का, धन का, पदों का; यह सारा परिधि का जीवन है, लेकिन केंद्र कहां है? केंद्र हमारी सत्ता है, और परिधि रोज बदल जाती है, आज नहीं कल विलीन हो जाएगी, एक क्षण टूट जाएगी, लेकिन केंद्र जो निरंतर हमारे भीतर है, हमारे साथ है। वह मैंने कल आपसे कहा। प्रत्येक व्यक्ति निरंतर किसी एक सत्ता के साथ है, उस सत्ता को जानना, उस सत्ता से परिचित होना, उस सत्ता के भीतर प्रवेश किए बिना, कोई व्यक्ति वास्तविक जीवन को उपलब्ध नहीं होता। उसके अभाव में हम करीब-करीब मुर्दे हैं। उसके अभाव में हम करीब-करीब मरे हुए लोग हैं। हम नाममात्र को जीवित हैं। यह जीवन कोई जीवन नहीं है, यह कोई जीवन की स्थिति नहीं है। मैं हूं, पहले तो इस बोध को लेना जरूरी है, इस पर मैंने कल आपसे बात की। मैं कौन हूं, इसमें प्रवेश करना जरूरी है, इस पर मैं आपसे आज बात करूंगा।
मैं हूं यह एकमात्र ऐसा अनुभव है, जो असंदिग्ध है, जिस पर संदेह नहीं किया जा सकता। आप संदेह भी करेंगे, तो संदेह भी आपको ही सिद्ध कर देगा। अगर मैं कहूं कि मैं नहीं हूं, तो मेरा यह कहना कि मैं नहीं हूं प्रामाणित करेगा कि मैं हूं। क्योंकि यह अस्वीकार करने के लिए और संदेह करने के लिए भी मेरे होने की जरूरत है। मेरे बिना यह अस्वीकार भी नहीं हो सकता। एक मुर्दा आदमी उठ कर कहे कि मैं मर गया हूं, तो उसका यह कहने का अर्थ होगा कि वह जिंदा है। ठीक वैसे ही मैं कहूं कि मैं नहीं हूं, यह सूचना होगी मेरे होने की। इसलिए आत्मा भर को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। आत्मा भर पर संदेह नहीं किया जा सकता है। दूसरे की आत्मा पर किया जा सकता है, दूसरे की आत्मा आपके लिए है ही नहीं। सवाल है, मेरी निज सत्ता का, उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि अस्वीकार में भी वह प्रतिपादित हो जाती है, अस्वीकार में भी वह पूर्व से भी उपस्थित हो जाती है। यह जो असंदिग्ध मैं हूं, यह क्या है? यह कौन है? अगर हम अपने से पूछें, मैं कौन हूं? तो जरूर कुछ उत्तर आएंगे। कुछ उत्तर आएंगे, जो हमें सिखाए गए हैं। कुछ उत्तर आयेंगे जो हमें बताए गए हैं, ये सब उत्तर झूठे हैं, ये सब उत्तर असत्य हैं। ऐसा उत्तर आना चाहिए जो न बताया गया है, और न सिखाया गया है। वही उत्तर वास्तविक होगा। क्या जब मैं आपसे पूछता हूं, या आप अपने से पूछें किसी एकांत क्षण में कि मैं कौन हूं, तो क्या उत्तर आता है? सहज ही पहले तो ही नाम आ जाएगा, जो मां-बाप ने दिया है। नाम भी कितना धोखा दे सकते हैं, नाम कितनी औपचारिक बातें हैं, कोई राम है, कोई कृष्ण है, कोई कुछ है; ये नाम ऊपर से लगा दिए गए हैं, समाज के लेबिल्स हैं, इनके बिना समाज को असुविधा होगी, यह आपका स्वरूप

नहीं है। पशुओं का कोई भी नाम नहीं है, पक्षियों के कोई भी नाम नहीं हैं, फिर भी वे हैं, फिर भी उनका होना है। अगर आपके नाम छीन लिए जाएं, फिर भी आप होंगे, आपकी सत्ता नहीं मिट जाएगी। रात्रि जब आप गहरी नींद में सो जाते हैं, तो आपका नाम भी खो जाता है, क्या बहुत गहरी नींद में आप जानते हैं, आपका नाम क्या है? आप कुछ भी नहीं जानते। आप किसके पुत्र हैं, और किसके पिता हैं, और किसके पति हैं या किसकी पत्नी हैं; कुछ भी नहीं जानते। दरिद्र हैं या भिखारी कुछ भी नहीं जानते।
जापान में एक राजा था, वह एक गांव से रोज निकलता था। एक फकीर वहां रहता था, उस फकीर से उसने एक दिन पूछा, सुबह-सुबह निकला, सर्द रात थी; उस फकीर से पूछा कि रात बहुत सर्द है, नींद में बड़ी तकलीफ हुई होगी? उसने कहाः सब तकलीफ जागने में है, नींद में तो कुछ पता नहीं चलता। राजा ने पूछा, नींद तो ठीक ही हुई होगी? उस फकीर ने कहा, जागते में तुम राजा हो, मैं फकीर हूं; नींद में तो हम एक ही जगह हैं। नींद में तो हम दोनों एक ही जगह हैं, तुम राजा नहीं हो, मैं भिखमंगा नहीं हूं गांव का। इसलिए जागना हमारी बनावट हो सकती है, नींद तो परमात्मा की है। उस फकीर ने कहा जागना तो हमारी बनावट हो सकती है। नाम तो हमारी बनावटें हैं, आपको जो नाम दिया है, दूसरा दिया जा सकता है, कोई अड़चन न होगी, तीसरा दिया जा सकता है, कोई अड़चन न होगी, आप सब नाम छोड़ दें तो भी आप होंगे, क्या बहुत कठिनाई मालूम होती है? अगर मैं सब नाम छोड़ दूं, तो भी मैं रहूंगा, बिना नाम के सारे जगत में मनुष्य को छोड़ कर सब हैं। मनुष्य की ईजाद है नाम, और यह सबसे खतरनाक ईजादों में से एक है, इससे काम तो चल जाता है, लेकिन एक बहुत बड़े अज्ञान पर पर्दा पड़ जाता है। कोई आपसे पूछता है आप कौन हैं, आप कह देते हैं मैं राम हूं, फलां-फलां हूं। और बात खत्म हो जाती है। धीरे-धीरे लोगों से कहते, कहते आप भूल ही जाते हैं कि यह बिल्कुल झूठी बात है कि आप राम हैं। यह बिल्कुल झूठी बात है, यह एक झूठा लेबल है, जो लगा दिया गया है। यह आपका परिचय नहीं है।
और सब तरफ अंधेरा है। अकेला था तो अपने से बातें करने लगा, हम सभी कर रहे हैं, अपने से बातें। कोई जरा जोर से करता है, हम कहते हैं पागल है, कोई जरा धीरे-धीरे करता है मन में तो कहते हैं कोई पागलपन नहीं। बल्कि हर आदमी अपने से बातें कर रहा है। अभी आप यहां बैठे हैं तो इस खयाल में रहें कि सभी मुझे सुन रहे हैं। आपकी बातें चल रही होंगी, उनको आप सुन रहे होंगे। स्वप्नहार वहां गया तो अपने से बातें करने लगा, वहां अंधेरा था, कोई
भी नहीं था; अपने बाथरूम में आप भी करने लगते होंगे। कहीं एकांत में अकेले में आप भी अपने से बातें करने लगते होंगे, कोई न होगा तो जोर से भी करने लगते होंगे, ये कोई बहुत अस्वाभाविक नहीं है। यह मनुष्य का रुग्ण मन है, सहज है। स्वप्नहार बात करने लगा कोई भी नहीं था, कोई डर नहीं था, हम सब डरे हुए हैं, एक-दूसरों से, इसलिए अपने को संभाले रहते हैं। अगर आप जमीन पर अकेले हों तो आप ऐसे थोड़े ही होंगे, जैसे अभी हैं, आप बिल्कुल दूसरे आदमी हो जाएंगे। क्योंकि तब कोई डर नहीं होगा। कोई डर नहीं था, तो वह जोर-जोर से बातें करने लगा। माली जागा उसने देखा इतनी रात कौन आ गया है, उसने लालटेन उठाई वह गया, देखा अकेला आदमी है और अपने से बात करता है, तो थोड़ा डरा, एक तो आधी रात को कोई बगीचे में आ गया; फिर अकेला है और अपने से बातें करता है, तो उसे थोड़ी दहशत हुई, उसने दूर से डंडा बजाया और पूछा कि आप कौन हैं? स्वप्नहार ने कहाः बड़ी मुश्किल हो गई, यही तो हम अपने से पूछते थे यहां। और यही तुम भी पूछने लगे, यही तो हम पूछते हैं, जिंदगी हो गई कि कौन हैं? माली तो निश्चित समझा होगा कि पागल है। लेकिन सच में वे ही पागल हैं, जो सोचते हैं कि वो जानते हैं कि वो कौन हैं? अपना नाम, अपना पता-ठिकाना। ये चिट्ठियां लिखने के लिए पते ठिकाने ठीक हैं, और लोगों को बताने के लिए ठीक हैं कि मैं फलां जगह रहता हूं, और फलां आदमी हूं, लेकिन खुद के जानने के लिए ये सूचनाएं बहुत झूठी हैं। समाज के लिए तो यह परिचय काफी है, स्वयं के लिए यह परिचय काफी नहीं है। और जो इसको अपना परिचय मान लेगा, वह अज्ञान से ही तृप्त हो गया है। उसके जीवन में ज्ञान का पदार्पण नहीं हो सकता। उसने द्वार बंद कर रखे हैं। तो पहली तो बात है कि आप नाम नहीं है, तो सोचते होंगे कि फिर रूप हूं, मेरी शक्ल, मेरी रूप-रेखा, मेरी देह की बनावट, यह मैं हूं।

आपको क्या पता है कि मां के पेट में जब आप पहली दफा आगमन हुआ तो आपकी शक्ल और रूप-रेखा कैसी थी? तब तो एक छोटा सा, इंच का भी सैकड़ोवां हिस्सा, एक छोटा सा अणु था, वही आप थे। अगर आज वह अणु आपके सामने रख दिया जाए कि आप पहचानेंगे कि यह मैं हूं, वह आपकी देह थी कभी, मां के पेट में जब पहले दिन आपने देह पकड़ी थी तो, वही आपकी देह थी। आज तो आप उसे पहचान भी न सकेंगे। बड़ी दूरबीन से देखेंगे, तब कहीं वह दिखाई पड़ेगा। और फौरन इनकार कर देंगे कि यह मैं कैसे हो सकता हूं? फिर मां के पेट में आप बड़े होने लगे तो बहुत देह आपने बदलीं। वैज्ञानिक कहते हैं कि करीब-करीब मनुष्य जाति ने जितने-जितने पशुओं को पार किया है, उतने-उतने पशुओं की सूक्ष्म-सूक्ष्म आकृतियां मां के पेट में बच्चा पूरी करता है। पूरी यात्रा करता है। कभी वह पानी के जानवर जैसा होता है, कभी थलचर जैसा होता है, फिर धीरे-धीरे बढ़ता है, फिर बंदर जैसा होता है, फिर आदमी जैसा होता है। उनमें से कौन से आप हैं? अगर नौ महीने के पूरे चित्र मां के पेट के आपके सामने रख दिए जों तो आप तो घबरा जाएंगे, वह तो पूरा का पूरा जू हो जाएगा, वह तो जानवरों की कतार हो जाएगी। कौन हैं आप उसमें से? और अगर आप कहें कि ये हम नहीं हैं, तो मां के पेट से जब जन्में, वह तस्वीर आपके सामने निरंतर रखी जाती है, धीरे-धीरे आपको खयाल हे जाता है कि यह मेरे बचपन की फोटो है। लेकिन वह देह कहां गई, जो आप बचपन में थे। वह रूप कहां गया? रूप तो रोज बदल रहा है। जो रोज बदल रहा है, वह आप कैसे हो सकते हैं? वह तो निरंतर, प्रतिक्षण बदल रहा है, आप यहां आए थे, इस भ्रांति में मत लौट जाना कि आप वही देह लेकर वापस लौट गए हैं, जो लेकर आए थे। घंटे भर में देह परिवर्तित हो जाएगी, उसमें बहुत से सैल्स मर जाएंगे, बहुत से नये हो जाएंगे। शरीर में घंटे भर में बहुत परिवर्तन हो जाएगा। आप कहेंगे घंटे भर में क्या परिवर्तन होगा? घंटे भर में नहीं होगा तो फिर सत्तर साल में भी नहीं हो सकता। परिवर्तन रोज होगा, तभी तो होगा। कोई अचानक थोड़े ही जवान आदमी बूढ़ा हो जाता है। प्रतिक्षण बूढ़ा हो रहा है। और अगर घंटे भर में परिवर्तन नहीं होगा तो फिर आप कभी मर ही नहीं सकोगे। फिर तो आप अमर हो जाओगे। प्रतिक्षण आपके भीतर कुछ मरता जा रहा है। इसलिए मैं निरंतर कहता हूं कि जन्म का दिन ही, मृत्यु की शुरुआत का दिन है। उसी दिन से मरना शुरु हो गया। उसी दिन से थोड़े-थोड़े हम मरते जा रहे हैं। तो जिसको आप अपना रूप कहते हैं, अपना चित्र कहते हैं, वह आपका नहीं है, वह तो अब रोज मरता जा रहा है, वह तो रोज बदलता जा रहा है। वह तो पानी की धार की तरह है। पिछले वर्ष गंगा पर मैं गया था। इस वर्ष भी गया तो मित्र कहने लगे कि गंगा, तो मैंने कहा ये नाम धोखा दे देता है, जो पानी मैं पिछले वर्ष आया था, अब बिल्कुल नहीं है। लेकिन गंगा का नाम धोखा दे देता है, लगता है वही नदी है, जो पिछले वर्ष देख गया था। नाम धोखा पैदा कर देता है। वही नदी कहां है अब, वह तो मैं देख भी नहीं पाया था, और पानी बह गया। वह तो मैं देख भी नहीं पाया।
हेराक्लतु ने कहा है, आप एक ही नदी में दुबारा नहीं उतर सकते। असंभव
है दुबारा उतरना। मैं तो कहता हूं एक ही बार नहीं उतर सकते, क्योंकि जब आपका पैर पानी में जाएगा और पानी की सतह छुएगा, तब तक नीचे का पानी बह गया। और नीचे जाएगा, और नीचे का पानी बह गया। आपका पांव पूरा उतर नहीं पाएगा, पानी की कई परतें बह गईं। सब बदला जा रहा है, वैसा ही आपका रूप भी बदलता जा रहा है। प्रतिक्षण बदलता जा रहा है। इस बदलते हुए रूप आप हैं? अगर यह बदलता हुआ रूप आप हैं, तब तो आपके भीतर कोई ईकाई न रही, कोई यूनिटी न रही, कोई तत्व न रहा, जो जन्म के समय हो और मृत्यु के समय भी हो। लेकिन निश्चित ही कोई ईकाई हमारे भीतर है। क्योंकि बदलाहट अगर किसी अपरिवर्तनीय सूत्र पर न हो तो हो ही नहीं सकती। एक गाड़ी का चाक चलता है, अगर बीच में खड़ी हुई कील न हो, तो चाक चलेगा कैसे? चाक चलता है यह इस बात की खबर है कि बीच में कोई कील है, जो कि नहीं चलती है। नहीं तो चाक चल नहीं सकता। परिवर्तन अपरिवर्तन के ऊपर चलता है। अथिरता थिर के ऊपर चलती है। जो ठहरा हुआ है, उसके ऊ पर बदलाहट होती है। अकेली बदलाहट नहीं हो सकती। अकेली बदलाहट असंभव है। अकेला परिवर्तन असंभव है, मूवमेंट असंभव है, जब तक कि कोई बीच में ऐसा तत्व न हो, जो कि मूवमेंट नहीं है, जो कि गति नहीं है, जो कि

परिवर्तन नहीं है। मूवेबल कुछ न हो, ठहरा हुआ कुछ न हो, तब तक कोई परिवर्तन संभव नहीं है। लेकिन रूप बदलता जाता है, बचपन से मृत्यु तक अगर आपके सारे चित्र उतारे जाएं तो ये पूरी जमीन एक ही आदमी के चित्रों से भर जाए। और पहचानना मुश्किल हो जाए कि कौन सा चित्र मेरा है। लेकिन इन्हीं चित्रों को हम अपना मान कर चलते हैं। अभी जो चित्र आप लिए बैठे हैं अपने रूप का, सोचते होंगे यही मैं हूं, घड़ी भर बाद यह नहीं रह जाएगा, क्षण भर बाद यह नहीं रह जाएगा। फिर आप कहां गए? रूप तो रोज बदलते जाते हैं, बच्चा था मैं, युवा हो गया, वह भी बह जाएगा, बूढ़ा हो जाऊंगा, वह भी बह जाएगा। यह तो सारी यात्रा बदलती जाएगी। भीतर कौन है यात्री, यह तो रास्ता है रूप, लेकिन अरूप कौन है, केंद्र पर कौन है?
तो न तो नाम हैं हम, और न रूप हैं हम। तो नाम और रूप के अतिरिक्त हमारा परिचय क्या है? हमारी पहचान क्या है? जानते हैं किसी को जो कि नाम भी न हो, और रूप भी न हो और आपके भीतर आप अनुभव कर सकें? वही हमारा प्राणों का केंद्र होगा। वही हमारी आत्मा होगी, वही हमारा सत्य होगा, उसको ही मैंने कहा कि वही निपट निजता में आपका व्यक्तित्व होगा। जो बदल रहा है, आवरण की भांति, वस्त्रों की भांति, वह आप नहीं हैं। जो नहीं बदल रहा है और थिर है, वही आप हैं। उसको कैसे जानें? वह कौन है? तो एक तो ये नाम और रूप हमें रोक लेते हैं। फिर जो लोग इनसे थोड़ा ऊपर उठते हैं, जब मैं यह कह रहा हूं तो कई लोग सिर हिला रहे हैं कि मैं बिल्कुल ठीक कह रहा हूं; और उनके सिर बिल्कुल ही गलत हिल रहे हैं। उनके सिर इसलिए हिल रहे हैं कि उन्होंने किताबों में पढ़ा हुआ है, कि हम तो आत्मा हैं हैं, नाम, रूप से अलग, आत्मा। इसलिए वो सिर हिला रहे हैं कि आप बिल्कुल ही ठीक कह रहे हैं। यही तो हमने पढ़ा हुआ है कि नाम, रूप हम नहीं हैं; हम तो आत्मा हैं। ये उत्तर भी दूसरों का सिखाया हुआ है।
नाम भी मां-बाप दे देते हैं और ये हम आत्मा हैं, यह खयाल भी समाज में प्रचलित विचार पकड़ जाते हैं, और हमको बैठ जाते हैं। यह सामाजिक प्रचार का परिणाम है कि आपके मन में होता है कि हम तो आत्मा हैं, लेकिन आत्मा शब्द से आपको कुछ प्रकट होता है, या कि यह शब्द बिल्कुल कोरा और थोथा शब्द है? इसमें आपको क्या अनुभव होता है, जब मैं कहता हूं कि आत्मा, तो आपके भीतर कौन सी अनुभूति के द्वार खुलते हैं? या कि एक शब्द गूंज कर रह जाता है। निश्चित ही एक शब्द गूंज कर रह जाता है। जब हम कहते हैं आत्मा, तो एक शब्द गूंजता है लेकिन भीतर कोई भाव थोड़े ही पैदा होते हैं। अगर मैं कहूं घोड़ा तो आपके भीतर एक भाव पैदा होगा। अगर मैं कहूं मकान, तो आपके भीतर एक चित्र प्रकट होगा। लेकिन जब मैं कहता हूं आत्मा, तो एक शब्द गूंज कर रह जाता है, कुछ भी पैदा नहीं होता। हो नहीं सकता पैदा क्योंकि शब्द तो सीखा हुआ है, यह अनुभ्ूति से नहीं आया। यह स्वयं जाना हुआ नहीं है। अगर हम नाम रूप से थोड़ा हटें, तो जो प्रचार है, सिद्धांतों का वह पकड़ लेता है, शास्त्रों का प्रचार पकड़ लेता है। और फिर हम उसको पकड़ कर दोहराने लगते हैं कि मैं तो आत्मा हूं। एक साधु मेरे पास आए, मैं उसने पूछा कि आप क्या साधना करते हैं? उन्होंने कहा कि मैं तो अहिर्निश यही भाव दोहराता हूं कि मैं तो आत्मा हूं। मैंने कहा कि बार-बार इसी को दोहराते हैं? उन्होंने कहा कि निरंतर, इसी का स्मरण करता हूं कि मैं तो आत्मा हूं। मैं तो ब्रह्म हूं, अहं ब्रह्मास्मि मैं तो यही बात करता हूं। फिर तुम्हें पता नहीं होगा कि तुम आत्मा हो, अगर पता हो तो फिर बार-बार दोहराने की जरूरत नहीं रह जाएगी। अगर मैं बार-बार यह दोहराता रहूं बैठा हुआ कि मैं आत्मा हूं, तो मेरा दोहराना यह सिद्ध करता है कि मुझे शक है अपने आत्मा होने पर। मेरा दोहराना यह सिद्ध करता है कि मुझे मालूम तो हो रहा है, कि मैं शरीर हूं लेकिन इस भाव को खंडित करने के लिए मैं दोहरा रहा हूं कि मैं आत्मा हूं। अन्यथा कोई क्यों दोहराएगा। क्या कोई स्त्री है तो वह बार-बार दोहराती है कि मैं स्त्री हूं? कोई पुरुष है तो क्या वह बार-बार दोहराता है कि मैं पुरुष हूं? और अगर कोई पुरुष बार-बार दोहराता हो कि मैं पुरुष हूं, तो क्या आपको शक और संदेह नहीं पकड़ लेगा। यह दोहराना तो, यह दोहराना इस बात की सूचना बन जाएगी कि कोई शक है भीतर, कोई संदेह है, कोई संदेह है भीतर सरक रहा है, उस संदेह को खंडित

करने के लिए कोई बात दोहराई जा रही है। अगर कोई आदमी आपसे बार-बार कहे कि मैं आपको प्रेम करता हूं, मैं आपको प्रेम करता हूं, तो आपको शक हो जाएगा कि बात क्या है? क्योंकि यह बार-बार कहने की कौन सी जरूरत है कि मैं आपको प्रेम करता हूं। अगर प्रेम है तो वाणी खो जाती है और कहने का कोई उपाय नहीं रह जाता, अगर इस बात का बोध है कि मैं आत्मा हूं तो बात खत्त्म हो गई। दोहराने का कोई प्रश्न ही नहीं है। दोहराता वही है जो नहीं जानता। लेकिन हमें यह समझाया और सिखाया जाता है कि यदि हम बार-बार दोहराए चले जायें कि हम आत्मा हैं, आत्मा हैं, तो धीरे-धीरे हमें आत्मा का अनुभव हो जाएगा, वह अनुभव झूठा होगा, वह अनुभव आत्म-सम्मोहन जनक होगा। वह ऑटो-सजेशन होगा। वह वास्तविक अनुभव नहीं होगा। अगर एक आदमी बार-बार अपने को कोई बात दोहराता रहे, दोहराता रहे तो उसे अनुभव होने लगेगा, अनुभव कल्पना से निर्मित होगा, आत्मा का अनुभव नहीं होगा। वह हम कल्पना कर लेंगे बार-बार दोहराने से तो ऐसा प्रतीत होने लगेगा।
अगर आप इस भवन से बाहर निकलें द्वार पर खड़ा हुआ चपरासी कहे आपकी तबीयत कुछ खराब है, स्वास्थ्य कुछ खराब है, आपके हाथ-पैर कुछ कमजोर मालूम होते हैं, आप उससे कहेंगे मैं तो बिल्कुल ठीक हूं, मेरी तबीयत खराब नहीं, लेकिन आप थोड़े और आगे जायें, फिर दो मित्र मिलें और वो कहें क्या बात है? आज बड़े कमजोर मालूम होते हैं? तो आप अब उतनी ही हिम्मत से नहीं कह सकेंगे कि मैं बिल्कुल ठीक हूं, आप कहेंगे कि हां, रात से कुछ तबीयत ढीली पड़ गई है। आप पर एक सुझाव बैठ गया। आप और थोड़े दूर जाएं, और चार-छह लोग मिलें, और क्या बात है, आपके पैर तो बहुत डगमगाते से मालूम होते हैं? तो आप कहेंगे हां, मुझे कुछ कमजोरी है। सुझाव आप पर बैठना शुरू हो गया। आपको इस भवन से आपके घर तक पहुंचते-पहुंचते बीमार किया जा सकता है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। इसमें कोई भी कठिनाई नहीं है। न केवल बीमार किया जा सकता है, अगर तीव्र सुझाव दिए जायें, तो आपकी मृत्यु तक हो सकती है।
फ्रांस में पीछे एक घटना घटी, एक अपराधी को मृत्युदंड दिया जाने को था। कुछ लोग प्रयोग करना चाहते थे कि क्या मृत्यु केवल सुझाव से हो सकती है? और दो मनोवैज्ञानिकों ने राज्य से आज्ञा मांग ली कि हम सुझाव के द्वारा, सजेशन के द्वारा इस आदमी की मृत्यु करके देखना चाहते हैं। मृत्यु दंड होना ही था, इसलिए कोई अड़चन न थी। उन्हें आज्ञा दे दी गई।
उन्होंने उस व्यक्ति को रात में जाकर कहा कि कल सुबह छह बजे तुम्हारा दंड हो जाएगा, तुम्हारी मृत्यु। तुम्हें सजा मिल जाएगी, और एक बड़ी आधुनिक विधि से तुम्हारी मृत्यु होगी, उसने पूछा कौन सी विधि? उन्होंने कहाः बहुत सरल है, तुम्हें कोई पीड़ा न होगी, लेटा दिए जाओगे, आंख पर पट्टी बांध दी जाएंगी, हाथ-पैर बांध दिए जाएंगे, और दोनों हाथ में छेद करके तुम्हारे खून को बाहर खींच लिया जाएगा। आधा घंटा लेगा, ठीक आधा घंटा; तुम्हें पता भी नहीं चलेगा, बस ऐसे ही मालूम होगा, खून धीरे-धीरे निकलता जा रहा है, और तुम मर जाओगे। धीरे-धीरे मर जाओगे। बहुत धीमी और सुविधापूर्ण मृत्यु होगी। वह रात भर सोचता रहा, सुबह उसे उठाया गया, उसकी आंख पर पट्टी बांध दी गईं, उसे टेबिल पर लिटा दिया गया। चार डाक्टर उसके चारों तरफ खड़े हो गए, लेटते वक्त जब उसकी आंख पर पट्टियां नहीं थी, तब उसने सारा सामान देखा, वहां औजार रखे हुए थे, बाल्टियां रखी हुई थीं, सारा सामान था। वह लेट गया, आंख उसकी बंद थी, हाथ-पैर बांध दिए गए; फिर दोनों हाथों पर औजारों से निशान किए गए कि उसे प्रतीत हो कि काटा जा रहा है, लेकिन काटा नहीं गया, झूठी नलियां बांध दी गईं और उनसे गुनगुना पानी बहाया गया; और पास में बाल्टियां रखी हुई उनमें बूंद-बूंद करके पानी टपकने लगा, उस मरते आदमी को सब सुनाई पड़ने लगा, जिंदा आदमी को तो कुछ सुनाई नहीं पड़ता, पास तो कितने बैंड भी बजते रहें, उसके भीतर इतनी भीड-भाड़ होती है, लेकिन मरते वक्त आदमी को सब सुनाई पड़ने लगता है, पत्ता भी हिले तो पता चलता है, क्योंकि बड़ी सजगता होती है। तो वह बूंद टपकने लगीं उसे बोध होने लगा, और डाक्टर आस-पास खड़े हुए उसकी नाड़ी और हृदय को देखने लगे और बार-बार कहने लगे कि बस ख्ून बाहर जा रहा है और बहुत जल्दी मरना हो जाएगा। पंद्रह मिनट पर उन्होंने कहा कि आदमी करीब-करीब आधा मर चुका है। उस आदमी ने भी जाना कि वह आधा मर चुका है। खून बह

रहा है और कोई उपाय भी तो बचने का नहीं है। तीस मिनट पूरे होते-होते वह आदमी मर गया, ठीक तीस मिनट पर उसकी मृत्यु हो गई। और उसका एक बूंद खून बाहर नहीं निकाला गया।
सुझाव से यह हो सकता है। सुझाव से आप चाहें तो अपने ही कमरे में कृष्ण भगवान को बांसुरी बजाते हुए देख सकते हैं, सुझाव से आप चाहें तो अपने दरवाजे पर रामचंद्र जी को धनुषबाण लिए हुए देख सकते हैं। यह आपकी प्रगाढ़ कल्पना का अगर उपयोग करें तो आपका मन कुछ भी खड़ा कर ले सकता है। और इसी तरह सुझाव से अगर आप चाहें तो मान ले सकते हैं कि आप आत्मा हैं, लेकिन यह अनुभव स्वयं का अनुभव नहीं होगा। स्वयं के अनुभव के लिए किसी मान्यता को बीच में लेना घातक है। किसी शास्त्र को, कि सी सिद्धांत को स्वीकार कर लेना घातक है। क्योंकि वह स्वीकृति ही फिर हमारे ऊपर बैठ जाती है, और हम अनुभव कर सकते हैं। ये सब ऑटो-सजेशन की, आत्म सम्मोहन की बहुत पुरानी प्रक्रियाएं हैं, हजारों साल में, हजारों लोगों ने धोखा खाया है और आज भी हजारों लोग धोखा खा सकते हैं। यह सवाल नहीं है, सिद्धांत सीखा हुआ, अर्थपूर्ण नहीं है, सब छोड़ देना होगा, नाम को, रूप को, विचार को। सब छोड़कर देखना होगा भीतर, खाली और शून्य होकर देखना होगा भीतर, तब जिसका अनुभव होगा, तब जिसकी प्रतीति होगी, तब जिसके सानिध्य में, तब जिसकी अनुभूति में हम प्रतिष्ठित होंगे, वह स्वयं की सत्ता है।
सबसे पहले मैं कौन हूं? यह स्वयं से पूछना जरूरी है। शांत और एकांत क्षणों में यह पूछना जरूरी है, मैं कौन हूं? पागलपन लगेगा कि हम अपने से पूछें मैं कौन हूं? हम तो भलीभांति जानते हैं कि कौन हैं? लेकिन मैं आपसे कहूं और सब पागलपन हो, यही अकेले एक स्वस्थ्य मन का लक्षण है, कि वह पूछे कि मैं कौन हूं? और मैं कौन हूं, इसको पूछें और अपनी परिधि को क्रमशः-क्रमशः छोटा करे, अभी आप पूछेंगे तो पता चलेगा फलां आदमी हूं, तब देखें जागें, सोचें कि क्या यह नाम मैं हूं? ज्ञात होगा यह नहीं हो सकता, ज्ञात होगा अंधेरे में हूं। सोचें, जीवन का विश्लेषण करें; कनसेप्शन के क्षण से लेकर, मां के पेट में गर्भधारण के क्षण से लेकर मृत्यु तक अपनी देह की स्थितियों पर विचार करें, तो आपको ज्ञात होगा यह देह मैं कैसे हो सकता हूं? अभी जो श्वास मैंने भीतर ली है, उसको मैं कहूंगा मेरी श्वास, लेकिन थोड़ी देर पहले वह आपमें से किसी की श्वास रही होगी। फिर मैं उसे छोड़ दूंगा, तो वह किसी और की श्वास हो जाएगी। तो श्वास को मैं कैसे कह सकता हूं मेरी है? जो देह के मेरे अणु हैं, वो न मालूम कितनी देहों में, कितने शरीरों में रह चुके होंगे, मेरे बाद न मालूम कितने देहों में, शरीरों में रहेंगे, वो मेरे कहां हैं। और जिस रूप को मैं मेरा कहूं, मेरा कहां है, मैं तो मेरा कह भी नहीं पाऊं गा और वह परिवर्तित हो जाएगा।
यह प्रतिक्षण परिवर्तित होती देह के बाबत विश्लेषण करें, जागें, विचार करें, समझें तो स्पष्ट बोध होगा कि यह मैं नहीं हो सकता हूं। फिर भीतर मन में जाएंगे, तो ज्ञात होगा कि मैं हिंदू हूं, मुसलमान हूं, जैन हूं, ये भी क्या बच्चों जैसी बातें हैं, इससे ज्यादा इम्मैच्योरिटी का लक्षण हो सकता है? कोई आदमी कोई हिंदू होता? कोई मुसलमान होता? कोई जैन होता? यह सिखाया हुआ एक नाम है और गहरे में, जैसे ऊ पर से नाम है कि तुम कृष्ण हो, भीतर एक और गहरी संज्ञा बैठी हुई है कि तुम हिंदू हो।
विनोबा कहीं थे, तो किसी ने उनको पूछा कि आप बेसस्थ ब्राह्मण हैं कि कोकणस्थ? तो विनोबा ने कहा कि मैं तो स्वस्थ ब्राह्मण हूं। हालांकि विनोबा ने मजाक में कहा, लेकिन अगर और गौर से देखें तो स्वस्थ आदमी ब्राह्मण भी नहीं हो सकता। स्वस्थ आदमी सिर्फ स्वस्थ होगा, ब्राह्मण कैसे होगा? ब्राह्मण तो अस्वास्थ्य का, बीमारी का लक्षण है।
तो विनोबा ने तो मजाक में कहाः बात वहां पूरी थी लेकिन स्वस्थ्य आदमी ब्राह्मण भी नहीं हो सकता, न शूद्र हो सकता। न हिंदू हो सकता, न मुसलमान हो सकता, स्वस्थ्य आदमी तो सिर्फ स्वस्थ्य होता है, जितना गहरे में जाएगा, उतना ही उसके सारे भेद गिरते जाएंगे। जितना आदमी अस्वस्थ होग, डिसीज्ड होगा, उतना उसके भेद होंगे, उतने उसके भेद होंगे। जैसे-जैसे स्वस्थ होगा, स्वयं के करीब आएगा तभी तो स्वस्थ्य होगा ना। स्वस्थ्य का मतलब क्या होता

है? स्वस्थ्य का मतलब होता है स्वयं के करीब आते जाना। स्वस्थ्य का पूरा मतलब होता है, स्वयं में स्थित हो जाना। और तो कोई मतलब नहीं होता। स्वास्थ्य का मतलब होता है स्वयं में स्थित हो जाना।
तो जैसे-जैसे आदमी स्वस्थ्य होगा, स्वयं की तरफ आएगा, वैसे-वैसे भेद गिरते जायेंगे, हिंदू न रह जाएगा, मुसलमान न रह जाएगा, और भीतर चलेगा तब तो पुरुष न रह जाएगा, स्त्री न रह जाएगा। और भीतर चलेगा; तो एक घड़ी आएगी, कोई संज्ञा न रह जाएगी उसे देने को, तब वह स्वयं ही रह जाएगा। जब कोई नाम खोजे से न मिलेगा, तब वह स्वयं रह जाएगा। सब नामों का निषेध साधना है स्वयं की ओर जाने की। सारी परिधि का निषेध, जहां-जहां हमें लगता है यह मैं हूं, वहीं समझना है कि कुछ भूल हो रही है, क्योंकि मैं तो मैं ही हो सकता हूं, किसी और से कैसे संबंधित हो सकता हूं। जब मैं कहता हूं कि मैं कृष्ण हूं, तभी भूल हो गई, मैं अलग है और कृष्ण अलग है, और यह आइडेंटिटी भूल की हो गई। जब मैं कहता हूं कि मैं शरीर हूं, तब भूल हो रही है, मैं अलग हूं और शरीर अलग है। और ये आइडेंटिटी, तादात्म्य भूल का हो गया। जब मैं कहता हूं मैं हिंदू हूं, तो इसका मतलब हो गया कि मैं अलग हूं और हिंदूं होना अलग है। जब तक मैं कह सकता हूं कि मैं फलां हूं, तब तक भूल होगी, जिस क्षण मैं कह सकूं कि मैं तो बस मैं हूं, जिस क्षण सारी संज्ञा और सारे नाम मिट जायें और सिर्फ मैं ही रह जाए। मो.जे.ज को परमात्मा के दर्शन हुए एक झाड़ी में। हरी झाड़ी थी और भीतर आग लगी थी। और मो.जे.ज जब करीब जाने लगे, तो आवाज आई कि रुक जाओ, पवित्र भूमि है, जूते छोड़ दो, मो.जे.ज ने जूते छोड़े वह पास गए, उन्हें कुछ संदेश मिला, ये सारी प्रतीत की बातें हैं। उन्हें संदेश मिला और उनसे कहा गया, तुम जाओ और लोगों को यह संदेश कह दो। तो मो.जे.ज ने कहाः लेकिन मैं उनसे क्या कहूंगा, वे मुझसे पूछेंगे, किसने यह संदेश भेजा है, तो मैं क्या बताऊंगा? तो उत्तर आया कि कहना, मैं केवल मैं ही हूं। उसने ही संदेश भेजा है। उसने ही संदेश भेजा है जो अकेला मैं है। जिसने सारे और संज्ञाओं को और रूपों को, सारे नामों को छोड़ दिया है। हम सबके भीतर वह बैठा है, जो अकेला मैं है। अकेला स्व है। और उसकी तरफ बढ़ने के लिए निषेध करना होगा, एक-एक तत्व पर विचार करना होगा कि क्या यह मैं हो सकता हूं। अंततः जब निषेध करने को कुछ भी शेष न रह जाए तो, जो बोध में आएगा वही स्वयं की सत्ता है।
यहां मैं बैठा हूं; अभी यहां प्रकाश है, प्रकाश बुझा दिया जाए तो अंधेरा हो जाएगा। तो जब प्रकाश है तो क्या मैं कहूं कि मैं प्रकाश हूं। यह तो गलती हो जाएगी। फिर अंधेरा आ जाएगा तो मुझे कहना पड़ेगा कि मैं अंधेरा हूं। सुबह होगी, तो मुझे कहना पड़ेगा कि मैं सुबह हूं। दोपहर होगी तो मुझे कहना पड़ेगा मैं दोपहर हूं, सांझ होगी तो मुझे बताना पड़ेगा मैं सांझ हूं। यह तो पागलपन हो जाएगा। अगर मैं ठीक से अनुभव क रूं, तो सांझ आती है, सुबह आती है, प्रकाश आता है, अंधेरा आता है, मैं कोई भी नहीं हूं। मैं तो केवल उनका देखने वाला हूं। जानने वाला हूं। आप बच्चे थे, आपने बचपन जाना, युवा हुए यौवन जाना, बूढ़े हुए बुढ़ापा जाना, आप जानने वाले थे, न तो आप बूढ़े हुए कभी, न आप जवान हुए कभी न आप कभी बच्चे हुए। आप केवल जानने वाले थे। तो सबको छोड़ देना है, जो जाना जा सके। जो भी नॉन हो सके, उसे छोड़ देना है, और शेष जब नोअर रह जाए, वह जानने वाला रह जाए, सब ज्ञेय छूट जाए और ज्ञाता रह जाए, पता चलेगा कि कौन हूं मैं? इसका कोई उत्तर नहीं हो सकता, जो दूसरा दे दे। मैं आपको नहीं कह सकता कि कौन हैं आप? कोई आप से नहीं कह सकता कि कौन हैं आप? कोई शास्त्र नहीं कह सकता, और अगर कहेगा, तो आपको शब्द याद हो जाएंगे और आप उसी की कल्पना में पड़ जाएंगे। कोई से पूछने मत जाइए कि कौन हैं आप? आप हैं तो खोजिए भीतर, और छोड़िए उन पर्तों को जिन्हें पकड़ लिया है और समझ लिया है कि ये मैं हूं। क्रमशः छोड़िए, क्रमशः छोड़िए और स्वयं की तरफ बढ़िए, और अनुभव करिए कि जो भी मैं जान सकता हूं, वह मैं कभी नहीं हो सकता। इसे सूत्र समझिए, इसे साधना का एक आधारभूत सूत्र समझिए कि जो भी मैं जान सकता हूं, जो भी मेरा ऑब्जेक्ट हो सकता है, वह मैं कभी नहीं हो सकता हूं। क्योंकि जो मेरा ऑब्जेक्ट हो सकता है, जिसे मैं जान सकता हूं, उससे मैं अलग हो गया। आपको मैं जान रहा हूं, आपसे मैं अलग हो गया। जानने वाली शक्ति, जो जाना जाता है, उससे पृथक है।

मैं अपनी देह को जान रहा हूं, बीमार होती है, तो मैं जानता हूं कि देह अस्वस्थ है; स्वस्थ हो जाती है तो जानता हूं कि देह स्वस्थ हो गई। तो ये जाने वाला तत्व है, यह देह के साथ एक कैसे होगा? अगर यह देह के साथ एक होता, तब तो फिर जान नहीं सकता था, अलग नहीं हो सकता था। जानने के लिए पृथकता चाहिए, दूरी चहिए, फासला चाहिए। अगर मेरा पैर टूट जाए तो मैं जानूंगा कि पैर टूट गया।
यूनान में एक फकीर था, एपिटैक्टस। सीधा और अदभुत आदमी था। एक झोपड़े में पड़ा रहता था, कुछ लोगों ने उसको जाकर पकड़ लिया, कुछ डकैतों ने। बहुत स्वस्थ, बहुत प्रसन्न और अदभुत व्यक्ति था। उन डकैतों ने पकड़ लिया और उन्होंने कहा कि चलो, उसने कहा भी कि मेरे पास तो कुछ भी नहीं है, वो बोले इसकी फिकर छोड़ो हम तुम्हीं को पकड़ कर गुलामों के बाजार में बेच देंगे, काफी दाम मिल जायेंगे, ऐसा तगड़ा और मस्त आदमी मुश्किल से मिलता है। उसने कहा चलो यह भी ठीक है, एपिटैक्टस को पकड़ कर वे लोग ले गए। उन्होंने कहाः गुलामों के बाजार हुआ करते थे, पहले। नाम बदल गए हैं, बाजार तो अब भी हैं। गुलामों के नाम बदल गए हैं, गुलामी तो अब भी है। नाम अच्छे-अच्छे हैं, मामला तो पुराना ही चल रहा है, कोई बहुत फर्क तो पड़ा नहीं, आदमी का आदमी अनेक-अनेक रूपों में गुलाम है। खरीदने की तरकीबें बदल गई हैं। होशियारी ज्यादा हो गई, इसलिए गुलाम को पता भी नहीं चलने देते कि तुम गुलाम हो, और उसको गुलाम भी बनाए रहते हैं। और अच्छी-अच्छी बातें सिखाते हैं और उसके हिसाब से काम चलता रहता है। बाजार बदल गए, दुकानें बदल गईं, माल वही है, वही बिक रहा है। तो उस गुलामों के बाजार में उसको खड़ा कर दिया गया, इपिटैक्टस को। तख्ती पर खड़ा कर दिया। और इसके पहले कि नीलाम करने वाला चिल्लाता कि गुलाम खड़ा है कोई खरीदे, वह खुद ही चिल्लाया कि एक अदभुत बात घट रही है, गुलामों में बाजार में एक मालिक आ गया है। और उसने चिल्ला कर कहाः गुलामो, जिसकी भी मर्जी हो, इस मालिक को खरीद लो।
वहां भीड़ लग गई, ऐसा गुलाम कभी नहीं आया था, जिसने यह कहा हो। एक राजा
भी आया हुआ था। उसने कहा यह बड़ा अजीब आदमी मालूम होता है, जो कह रहा है कि किसी गुलाम को, किसी मालिक को खरीदना हो तो खरीद ले। उस राजा ने कहा कि मैं खरीद लेता हूं इसे। इसे ठीक करना पड़ेगा यह आदमी तो गड़बड़ है। राजा ने उसे खरीदा और जंजीरें डलवा दी। रास्ते में जब चलते वक्त घोड़े पर राजा था, वह नीचे था, तो उसने पूछा कि तुमने यह कैसे कहा कि तुम मालिक हो? तो उसने कहा कि मैं उसे जानता हूं जो मैं हूं, और जिस दिन मैंने जाना उसी दिन मैं मालिक हो गया। और जो उसे नहीं जानता वह गुलाम रहे। राजा ने कहा इसका मतलब है कि तुम मानते हो कि तुम शरीर नहीं हो। उसने कहा, मानने का सवाल नहीं यह मैं जानता हूं। मानते तो वे हैं, जो जानते नहीं हैं। मैं जानता हूं कि मैं शरीर नहीं हूं। राजा ने घोड़ा वहीं रोका, अपने दूसरे सिपाहियों से कहा कि इस आदमी का पैर तोड़ दो। उसे पकड़ लिया गया और उसका एक पैर मरोड़ा गया और उसे तोड़ दिया गया। जब पैर टूटने लगा तो इपिटैक्टस ने कहा कि देखो महानुभव इस भांति पैर को मोड़ने से पैर जरूर ही टूट जाएगा। और फिर तुम पछताओगे। खरीद कर मुझे लाए हो, रुपया बेकार हो जाएगा। लेकिन राजा बोला इसकी बातों में मत पड़ो, ये सब होशियारी की बातें हैं, पैर को बचाने की तरकीब, पैर तोड़ ही दो। पैर तोड़ दिया गया, इपिटैक्टस ने कहा कि देखो पैर टूट गया। राजा ने कहा और कुछ कहना है, उसने कहा और कुछ कहने का सवाल ही नहीं, पैर टूट गया इतनी बात है। तुम देख रहे हो पैर को टूटते हुए, हम भी देख रहे हैं पैर को टूटते हुए।
इस पर थोड़ा खयाल करें। इपिटैक्टस ने कहाः तुम देख रहे हो, पैर को टूटते हुए, हम भी देख रहे हैं। तुम बाहर से देख रहे हो, हम भीतर से देख रहे हैं। इसलिए तुम्हारा देखना अधूरा ही होगा, हमारा देखना बिल्कुल पूरा है। हम भीतर से देख रहे हैं कि पैर टूट गया। यह जो देख रहा है, यह देखने की वजह से अलग हो जाता है, यह जो जान रहा है, यह जानने की वजह से अलग हो जाता है। जो भी हम जान सकते हैं, उससे हम पृथक हो जाते हैं। इसलिए जो भी आप जान लें, समझ लें कि उससे आप भिन्न हैं। उसे छोड़ें और भीतर प्रविष्ट हों। वहां भी कुछ जानने को मिल जाए, उसे भी छाड़ें, और भीतर प्रविष्ट हों। शरीर छूटेगा तो मन आ जाएगा, विचार आ जाएंगे, वे भी हम नहीं हैं, उनको भी हम जानते हैं, क्रोध

है, प्रेम है, घृणा है, वह भी हम नहीं हैं। उनको भी हम जान लेते हैं। उनको भी हम देख पाते हैं, उनको भी हम अनुभव कर पाते हैं। ऐसे क्रमशः भीतर प्रविष्ट हों, जैसे कोई प्याज को छीलता जाता हो, और उसके एक-एक छिलके को अलग करता जाता हो, ऐसा अपने एक-एक छिलके को अलग करते जाएं, एक-एक वस्त्र को अलग करते जाएं, और उस क्षण तक अलग करते जाएं, जब तक कि भीतर कोई वस्त्र न रह जायें। लोग कहते हैं महावीर नग्न हो गए, मुझे पता नहीं उन्होंने कपड़े छोड़े या नहीं छोड़े, लेकिन अगर वह नग्न हुए होंगे तो उसका अर्थ यही होगा कि उन्होंने सारे वस्त्र छोड़ दिए होंगे। ये वस्त्र नहीं जो आप पहने हुए हैं, वे वस्त्र जो हमने भीतर अपनी चेतना पर पहन रखे हैं। और जिनकी वजह से चेतना अपनी नग्नता में अपनी पूरी निर्दोषता में हमें अनुभव नहीं हो पाती। उनको छोड़ते जाएं, छोड़ते जाएं और नग्न होते जाएं। उस क्षण तक जब तक कि दिखाई पड़ने को, अनुभव में आने को, ज्ञान में आने को कुछ भी शेष न रह जाए। जब कुछ भी ऑब्जेक्ट, कोई भी विषय, कोई भी विचार, कोई भी प्रतीति, कोई भी दृश्य उपस्थित नहीं रहेगा, तब आप पाएंगे कि क्रांति घटित हो गई, एक विस्फोट हो गया। जैसे कोई ज्वालामुखी फूट पड़ा हो। सारे वस्त्र टूट जाएंगे तो आप पाएंगे कि आपके भीतर ऊर्जा ने एक शक्ति ने विस्फोट कर दिया है। सारी बात बदल जाएगी, आप जानेंगे उस क्षण में कि कौन है? कौन है जो भीतर बैठा है? इस आत्मिक अनुभव को विस्फोट से ही उपलब्ध हुआ जाता है, और विस्फोट के लिए जरूरी है कि हम सारी पर्तें अलग कर दें, ताकि भीतर जो है वह फूट सके और प्रकट हो सके। भीतर मौजूद है कोई, लेकिन ढंका है वस्त्रों से। उसे अनढंका कर दें, उसे उघाड़ दें। साधना उघाड़ना है, साधना उदघाटन है, चीजों को हटाते जाना है, जैसे कोई कुआं खोदता है, मिट्टी को, पत्थर को अलग खोद कर फेंक देता है; खोदता जाता है, खोदता जाता है, एक घड़ी आती है, जब पानी के झरने फूट पड़ते हैं। पानी नीचे मौजूद है, मिट्टी और पत्थर से ढंका है। वह भीतर मौजूद है, जिसकी मैं बात कर रहा हूं, लेकिन मिट्टी में, पत्थर में दबा है। और मिट्टी, पत्थर को हम पकड़े हुए हैं, और समझ रहे हैं कि यही हम हैं, तो फिर पानी के झरने नहीं फूट सकेंगे, तो फिर वह जीवन का स्रोत उपलब्ध नहीं हो सकेगा। इस सारे मिट्टी-पत्थर को अलग कर दें, जहां तक आपका फावड़ा चल सके, कुदाली चल सके, चलाएं; जहां तक आप उखाड़ सकें, उखाड़ें; हटाते जाएं उस समय तक जब तक कि हटाने को कुछ भी शेष न रह जाए। उस स्थिति में जब कुछ भी हटाने को शेष नहीं रहता, तो वह प्रकट हो जाता है, जो है। उस स्थिति में जब कुछ भी हटाने को अलग नहीं रहता, उसको अनुभव होता है, जो है।
जब तक कोई तादात्म, कोई आइडेंटिटी, कोई वस्त्र, कोई आवरण हमें पकडे है,
तब तक आत्मा का अनुभव असंभव है। इसलिए पूछें अपने से कि मैं कौन हूं, निरंतर अपने मौन के क्षणों को समर्पित करें, इस खोज के लिए कि मैं कौन हूं? और सजग रहें कि कोई झूठा उत्तर न पकड़ जाए। और सब झूठे उत्तर हटाते चले जाएं, कठिन है बात, श्रम मांगती हैं, जीवन में कोई भी ऐसा मूल्यवान अनुभव नहीं है, जो कठिन न हो। जीवन की कोई अनुभूति जिस मात्रा में गहरी होगी, उतना ही श्रम मांगेगी। इसलिए कोई सोचता हो कि थोड़ी देर बैठ कर राम-राम जप ले, या कोई सोचता हो कि माला फेर लें कि कोई सोचता हो कि रोज सुबह उठ कर मंदिर हो आएं और घर लौट आएं, इतना सस्ता मामला नहीं है। इतने सस्ते में परमात्मा को धोखा देने का विचार न करें।
एक साधारण सा कुआं आदमी खोदता है, तो मिट्टी, पत्थर अलग करने होते हैं। और आप स्वयं का कुआं खोदने चले हैं और सोचते हैं कि आठ आने की एक माला खरीद लेंगे, उसके गुरिए सरकाते रहेंगे, इससे हल हो जाएगा। कैसी बच्चों जैसी बात है, और किसी और को नहीं खुद परमात्मा को धोखा देने के इरादे हैं? इतना सस्ता मामला नहीं है, धर्म से महंगी और कोई बात नहीं है। क्योंकि धर्म से बड़ी और कोई बात नहीं है, और आत्मा से महंगी और कोई बात नहीं है, क्योंकि आत्मा से बड़ी और कोई बात नहीं है। सब उसके लिए चुकाया जा सकता है। सब उसके लिए खोया जा सकता है। सब उसके लिए समर्पित किया जा सकता है। सब उसके लिए चढ़ाया जा सकता है। लेकिन हम ये सब शायद न करना चाहें, कहें कि बहुत कठिन बात है, लेकिन जो बात कठिन लगती हो, उसे ही प्रयोग करने में पुरुषार्थ है। जो बात असंभव लगती हो, उसे ही संभव बनाने में मनुष्य के

भीतर की निहित शक्तियां जागती हैं, सुषुप्त शक्तियां जाग्रत बनती हैं, जो असंभव करने को राजी नहीं होता, वह अपने जीवन की पूर्ण संभावनाओं को कभी भी वास्तविक नहीं बना पाता है। उसके भीतर बीज-बीज ही रह जाते हैं। असंभव से घबड़ाएं न। और आत्मा से असंभव और कुछ भी नहीं है। न तो एवरेस्ट पर चढ़ना, न चांद पर पहुंच जाना, न अंतरिक्ष की यात्रा; कुछ भी आत्मा के अनुभव से ज्यादा असंभव नहीं है। इसलिए जिनके भीतर भी थोड़ा पुरुषार्थ हो, जिनके भीतर भी थोड़ा इस बात का गौरव हो कि मैं कुछ हूं, उनके लिए एक ही चुनौती है, कि वे उसको जानने में लगें, जो सबसे बड़ा पुरुषार्थ है, उसे पहचानने में लगें जो सबसे ज्यादा असंभव है, और सबसे ज्यादा खतरनाक है। और सबसे ज्यादा कठिन है। लेकिन यह मुझे लगता है कि ऐसा एक भी मनुष्य नहीं है, जो अगर साहस करे, संकल्प करे तो इस असंभव को संभव न बना पाए। क्योंकि वह सबकी निजी संपत्ति है। उसे कहीं खोजने बाहर नहीं जाना है। उसे हम अपने साथ लिए हुए घूम रहे हैं। उसे कहीं पाने किसी दूर नहीं जाना है, उसे हम निरंतर अपने साथ ढो रहे हैं। थोड़ा ही प्रवेश की बात है, थोड़ा संकल्प जुटाने की बात है, थोड़ा साहस इकट्ठा करने की बात है। साहस जिन्होंने खो दिया है, वे लोग मंदिरों में इकट्ठे हो गए हैं, साहस जिन्होंने खो दिया है, वे लोग हाथ जोड़ कर मूर्तियों के सामने बैठे हुए हैं, खुद की बनाई हुई मूर्तियों के सामने हाथ जोड़ कर बैठे हुए हैं। अगर कोई जरा गौर से देखेगा तो लगेगा कैसा पागलपन है? आप अपने घर में कागज पर एक चित्र बना लें और हाथ जोड़ कर बैठ जाएं। तो लोग कहेंगे यह क्या कर रहे हैं? लेकिन यही हो रहा है। साहस जिन्होंने खो दिया है, जिन्होंने पुरुषार्थ खो दिया है, जो सस्ते में कुछ पा लेना चाहते हैं, उन सारे लोगों ने इतनी ईजादें कर रखी हैं धर्म के नाम पर कि उनकी ईजादों के भार के नीचे धर्म का पता चलना मुश्किल हो गया है। धर्म के नाम पर इतना कचरा है, कि धर्म के हीरों का पता चलना कठिन हो गया है। इस कचरे से ऊब कर कुछ लोगों ने कहना शुरू किया है, इस कचरे को आग लगा दो, कम से कम मैदान ही साफ हो जाए। वे दूसरी अति पर चले गए हैं। एक अति है कि कचरा इकट्ठा कर लिया है लोगों ने, एक दूसरी एक्सट्रीम पैदा हो रही है, इसके विरोध में, कि सबको आग लगा दो, यह सब अफीम का नशा है, इसमें कुछ भी नहीं है, फेंको इसको आग लगा दो, यह सब पागलपन है।
पहले में भी खतरा है क्योंकि उस कचरे में हीरे दब गए हैं, दूसरे में अब खतरा है कि कचरे के साथ हीरों में आग न लगा दी जाए। इसलिए जो जानते हैं उनके सामने बड़ी पीड़ा है। धर्म को बचाना है और तथाकथित धर्म को नष्ट करना है। और यह बड़ा कठिन है। बड़ा मुश्किल है। इससे ज्यादा मुश्किल और कोई बात नहीं हो सकती है। धर्म को बचाना है और तथाकथित धर्म को बिल्कुल डूब जाने देना है। इस तथाकथित धर्म को बचाने में वास्तविक धर्म के डूबने का डर पैदा हो गया है। लेकिन हम... हम जो सस्ती बातें चाहते हैं, हम जो कमजोर और सुस्त लोग हैं, किसी के पैर पकड़ना चाहते हैं, और किसी का सिर पर हाथ चाहते हैं कि वे कह दें कि जाओ तुम्हें सब मिल जाएगा। तुम फिकर मत करो, तुम गाओ, मौज करो। तुम्हें सब भगवान की कृपा से मिल जाएगा, क्योंकि तुमने मान लिया वेद को कि तुमने मान लिया पुराणा को, कि तुमने मान लिया बाइबिल को, अब तुम्हें और क्या जरूरत है, विश्वास ले आओ, बाकी सब काफी है? नहीं विश्वास से कुछ भी नहीं होगा। बिल्कुल कुछ भी नहीं होगा। विश्वास से कुछ होने को नहीं है, विवेक को जगाना होगा। और विवेक की तीव्रधार से, स्वयं के भीतर की सारी पर्तें काटनी होंगी, जो हमने चिपका रखी हैं, और जिनको हमने स्वयं का होना मान लिया है। विवेक की धार, विवेक की तलवार से चीरना होगा स्वयं को, उस सीमा तक जब तक कि कुछ भी शेष न रह जाए काटने को, अलग करने को। तब जो शेष रह जाता है वही स्वयं की सत्ता है। उस स्वयं की सत्ता को जान कर व्यक्ति सब जान लेता है और सब पा लेता है।

स्वयं की सत्ता
तीसरा प्रवचन

सीखे हुए ज्ञान से मुक्ति

कुछ थोड़े से प्रश्नों पर थोड़ी सी बातें मैं आपसे कहूं, उसके पहले एक निवेदन कर देना उचित है, वह यह कि मेरे उत्तर आपके उत्तर नहीं हो सकते हैं। प्रश्न आपका है, तो अंततः आपको अपना ही उत्तर खोजना होगा। किसी दूसरे का उत्तर काम नहीं देगा। लेकिन हम उत्तर खोजने की तलाश में होते हैं, शास्त्रों में खोजते हैं, सिद्धांतों में खोजते हैं, गुरुओं में खोजते हैं, और यह आशा रखते हैं कि शायद उत्तर कहीं हमें मिल जाए। लेकिन कभी बाहर से कोई उत्तर नहीं मिलता है। सत्य के संबंध में, आत्मा के संबंध में, परमात्मा के संबंध में कोई उत्तर कभी बाहर से नहीं मिलता। आप कहेंगे कि कैसी मैं बात कहता हूं? शास्त्र भरे पड़े हुए हैं, उत्तरों से और पंडितों के मस्तिष्क भरे हुए हैं, और हम सब भी तो छोटे-मोटे पंडित तो हैं कि, थोड़ा बहुत जानते हैं; हम सबके मन में भी बहुत उत्तर हैं। लेकिन स्मरण रखें, उत्तर कितने भी इकट्ठे हो जाएं, प्रश्न समाप्त नहीं होगा। प्रश्न वहीं का वहीं बना रहेगा। उत्तरों का संग्रह हो जाएगा। प्रश्न को उत्तर स्पर्श नहीं करेंगे। इसलिए कोई कितना ही पढ़े, कितना ही सिद्धांतों को, थिरीज को, आइडियोलॉजिस को समझ लें, इकट्ठा कर ले, सारे शास्त्रों को पी जाए फिर भी जीवन का उत्तर उसे उपलब्ध नहीं होता है। उत्तर बहुत हो जाते हैं उसके पास लेकिन कोई समाधान नहीं होता। समाधान न हो तो प्रश्न का अंत नहीं होता है। प्रश्न का अंत न हो तो चिंता समाप्त नहीं होती है। चिंता समाप्त न हो तो वह जो चित्त की अशांति है, जो केवल ज्ञान के मिलने पर ही उपलब्ध होती है, उपलब्ध नहीं की जा सकती। फिर भी मैं आपको उत्तर दे रहा हूं, यह जानते हुए भी कि मेरा उत्तर, आपका उत्तर नहीं हो सकता, फिर किसलिए उत्तर दे रहा हूं? दो कारण हैं, एक तो इसी भांति मैं आपको बता सकता हूं कि जो उत्तर आपने दूसरों से सीख लिए हैं, वे व्यर्थ हैं। लेकिन भूल होगी उनको हटा दें, और जो मैं उत्तर दूं उन्हें अपने मन में रख लें, यह भी दूसरे का ही उत्तर होगा। तो मैं जो उत्तर दे रहा हूं, एक अर्थ में केवल निषेधात्मक हैं, एक अर्थ में केवल डिस्ट्रक्टिव हैं। चाहता हूं कि आपके मन में जो उत्तर इकट्ठे हैं वे नष्ट हो जाएं, लेकिन उनकी जगह मेरा उत्तर बैठ जाए, यह नहीं चाहता हूं। मन खाली हो, प्रश्न भर रह जाए, प्रश्न हो मन खाली, जिज्ञासा हो; हमारे पूरे प्राण प्रश्न के साथ संयुक्त हो जाएं। हमारे पूरी श्वास-श्वास में प्रश्न समस्या खड़ी हो जाए, तो आप हैरान होंगे, आपके ही भीतर से उत्तर आना प्रारंभ हो जाता है। जब पूरे प्राण किसी प्रश्न से भर जाते हैं, तो प्राणों के ही केंद्र से उत्तर आना शुरु हो जाता है। जो भी ज्ञान उपलब्ध हुआ है, वह स्वयं की चेतना से उपलब्ध हुआ है। कभी भी, इतिहास के किन्हीं वर्षों में, अतीत में या भविष्य में कभी यदि होगा, तो वह अपने ही भीतर खोज लेना होता है। समस्या भीतर है, तो समाधान भी भीतर है। प्रश्न भीतर है, तो उत्तर भी भीतर है। लेकिन हम कभी भीतर खोजते नहीं, और हमारी आंखें बाहर भटकती रहती हैं, और बाहर खोजती रहती हैं। कुछ कारण हैं, जिससे ऐसा होता है, हमारी आंखें बाहर खुलती हैं, इसलिए हम बाहर खोजते हैं।
एक फकीर औरत राबिया हुई, उसके बाबत एक कहानी मैं सारे मुल्क में कहता रहा हूं। वह एक दिन सुबह जब सूरज उग रहा था, अपने झोपड़े के भीतर बैठी थी। एक यात्री फकीर बायजीद या हसन उसके घर मेहमान था। वह बाहर आया, उसने सूरज को उगते देखा, बड़ी सुंदर सुबह थी, आकाश सुबह की लालिमा से भरा था और पक्षी गीत गाते थे। और वृक्षों में ताजगी थी और रौनक थी, और ठंडी हवाएं बहती थीं। उसने जोर से चिल्लाया, राबिया वहां भीतर क्या कर रही हो? बाहर आओ। बहुत सुंदर सुबह है, और बहुत अदभुत सूरज उग रहा है। एक क्षण सन्नाटा रहा, फिर राबिया ने कहाः क्या उचित न होगा हसन कि तुम्हीं भीतर आ जाओ, क्योंकि एक सूरज को तुम उगते देख रहे हो, जो बाहर है, और एक सूरज को मैं भी उगते देख रही हूं, जो भीतर है। और तुम्हारा सूरज तो बुझ जाएगा, डूब जाएगा, और मेरा सूरज कभी डूबता नहीं, बुझता नहीं। तो क्या उचित होगा कि मैं तुम्हारे सूरज को

देखने बाहर आऊं, या यह उचित होगा कि तुम भीतर आ जाओ और उस सूरज को देखो जिसे मैं देख रही हूं। हसन को ख्याल न होगा कि सुबह के सूरज की बात इतने दूर चली जाएगी। लेकिन राबिया ने ठीक कहा, एक ज्ञान बाहर है, एक प्रकाश बाहर है, अगर आपको गणित सीखनी है, केमिस्ट्री सीखनी है, फिजिक्स सीखनी है, इंजीनियरिंग सीखनी है तो आप किसी स्कूल में भर्ती होंगे, किताब पढ़ेंगे, परीक्षाएं होंगी और सीख लेंगे, यह लर्निंग है, नालेज नहीं। यह सीखना है, ज्ञान नहीं। विज्ञान सीखा जाता है, विज्ञान का कोई ज्ञान नहीं होता। लेकिन धर्म सीखा नहीं जाता, उसका ज्ञान होता है, उसकी लर्निंग नहीं होती, उसकी नॉलिज होती है। एक प्रकाश बाहर है, जिसे सीखना होता है, एक प्रकाश भीतर है, जिसे उघाड़ना होता है। जिसे डिस्कवर करना होता है।
तो जिन प्रश्नों को आप पूछ रहे हैं, वह कोई केमिस्ट्री, फिजिक्स, गणित, भूगोल इनसे संबंधित प्रश्न नहीं हैं, कि कोई उनके उत्तर दे सके। जो आप पूछ रहे हैं वह मनुष्य की उस अंतसचेतना से संबंधित प्राणों की बात है, जिसे खुद के भीतर ही खोदना पड़ता है, श्रम करना होता है और तब ही समाधान उपलब्ध होता है। यह आपसे प्रारंभ में निवेदन कर दूं, तो फिर मेंरे, मैं जो कहूंगा उसे समझने में आसानी होगी, समझने में और पकड़ने से बचना हो सकेगा। वह भी छोड़ देने योग्य है, जो मैं आपसे कहूं, वह भी जो आपने और सीख लिया है, उचित है कि आप सबसे मुक्त हो जायें, ताकि स्वयं को जान सकें।

सबसे पहले प्रश्न पूछा हैः महावीर, बुद्ध, गांधी, विनोबा, क्या इनकी शिक्षा हमें आत्म-ज्ञान देने में सहायक नहीं हो सकती?

नहीं। किसी की शिक्षा कभी आत्म-ज्ञान देने में सहायक नहीं होती। असल में शिक्षा ही आत्म-ज्ञान से संबंधित नहीं है। शिक्षा नहीं साधना आत्म-ज्ञान देती है। शिक्षा नहीं होती आत्म-ज्ञान की। अन्यथा अब तक दुनिया आत्मज्ञानी हो जाती। हम विद्यालय, विश्वविद्यालय बना सकते हैं, हम विद्यापीठ खोल सकते हैं, और वहां समझाया जा सकता है, और वहां पढ़ाया जा सकता है। शिक्षा नहीं होती है धर्म की, और दुर्भाग्य यही है कि हम सारे लोग धर्मों में शिक्षित हैं। इसीलिए दुनिया में धर्म के नाम पर अधर्म है। कोई हिंदू है, कोई मुसलमान है, कोई जैन है, कोई ईसाई है। यह शिक्षा का परिणाम है। शिक्षा धार्मिक तो नहीं बनाती, हिंदू बना देती है, मुसलमान बना देती है, ईसाई बना देती है और तब ये हिंदू और मुसलमान और ईसाई मिल कर धर्म की हत्या करने में संलग्न हो जाते हैं। ये हजारों साल से धर्म की हत्या कर रहे हैं। ये करते रहेंगे। जब तक दुनिया में संप्रदाय होंगे, विशेषण होंगे, धर्म के नाम पर अलग-अलग संगठन, ऑर्गनाइजेशन, पॉलिटिक्स होगी, तब तक दुनिया में धर्म के अंकुर के पनपने के लिए सुविधा बहुत कम है। दुनिया में धार्मिक आदमी नहीं पैदा हो पाता, क्योंकि धर्म के नाम से जो अड्डे बने हैं, वे मनुष्य के मन को इस भांति से शिक्षित और दीक्षित कर देते हैं कि उसके जीवन में स्वतंत्र विचार की, स्वतंत्र प्रतिभा की, चेतना की, जन्म की सारी संभावना नष्ट हो जाती है। आप पैदा होते हैं और शिक्षा शुरु हो जाती है, शिक्षा शुरु हो जाती है कि आप हिंदू हैं, मुसलमान हैं, जैन हैं, शिक्षा शुरु हो जाती है कि कुरान, बाइबिल या गीता परम वचन हैं, परम सत्य हैं। शिक्षा शुरु हो जाती है कि ईश्वर है, आत्मा है, या ईश्वर नहीं है, आत्मा नहीं है।
सोवियत रूस में शिक्षा वो देते हैं कि ईश्वर नहीं है। बीस करोड़ लोग; उन्होंने शिक्षित करने की कोशिश की है नास्तिकता में। दूसरे मुल्क हैं, वहां हम शिक्षित कर रहे हैं लोगों को धर्मों के लिए। उन्हें रटवा रहे हैं, याद करवा रहे हैं। फिर ये बातें हमारे मन में बैठ जाती हैं। फिर इनको हम दोहराने लगते हैं, और सोचने लगते हैं, यही सत्य है। शास्त्र हमारे भीतर से बोलने लगते हैं, और हम सोचते हैं हम बोल रहे हैं। संप्रदाय बोलने लगते हैं, हम सोचते हैं हम सोच रहे हैं, अगर मैं आपसे पूछूं कि ईश्वर है? तो आपके मन में, अनेकों के मन में उठेगा--है। लेकिन आप विचार करना यह "है" आपका है या सिखाया हुआ? यह आपको सिखाया गया है, समझाया गया है या आपने जाना? अगर आप

ऐसे घर में पैदा हुए हैं, ऐसे धर्म में जो ईश्वर को नहीं मानता, जैसे अगर आप जैन हैं, या बौद्ध हैं, तो अगर मैं पूछूं क्या ईश्वर है? तो आपके मन में उठेगा ईश्वर नहीं है, आत्मा ही है। क्यों? क्या आप जानते हैं ईश्वर नहीं है? नहीं आपको सिखाया गया है कि ईश्वर नहीं है। दुनिया में कुछ भी सिखाया जा सकता है, और कुछ भी प्रचारित किया जा सकता है। कुछ भी मनों में भरा जा सकता है। अबोध मन बच्चों के होते हैं, कोई भी बात डाली जा सकती है। डाला जा सकता है, ईश्वर है, डाला जा सकता है ईश्वर नहीं है। समझाया जा सकता है ईश्वर के चार हाथ हैं, चार सिर हैं, या कुछ और समझाया जा सकता है। यह हमारे मन में बहुत गहरे बैठ जाएगा। यह शिक्षा आपको आत्मज्ञान जानने में बाधा हो जाएगी। क्योंकि इसके कारण आप कभी स्वतंत्र चिंतन करने में समर्थ न होंगे। आपका चिंतन हमेशा इसी शिक्षा से शुरू होगा, और इसी शिक्षा को सिद्ध करके समाप्त हो जाएगा। यह पक्षपात ग्रस्त मन होगा, यह क्लोज्ड माइंड होगा। यह खुला हुआ मन नहीं होगा यह खोज नहीं सकता। खोज के लिए ख्ुला और मुक्त मन चाहिए। जानने के लिए, ज्ञान के लिए जंजीरें और दीवालें नहीं चाहिए, जानने के लिए पक्षपात नहीं चाहिए। प्रिज्युडिस नहीं चाहिए। कोई मत, कोई सिद्धांत नहीं चाहिए। जिज्ञासा जब मुक्त होती है, तो सत्य तक ले जाती है। और जिज्ञासा जब बंध जाती है, तो सत्य तक नहीं केवल मत तक, सिद्धांत तक, संप्रदाय तक ले जाकर समाप्त हो जाती है। अभागे हैं वे लोग जो सिखाए हुए धर्म को ही धर्म समझकर समाप्त हो जायेंगे। और धन्यभागी हैं वे लोग, जो उस धर्म को जान सकेंगे जो अनसीखा है और कभी सिखाया नहीं जा सकता। जिसे कोई सिखा नहीं सकता। जिसे अपने भीतर उघाडना और खोजना पड़ता है। इसलिए किसी की भी शिक्षा, यह नहीं कहता कि महावीर की या मोहम्मद की, या कृष्ण की या क्राइस्ट की, किसी की भी शिक्षा घातक है। शिक्षा नहीं। क्योंकि शिक्षा आती है बाहर से, शिक्षा कोई और देता है, कोई और सिखाता है हमें और वह शिक्षा हमारे मन में जाकर स्मृति बन जाती है। तोते की भांति हम उसे याद कर लेते हैं।
एक छोटे बच्चे को हम कहें ईश्वर है, वह क्या समझेगा? क्या जानेगा? और फिर हम साथ में यह भी कहें कि ईश्वर को जो नहीं मानता वह नरक में भेजा जाता है। छोटा बच्चा भयभीत हो जाएगा। और फिर हम उसे यह भी कहें कि जो ईश्वर को मानता है, स्वर्ग में ईश्वर उसे बड़े सुख देता है, उसका लोभ पकड़ लेगा। फिर वह अपने आस-पास अपनी मां को देखता है, अपने पिता को, अपने परिवार को, वे सारे लोग ईश्वर का झंडा लेकर मंदिरों में जाते हैं, पूजा करते हैं, प्रार्थना करते हैं, बड़े लोग बच्चे को लगता है सर्वज्ञ हैं, सब जानते हैं। शक्तिशाली हैं, क्योंकि बच्चा अगर जरा गड़बड़ करे तो उसका कान पकड़ते हैं, चांटा लगाते हैं। उसे घुटने टिकाते हैं, वह जानता है कि ये बड़े शक्तिशाली लोग हैं, बड़े ज्ञानी है, अगर ये भी मंदिर में जाते और ईश्वर को मानते हैं, तो जरूर ईश्वर है। फिर भय, कि अगर ईश्वर को न माना जाए तो नरक है। फिर प्रलोभन कि अगर ईश्वर को माना जाए तो स्वर्ग है। इस सारी स्थिति में ईश्वर है, यह भाव मन में बैठ जाता है। यह स्मृति का, मैमोरी का हिस्सा हो जाता है। फिर जब भी कोई उससे पूछेगा, जब वह बड़ा हो जाएगा, बार-बार पुनुरुक्त होने से ये संस्कार, यह कंडिशनिंग उसके भीतर बैठ जाएगी। जब भी प्रश्न आएगा ईश्वर है, तो वह कहेगा, है। और अगर जरूरत पड़े तो इस ईश्वर पर वह अपनी जान भी गंवा सकता है। या दूसरे की जान भी ले सकता है, ईश्वर वादी करते रहे हैं यह। ये धार्मिक लोग बहुत खतरनाक लोग हैं, इनके नाम पर बहुत खून है, ये तथाकथित मंदिर और मस्जिद की पूजा करने वाले लोग, जितना पाप किए हैं इस जमीन पर उतना कोई भी नहीं किया। इन्होंने बहुत हत्याएं की हैं, बहुत आग लगाई हैं। बहुत बच्चे काटे हैं, बहुत स्त्रियों की इज्जत लूटी है। बहुत धन बर्बाद किया है। इनके नाम पर बहुत पाप है। ये वही लोग हैं, जिनके दिमाग में एक विचार बैठा दिया, विचार इतना परिपक्व हो जाता है, उनके अहंकार को इतना पकड़ लेता है कि उस विचार को धक्का लगे तो वे समझते हैं, मुझे धक्का लगा।
अगर कोई कह दे कि ईश्वर नहीं है, तो वह लकड़ी लेकर, तलवार लेकर खड़े हो जाएंगे, ईश्वर की रक्षा का जिम्मा उनके ऊपर है। कहते तो वो यह है कि ईश्वर सबका रक्षक है, लेकिन दिखाई यह पड़ता है कि ईश्वर की रक्षा भी उनके भक्त

करते रहते हैं। मंदिरों पर तालों की जरूरत है और सिपाहियों की। और संप्रदायों को तलवारों और बंदूकों की जरूरत है। संप्रदायों को भी फौजों की जरूरत है, उनको भी राज्यों की जरूरत है। राजनीतिज्ञों के और राजाओं के सहारे की जरूरत है, तब सब काम फैलेगा। सारे धर्म ये सीखी हुई बातें, ज्ञान तो नहीं लाती, मनुष्य के अज्ञान को, अज्ञान की जो पीड़ा है, उसको नष्ट कर देती हैं। अगर कोई हमें न बताया जाए कि ईश्वर है या नहीं, अगर कोई सिद्धांत हमें न सिखाए जाएं, अगर किसी संप्रदाय में हमें दीक्षित न किया जाए, तो आज नहीं कल हमारे जीवन में समस्याएं और प्रश्न, दुख और पीड़ा, अज्ञान हमें बेधना शुरु कर देंगे, वे हमें पीड़ा देना शुरु कर देंगे, उनकी चिंता हमें सताने लगेगी और हमें लगेगा क्या है इस जीवन का अर्थ? क्या है प्रयोजन? क्यों हैं हम? क्यों है हमारी सत्ता? कौन हूं मैं? ये प्रश्न किसी के सिखाने के नहीं हैं, ये तो जीवन की पीड़ा और जीवन का अनुभव उठा देगा, और जब कोई बंधे-बंधाए उत्तर न हों, तो फिर क्या करेंगे? बंधे-बंधाए उत्तर, रेडीमेड उत्तर बड़े खतरनाक हैं। समस्या उठती है, उत्तर वहीं के वहीं तृप्त कर देता है, ईश्वर तो है, भाग्य तो है, ईश्वर यह सब लीला कर रहा है, उसकी लीला से यह सब हो रहा है। अगर गरीब हैं तो पुराने जन्मों के कर्मों से गरीब हैं, और अगर अमीर हैं, तो पिछले जन्मों के पुण्यों का फल है। सारी बातें तैयार हैं, कोई भी समस्या उठती है, सब उत्तर तैयार हैं, इसलिए कोई भी समस्या जीवन को कंपा नहीं पाती, जीवन को पीड़ा नहीं दे पाती, जीवन में संताप और चिंता नहीं पैदा कर पाती। जीवन में एक घबड़ाहट, एक बेचैनी, एक अशांति खोज की एक प्यास पैदा नहीं हो पाती; क्योंकि यह शिक्षा बंधे-बंधाए उत्तर दे देती है, और मामला समाप्त हो जाता है। उधर उत्तर वास्तविक धर्म की छाती पर बैठ जाते हैं, और नष्ट कर देते हैं। समस्या होना जरूरी है, समाधान से ज्यादा महत्वपूर्ण, समस्या है, उत्तर से ज्यादा महत्वपूर्ण प्रश्न है। बंध-बंधाए शास्त्रों से ज्यादा महत्वपूर्ण स्वयं की समस्या है। मगर शास्त्र उसकी हत्या कर देंगे। एक पीड़ा उठेगी मन में कि मैं जानूं कि मैं कौन हूं, क्यों हूं? और उत्तर तैयार हैं, वो इस पीड़ा को पोंछ कर समाप्त कर देंगे और कहेंगे क्या जानने की बात है, महावीर सर्वज्ञ हुए, उन्होंने सब बता दिया है। बुद्ध भगवान हुए उन्होंने सब बता दिया है। मोहम्मद पैगंबर थे खुदा के उन्होंने जो कह दिया उसके आगे कुछ कहने को नहीं है। सब लिखा है पढ़ लो, समझ लो, याद कर लो, जानने की तुम्हें क्या जरूरत है? दुनिया भर के बुद्धि के लिए कुछ ठेकेदारों पर हमने सब जिम्मा छोड़ दिया है। और हम सोचते हैं उन्होंने हमारे लिए सब चिंतन कर लिया और सब जान लिया है। इस भांति अगर हम अबुद्धि में घिर गए हों, और अगर अज्ञान में खड़े रह गए हों, तो कोई और जिम्मेवार नहीं है। जिम्मेवार हम हैं। जिम्मेवार मैं हूं, जिम्मेवार आप हैं। हम अपनी बुद्धि को उधार दिए हुए हैं, और इसी को मैं कहता हूं शिक्षा। नहीं धर्म के लिए कोई शिक्षा नहीं होती, साधना होती है। धर्म के लिए उत्तर नहीं होते, प्रश्न होते हैं। धर्म के लिए समाधान नहीं होते, समस्या होती है। समस्या में जीना जरूरी है, और दूसरों के उत्तरों को फेंक देना जरूरी है, अपनी समस्या में जीएं, अपनी समस्या में, और तब आप पाएंगे कि कठिन है, तपश्चर्या है, अपनी समस्या में जीना बड़ी कठिन बात है, अपने प्रॉब्लम के साथ जीना बड़ी कठिन बात है, क्योंकि वह चैन न लेने देगा, वह कांटे की तरह चुभेगा, वह प्राणों में शूल की भांति बिंधा रहेगा। जब तक कि उत्तर न आ जाए तब तक वह सताएगा, तब तक वह पीड़ा देगा, और वह पीड़ा आपको उठाएगी, वह पीड़ा आपको खोज में भेजेगी, वह दुख आपको दुख के निरोध के मार्ग पर ले जोयगा। लेकिन हम तो सब शिक्षित लोग हैं, हम तो सब जानते हैं, हम तो सब शास्त्रों से भरे हैं। यही तो पीड़ा है, यही तो कठिनाई है; यही तो बड़ी बाधा है।
एक जगह मैं गया था, एक छोटे बच्चों का अनाथालय था। और वहां मुझे उन्होंने कहा कि हम इन्हें धर्म की शिक्षा देते हैं। मैं थोड़ा चौंक जाता हूं जब कोई कहता है कि धर्म की शिक्षा, फिर पीछे शिक्षा आयोग बैठा हुआ है, उन्होंने मुझे बुलाया, कुछ गलती से बुला लिया होगा। वह धर्म की शिक्षा देने के लिए विचार करते थे, मुझे भी भूल से उन्होंने बुला लिया। वे कहने लगे कि धर्म की कैसे शिक्षा दी जाए, यह आप बताइए? मैंने कहाः मैं तो यह

चाहता हूं कि धर्म की जितनी भी शिक्षा चल रही है, वह छीन ली जाए। दुनिया में सारे लोगों के मस्तिष्कों से धर्म अलग कर दिए जाएं, मस्तिष्क मुक्त हो। मनुष्य सोच सके इसकी कृपा करें। पर वो तो विचार करने बैठे थे कि गीता कैसे पढ़ाई जाए स्कूल में, कुरान कैसे पढ़ाया जाए, और अल्लाह-ईश्वर तेरे नाम यह कैसे जपवाया जाए। वह तो इसको विचार करने बैठे थे। वे बहुत परेशान हुए। वे बोले कि आप तो बहुत गड़बड़ आदमी हैं, मैंने उनसे कहा कि मैं गड़बड़ हूं अगर, और अगर आप ठीक हैं तो फिर ठीक है, फिर यह दुनिया गड़बड़ नहीं होनी चाहिए; लेकिन जिसको आप धर्म की शिक्षा कह रहे हैं, वह हजारों साल से दी जा रही है। वे किताबें और वे ग्रंथ और बातों हजारों साल से लोगों को रटाई जा रही हैं, दुनिया इससे बदतर और क्या हो सकती है, जो है। इससे ज्यादा करप्टेड, इससे ज्यादा सड़ी हुई, कोई समाज, कोई संस्कृति, कोई सभ्यता हो सकती है, जो हमारी है। पांच हजार साल के बाद हम कीड़े-मकोडों की तरह जी रहे हैं, पांच हजार साल की शिक्षा के बाद भी वही हिंसा, वही घृणा, वही एक-दूसरे की छाती पर छुरा भोंक देने की इच्छा, वही सब हममे मौजूद है, उससे कोई फर्क नहीं पड़ा। अब मनुष्य वैसे का वैसा है। और फिर भी आप खयाल करते हैं और शिक्षा दें, और गीता पिलाएं, और कुरान, और बाइबिल और इनको सिखाएं। और बहुत आश्चर्यजनक है। उस बच्चों के स्कूल में मैं गया। वहां भी मैं परेशान हुआ। उन्होंने कहाः हम धर्म की शिक्षा देते हैं। मैंने कहाः यह बात ही अजीब लगती है, फिर भी मैं समझूं क्या शिक्षा देते हैं? उन्होंने कहाः हम बच्चों को सब बातें सिखाते हैं, आप कुछ भी पूछिए ये उत्तर देंगे। मैंने कहाः आप ही पूछें, मैं सुनूंगा।
उन्होंने पूछाः आत्मा है?
उन सारे बच्चों ने हाथ उठा दिए कि है।
छोटे-छोटे बच्चे, मुझे बड़ी दया मालूम होने लगी, यह तो बड़ा अनाचार हो गया। छोटे-छोटे बच्चे जिन्हें आत्मा का कोई पता नहीं, वे कहने लगे--है। ये बूढ़े हो जाएंगे और हाथ इनके ऐसे ही हिलते रहेंगे और ये कहेंगे--है। और इन्हें कुछ भी पता नहीं, इन्हें कुछ भी पता नहीं। वह बचपन में सिखाया गया खयाल, बुढ़ापे तक हाथ हिलाते रहेंगे कि है। जब भी कोई सवाल करेगा ये हाथ उठा देंगे।
उन बच्चों को देखता हूं, आपको देखता हूं, कोई बहुत फर्क थोड़े ही पाता हूं।
तो मैंने उनसे कहाः यह आत्मा कहां है?
उन सारे बच्चों ने हृदय पर हाथ रख दिया, उन्होंने कहाः यहां है। मैंने
एक छोटे से बच्चे से पूछाः क्या तुम्हें पता है कि हृदय कहां है? उसने कहाः यह तो हमें बताया नहीं गया।
हम भी अगर आपसे पूछें, आत्मा कहां है? आपके हाथ उठेंगे और हृदय पर चले जाएंगे। आप जानते हैं, इसको मनोवैज्ञानिक कंडीशंड रिफ्लेक्स कहते हैं। पावलफ नाम का विचारक हुआ रूस में। उसने कुत्तों पर बड़े प्रयोग किए।
वह कुत्तों को खाना, अगर आपके पास भी कुत्ते हैं, कई के पास होंगे, पश्चिम के प्रभाव में कई के पास आ गए हैं। आदमी से नाता टूटता जाता है, कुत्ते से जुड़ता जाता है। तो पावलफ के पास बहुत कुत्ते थे, तो खाना देता था। खाना रखते से उनके मुंह से लार टपकने लगती थी, पावलफ ने एक काम किया जब खाना देता था, तब ही घंटी भी बजाता था। खाना चलता घंटी बजती, कुत्तों के मन में घंटी और खाने के बीच संबंध जुड़ गया। कुछ दिन ऐसे ही चला, महीने-दो महीने, फिर पावलफ ने रोटी देनी बंद कर दी, सिर्फ घंटी बजाई। कुत्तों की लार टपकने लगी। यह है कंडीशंड रिफ्लेक्स। एक आदत हो गई।
आपसे पूछें आत्मा है? आप कहते हैं--है। सिर हिल जाता है, यह कंडीशन रिफ्लेक्स है, यह कुत्ते-घंटी की आवाज पर लार टपका रहे हैं। आपसे पूछें, आत्मा कहां है, हाथ यहां चला जाता है, यह कंडीशन रिफ्लेक्स है, यह केवल एक आदत है जो बार-बार दोहराने से पैदा हो जाती है। इसमें कोई मामला नहीं है, यह कोई ज्ञान नहीं है। आपके मन में उठता है कि परमात्मा तो ऊ पर आकाश की तरफ देखने लगते हैं, आप पागल हो गए हैं, परमात्मा छप्पर की तरफ है? कि नीचे है कि आस-पास है, लेकिन जब भी कोई आदमी प्रार्थना करता है तो ऊ पर की तरफ

हाथ उठाता है। यह कंडीशन रिफ्लेक्स है, यह खयाल बिठा दिया गया है दिमाग में कि परमात्मा ऊपर है। क्यों? नीचे क्यों नहीं है? दाएं-बाएं क्यों नहीं है, ऊपर क्यों है? एक मुसलमान है तो वह काबा की तरफ हाथ जोड़ कर खडा हो जाता है, एक हिंदू है तो सूरज की तरफ हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता है। तो यह सब कंडीशन रिफ्लेक्स है, सिखाई गई बातें हैं। यह कोई ज्ञान नहीं है। स्मृति में कुछ बातें डाली जा सकती हैं, बैठाई जा सकती हैं। बैठ जाने पर वे सक्रिय हो जाती हैं। और फिर व्यक्ति उन्हीं के घेरे में जीवन भर घूमता रहता है, उनसे कभी मुक्त नहीं हो पाता।
धर्म का ज्ञान, धर्म का अनुभव किन्हीं की शिक्षाओं से नहीं होता, वरन सबकी शिक्षाएं छोड़ देने से होता है, सबके शास्त्र भूल जाने से होता है। जो भी सीखा है, उसे अनलर्न करना होता है, उसे भूलना होता है, उसे छोड़ना होता है। मेरे पास लोग आते हैं, वे पूछते हैं कि क्या करें? मैं कहता हूं कृपा करें, कुछ थोड़े भूलने की कृपा करें। कुछ दया करें, थोड़ा भूलें, आप काफी जानते हैं, इस जानने को थोड़ा छोड़ें। थोड़े अज्ञानी बनें। थोड़ा ज्ञान से मुक्त हों। अज्ञान बड़ी अदभुत बात है, ज्ञान नहीं। क्योंकि झूठा ज्ञान, जो वस्तुतः आपने नहीं जाना है, वही सुसाइडल सिद्ध होगा। वही आत्मघाति सिद्ध होगा। नहीं छोड़े उस ज्ञान को जो आपने नहीं? जाना, कभी किसी क्षण में विचार करते हैं किसी एकांत क्षण में, किसी मौन क्षण में, कभी सोचा है कि क्या मैं जानता हूं, परमात्मा, आत्मा, स्वर्ग, नरक, भाग्य, प्रारब्ध, पुनर्जन्म, क्या मैं जानता हूं? बहुत से प्रश्न इसी संबंध में हैं, कि प्रारब्ध होता है या नहीं। पुनर्जन्म होता है या नहीं? अगर भाग्य सत्य है, तो फिर हमारे करने से क्या होगा? कितनी योनियां होती हैं, चौरासी करोड़ होती हैं या कितनी होती हैं? ये सब प्रश्न हैं, थोड़ा विचार करें, इसमें से क्या आप जानते हैं? अगर मौन क्षण में थोड़ा भी समझने की कोशिश की तो ख्याल में आएगा यह सब सिखाया गया है, यह हमारा जानना नहीं है। फिर जो सिखाया गया है, उसको ही जानने की तरह जो ढोता है, वह बोझढो रहा है। इस बोझ को उतार दें, हलके हो जाएं।
जिसे वस्तुतः ज्ञान को पाना है, उसे सबसे पहले झूठे ज्ञान को छोड़ना पड़ता है। जिसे ज्ञान पाना है, उसे सबसे पहले झूठे ज्ञान को छोड़ना पड़ता है। सीखे हुए ज्ञान को छोड़ना पड़ता है, बड़ी पीड़ा होगी, क्योंकि अहंकार टूटेगा, जैसे कोई प्याज को छीलता हो, और एक-एक, एक-एक पर्त उसकी उखाड़ता जाता हो, ऐसे आपको लगेगा जैसे कोई हमारे अहंकार को छील रहा है, एक-एक पर्त खींच कर निकाल रहा है। और जैसे प्याज को उखाड़ते-उखाड़ते आखिर में कुछ भी हाथ नहीं आता, वैसे ही आपके ज्ञान की स्थिति है, खींचते-खींचते, देखते कौन सा मेरा ज्ञान नहीं आप छोड़ते गए, आखिर में आप पाएंगे हाथ खाली हैं, अज्ञान पूरा है, लेकिन अज्ञान का बोध विनम्रता लाता है। और थोथे ज्ञान का बोध दंभ लाता है, इसलिए पंडित से ज्यादा घना दंभ और किसी का नहीं होता। जानने वाले का दंभ कि मैं जानता हूं, मैं हू सर्वज्ञ। मैं हूं तीर्थंकर, मैं हूं पैगंबर, मैं हूं अवतार; या मैं हूं जानने वाला, यह जो "मैं" है यह जानने से भरता है। और "मैं" खतरनाक है। जितना "मैं" घना है, उतना ही आत्मा को नहीं जाना जा सकता, तो जरूरी है कि इस ज्ञान को छोड़ें, इसकी पर्तें उखाड़ें, दर्द होगा बहुत, कपड़े उतारने जैसा नहीं, चमड़ी उतारने जैसा दर्द होगा।
कपड़े तो हम रोज बदल लेते हैं, चमड़ी भी रोज बदलती जाती है, हमें पता नहीं चलता। जो चमड़ी आपके पिछले वर्ष थी, इस वर्ष नहीं है। और सात वर्षों में तो सब बदल जाता है, आदमी का सब सामान बदल जाता है। वह भी बदल रही है, लेकिन मन की जो खोलें हैं, वो नहीं बदलतीं। उनको उखाड़ना बड़ी पीड़ा होगी, जैसे हमारे प्राण ही छीने जा रहे हैं। क्यों? क्योंकि थोथा अज्ञान हटेगा, तो भीतर डर लगेगा कि मैं तो अज्ञानी हूं, अज्ञानी होने में भय मालूम होगा। लेकिन इस भय को सहना ही साहस है। और सत्य के लिए साहस की परीक्षा चुकानी पड़ती है। जो अज्ञान में खड़ा हो जाए, जिसे यह स्पष्ट दिखाई पड़ने लगे कि मैं कुछ भी नहीं जानता, जिसे यह स्पष्ट दिखाई पड़ने लगे कि ये आवाजें दूसरों की हैं, जो मेरे भीतर गूंज रही हैं, मैं केवल इको कर रहा हूं, प्रतिध्वनि कर रहा हूं। जैसे पहाड़ के पास कोई चिल्लाए।

हम एक पहाड़ के पास गए, कुछ मित्र मेरे साथ थे, वैन मेरे साथ थी। उन्होंने जोर से कोयल की आवाज की तो पहाड़ से कोयल की आवाज आई। फिर हम लौटने लगे, तो उन्होंने कितनी अदभुत पहाड़ी थी, मैंने उनसे कहा कि हर आदमी ऐसा ही है। दूसरों की आवाजें हैं, हम तो ईकोइंग पॉइंट हैं। हम तो दोहराते हैं। कृष्ण ने गीता कही होगी और हम, हम इको कर रहे हैं, प्रतिध्वनि कर रहे हैं। महावीर ने वचन कहे होंगे हम इको कर रहे हैं। क्राइस्ट ने कुछ कहा होगा, हम इको कर रहे हैं। हम दोहरा रहे हैं। हमारे होने की जरूरत क्या है, ये पहाड़ियां काफी हैं, दोहराने को। हमारे होने की कौनसी आवश्यकता है, हमारी कोई अपनी निज सत्ता ही नहीं है, हम केवल दोहराने वाले हैं। सुबह से उठकर अखबार दोहराते हैं। वह आजकल की गीता है, वह पुरानी गीता है। फिर कुछ और दोहराते हैं, फिर रेडियो सुनते हैं, और दिन-रात दोहरते हैं, और जानना, जानना रत्ती भर भी नहीं है। ज्ञान के लिए अज्ञान में खड़ा होना जरूरी है। सारे थोथे ज्ञान को छोड़ देना जरूरी है। फिर क्या होगा? मुझसे लोग पूछते हैं फिर क्या होगा, जब हम अज्ञान में खड़े हो जायेंगे? कभी आपने आग में खड़े होकर देखा, क्या होगा यदि आपको आग में खड़ा कर दिया जाए? आप पूछेंगे मुझसे, अगर आपको आग में खड़ा कर दिया जाए, आप मुझसे पूछेंगे कि क्या होगा? नहीं पूछने की आपको फुरसत नहीं होगी, आप कूदेंगे और आग के बाहर हो जाएंगे। अज्ञान की अग्नि और भी ज्यादा पीड़ादायी है। और भी ज्यादा पीड़ादायी, और भी ज्यादा जलाने वाली। लेकिन थोथा ज्ञान बचाए रखता है उस पीड़ा से। अज्ञान में खड़े हो जाएं और देखें आपमें एक क्रांति घटित होगी। जिस दिन आप समस्त इस थोथे ज्ञान को जान पायेंगे कि मेरा नहीं है, यह सब घंटी बजी और लार टपकी वाला ज्ञान है, यह ज्ञान मेरा नहीं, यह सीखा हुआ है। यह लर्निंग है, नॉलेज नहीं। यह मेमोरी है, स्मृति है, ज्ञान नहीं। जिस दिन आपको लगेगा आप अज्ञान में खड़े होंगे और अज्ञान में खड़े होने से बड़ी कोई पीड़ा नहीं है, और वह पीड़ा आपके भीतर शक्ति को जन्म देती है, वह चैलेंज बन जाती है, चुनौती बन जाती है कि अब मैं कुछ करूं। तब फिर आप ऐसे प्रश्न नहीं पूछेंगे कि चौरासी करोड़ योनियां होती हैं या नहीं? आदमी मर जाता है तो कितनी देर जिंदा रहता है और फिर स्वर्ग जाता है कि नरक जाता है? कितनी देर रुकता है और फिर नया जन्म होता है? फिर ये आपके प्रश्न न होंगे। तब आपकी समस्या कुछ और होगी। कुछ और।
मैंने सुना है तिब्बत में था एक मिलरेपा नाम का एक फकीर। एक व्यक्ति उसके पास गया, रिवाज था कि जो भी जाए वह तीन बार परिक्रमा करे गुरु की फिर तीन बार नमस्कार करे झुक कर, फिर निवेदन करे समय पाकर अपने प्रश्न को। बहुत से शिष्य इकट्ठे थे, एक नया शिष्य पहुंचा मारपा, उसने न तो तीन चक्कर लगाए मिलारेपा के, न तीन बार झुक कर प्रणाम किया। गया जोर से गुरु के कंधे पकड़ लिए और कहा कि मुझे कुछ पूछना है। गुरु ने कहाः कैसे नासमझ हो? कैसे अशिष्ट? तुम्हें यह भी पता नहीं अभी मैं दूसरों को उत्तर दे रहा हूं। तुम्हें यह भी पता नहीं कि तीन परिक्रमा लगानी चाहिएं, तीन बार प्रणाम करना चाहिए? उसने कहा सब मुझे पता है, लेकिन जो आग में खड़ा हो वह औपचारिकता नहीं निभा सकता। मैं बाद में परिक्रमा लगा लूंगा, तीन की जगह तीन सौ और तीन सौ बार पैर पड़ लूंगा, लेकिन कृपा करें अभी मुझे कुछ पूछना है, उसकी बात कर लें। क्योंकि आप भी शायद मुझे विश्वास न दिला सकेंगे कि अगर तीन चक्कर लगाते वक्त मैं मर गया, बिना जाने तो जिम्मा किसका होगा, मेरा या आपका?
और अगर तीन बार पैर पड़ते वक्त मैं समाप्त हो गया, और मेरी श्वास टूट गई, और मैं बिना जाने मर गया तो कौन होगा इसका जिम्मेवार मैं या आप? मिलरेपा ने कहा, ऐसे लोग मुश्किल से आते हैं, जो आग से घिरे हों। और जब कोई ऐसा व्यक्ति आता है, जिसमें ऐसी प्यास हो, ऐसी पीड़ा हो तो असल में उसे किसी के पास आने की जरूरत ही नहीं, उसकी पीड़ा ही, उसकी प्यास ही उसके लिए द्वार बन जाएगी। जब कोई प्यासा होता है, तो सरोवर की तरफ खोज अपने आप शुरू हो जाती है। घने जंगल होते हैं, दरख्त बहुत लंबे होते हैं वहां, क्यों, क्योंकि घने जंगल में अगर सूर्य की रोशनी पानी है तो दरख्त को अपने सारे प्राणों की शक्ति इकट्ठा करके, ऊपर उठना होता है। उसे अपनी जड़ें बहुत गहरे भेजनी होती हैं, तब वह पानी उपलब्ध कर पाता है। घने जंगल होते हैं, दरख्त

बड़े हो जाते हैं, घने जंगल न हों, दरख्त छोटे हो जाते हैं। पीड़ा घनी हो, तो प्राणों का संकल्प बहुत ऊंचा उठने लगता है। और पीड़ा तीव्र हो तो प्राणों की जड़ें बहुत गहरी बैठने लगती हैं। और पीड़ा ही न हो, केवल बातचीत हो, कौतुहल हो, जैसे हम पूछते हैं कि कौन सा अभिनेता सबसे अच्छा, वैसे ही हम पूछते हैं कौन सा भगवान सबसे अच्छा है? कृष्ण कि महावीर या बुद्ध कि कौन? जैसे हम पूछते हैं कि आज बाजार में चावल के कितने भाव हो गए। ऐसे ही हम पूछते हैं कि यह गीता ठीक कि बाइबिल? कि पुनर्जन्म होता है कि नहीं होता? ये हमारे कौतुहल हैं, क्युरेसिटीज हैं। यह हमारी प्यास और अभीप्सा नहीं है। तो मैं आपको कहूं किसी की शिक्षा ज्ञान नहीं देगी, सबकी शिक्षा छोड़ देने से अज्ञान का अनुभव होगा, अज्ञान का अनुभव छलांग का बिंदु बन जाता है। इस पर हम और बाद में विचार करें।

दो-एक प्रश्न और हैं, जो भी ऐसे ही हैं।
उन्होंने पूछा हैः ज्ञान क्या है?

मैं समझता हूं उनको भी मैंने जो कहा, खयाल आया होगा।
उन्होंने यह भी पूछा है कि शिक्षा-पद्धति हमारी आज की क्या ज्ञान देती है?

उनको मेरी बात खयाल में आई होगी, कोई शिक्षा-पद्धति ज्ञान नहीं दे सकती।

इसी संबंध में पूछा है कि हरेक चीज सीखनी पड़ती है--खाना, कपड़ा पहनना मां सिखाती है, अक्षर लिखना-पढ़ना सीखना पड़ता है, क्या उसी तरह सदाचार भी बिना सीखे कैसे मिल सकेगा? उसे भी सीखना पड़ेगा?

हमें ऐसा जरूर लगता है कि सब-कुछ तो हमें सीखना पड़ता है, तो फिर धर्म
भी हम सीखेंगे। क्या कभी खयाल किया, रोटी खाना सीखा आपने? कपड़े पहनना सीखा? बहुत सी और बातें सीखीं, प्रेम सीखा या नहीं सीखा? कोई है एकाध जिसने प्रेम सीखा हो? और अगर कोई होगा तो लोग हसेंगे कि ये अभिनेता है। अभिनेता भर प्रेम सीखते हैं, और तो कोई प्रेम सीखता नहीं। प्रेम उत्पन्न होता है, सीखा नहीं जाता। और सीख लिया जाए तो सीखा होने की वजह से ही झूठा हो जाता है। दुनिया में अब खतरे हैं, प्रेम भी सीख लिए जाने के। क्योंकि बहुत अभिनेता हैं, उनका बहुत प्रदर्शन है, दूसरे भी उनकी नकल में पड़े हैं, बहुत डर है इस बात का कि थोड़े दिनों में सारी जमीन, सारी पृथ्वी पर अभिनेता ही अभिनेता ही रह जायें, और तब बड़ा खतरा पैदा होगा। खतरा पैदा यह होगा कि वो प्रेम भी सीखा हुआ करेंगे।
मैंने सुना है कि कुछ मुल्कों में कुछ संस्थाएं नई-नई खोली गई हैं, जहां वे प्रेम की भी शिक्षा देते हैं। हो सकता है कि कभी हम भी सीखें, यहां भी शिक्षा शुरू हो। करनी पड़ेगी। क्योंकि हमें लगता है कि सब चीजें सीखी जाती हैं। फिर प्रेम क्यों न सीखा जाए? जरूर सीखा हुआ प्रेम बड़ा व्यवस्थित होगा। सीखा हुआ प्रेम, उसके डायलॉग, उसकी बातचीत सब बड़ी सुमधुर होगी। हो सकता है बातचीत कम हो और गीत ज्यादा हों। क्योंकि गीत सीखे जा सकते हैं और गाए जा सकते हैं। और सारी चीजें बंधी होंगी, नियमित होंगी, समय पर होंगी, सब चीजें जिसको हम कहें नियमबद्धता में होंगी। लेकिन प्रेम बचेगा क्या? इस सब उपद्रव में प्रेम के तो प्राण कभी के निकल जाएंगे। हम हंसते हैं प्रेम के सीखने पर। लेकिन आपने खयाल किया प्रार्थना आप सीखी हुई करते हैं। अगर प्रेम नहीं सीखा जा सकता तो प्रार्थना कैसे सीखी जा सकती है? प्रार्थना प्रेम का ही तो विकसित रूप है। जो व्यक्ति और व्यक्ति के बीच प्रेम है, वही व्यक्ति और समष्टि के बीच प्रार्थना है। जो मेरे और आपके बीच प्रेम है, वही मेरे और समस्त के बीच प्रार्थना है। तो प्रेम का ही तो विकसित और परम रूप प्रार्थना है। लेकि न प्रार्थना तो हम सीखते हैं, प्रेम हम नहीं सीखते। इसी वजह से प्रेम तो सच्चा होता है, प्रार्थना झूठी हो

जाती है। ऐसी भी प्रार्थना है, जो बिना सीखी पैदा होती है, उसकी ही मैं बात कर रहा हूं। ऐसा भी धर्म है जो बिना सीखा पैदा होता है, जिसे उघाड़ना होता है। और तब वह प्रेम की भांति सरल होता है, सहज होता है, स्पांटेनियस होता है, सहज स्फूर्त होता है। और तब उसकी बात ही और है। तब वह पूरे जीवन को बदल जाता है। तब वह पूरे जीवन को स्वर्ण-किरणों से भर देता है। तब व पूरे जीवन को अमृत की वर्षा से भर देता है। जो जागता है प्रेम वही, जो जागती है प्रार्थना वही, जो धर्म आविष्कृत करना होता है, स्वयं में वही।
धर्म सीखा नहीं जाता। स्मरण रखें, जो भी श्रेष्ठ है वह सीखा नहीं जाता। जो भी सीख लिया जाए, सीखने के कारण ही मैकेनिकल हो जाता है। श्रेष्ठ नहीं रह जाता। जो भी श्रेष्ठ है, सुंदर है, शिव है, सत्य है, वह सीखा नहीं जाता। उसके लिए कुछ और करना होता है, कुछ और, कुछ और का मतलब है उसके लिए अपने को उघाड़ना पड़ता है, खोलना पड़ता है।
जैसे हम यहा बैठे हैं, सुबह हो सूरज उगे, दरवाजे बंद हों और हम जाएं बाहर और पोटलियों में प्रकाश को भर-भर कर भीतर लाएं तो क्या होगा? पोटलियां अंदर आ जाएंगी प्रकाश बाहर रह जाएगा। प्रकाश को ऐसे नहीं लाना होता भर-भर कर उसके लिए तो द्वार खोल देने होते हैं, प्रकाश भीतर आ जाता है। ठीक ऐसे ही कुछ भीतर नहीं भरना होता है, प्रेम या प्रार्थना के जन्म के लिए, बल्कि भीतर के सब हृदय के द्वार खोल देने होते हैं। सब भांति मन को उघाड़ देना होता है, सब दीवालें गिरा देनी होती है और तब हम पाते हैं हम समस्त से संयुक्त हो गए हैं। और प्राणो में एक उर्जा पैदा होती है, एक आकर्षण, एक प्रवाह जो हमने कभी नहीं जाना, वही है प्रेम, वही है प्रार्थना, वही है परमात्मा। लेकिन उसके लिए कुछ सीखना नहीं, सीखे हुए को अलग करना है। जैसे किसी दर्पण पर धूल जम जाए तो हम क्या करेंगे? हम करेंगे धूल को हटा देंगे ताकि दर्पण निखर जाए, वैसे ही जो हमने सीख लिया है, वह धूल की भांति हमारे चित्त के दर्पण को पकड़ लेता है; इस धूल को हटा देना है, ताकि दर्पण साफ हो जाए।
जैसे कि मैं अभी आपकी नदी के करीब से निकला, तो दूर-दूर तक हरियाली ने आपकी सारी नदी को ढाक लिया है, अब अगर नदी को लाना हो तो क्या करेंगे, पानी डालेंगे नदी में? क्या करेंगे? नहीं उस हरियाली को अलग करना होगा, पानी नीचे मौजूद है। हरियाली हटाएंगे और पानी के दर्शन शुरु हो जाएंगे। ठीक वैसे ही हमारा चित्त जीवन की यात्रा में बहुत सा कूड़ा-करकट इकट्ठा कर लेता है। जैसे कि हम दिन भर किसी रास्ते पर पैदल चलें तो बहुत सी धूल इकट्ठी हो जाती है। जाते ही स्नान करते हैं, धूल को झाड़ देते हैं, लेकिन जिंदगी में हम कभी स्नान नहीं करते, मन का कभी स्नान नहीं होता, धूल जमती जाती है, जमती जाती है, रोज-रोज जमती जाती है, मन का दर्पण ढकता जाता है, ढकता जाता है, शिक्षा और संस्कार और समाज, और प्रोपेगेंडा, और संप्रदाय सब इकट्ठे होते जाते हैं, गीता और समाचार और रेडियो और सिनेमा सब बैठते चले जाते हैं और मन की झील पर काईं की पर्तों की पर्तें जम जाती हैं, काईं ही काईं दिखाई पड़ती है, मन के कहीं दर्पण का पता ही नहीं चलता। इस सबको उखाड़ना है। इस सबको छांट कर अलग कर देना है।
जिस दिन चेतना, मात्र चेतना की भांति रहती है, और सब अलग हट जाता है, उसी दिन आप पाते हैं कि वह आंख मिल गई, जो देखती है। वे प्राण मिल गए जो प्रेम करते हैं। वह ऊर्जा उपलब्ध हो गई, जो प्रार्थना बन जाती है। सत्य को या परमात्मा को खोदना है अपने भीतर, सीखना नहीं है। कहीं से लाना नहीं है, बल्कि कहीं से जो बहुत कुछ आ गया है, अलग कर देना है। परमात्मा कोई बाहर से आने वाला मेहमान नहीं है, घर के भीतर ही खो गया अपना ही कोई परिचित है। कोई बाहर से आने वाला अपरिचित नहीं, घर के ही भीतर खो गया कोई अपना ही आदमी, बल्कि हमारी स्वयं की सत्ता है।
इसलिए यह जो सीखने का खयाल है, गलत है, इस सीखने ने ही नुकसान पहुंचाया है। सीखने से मुक्त हो जाए तो मनुष्य में ज्ञान की तरफ, ज्ञान की उन्मुकता और ज्ञान के द्वार खुलने शुरु हो जाते हैं।

एक प्रश्न और आपसे अभी चर्चा कर लूं।

पूछा है कि हम जैसे शांति पाना जानते हैं, वह क्या वास्तव में शांति नहीं है, क्या उस शांति में भी अशांति है?

निश्चित ही। आप शांति पाना चाहते हैं, यही तो अशांति का लक्षण है। आप शांति पाना चाहते हैं, यह अशांत मन का लक्षण है। शांत मन तो शांति नहीं पाना चाहेगा। उसे पता भी नहीं चलेगा कि शांति पानी है। शांति खोजनी है। जितने ज्यादा अशांत लोग होते हैं, उतने ज्यादा अशांति की खोज शुरू हो जाती है। लेकिन अशांत मन शांति को कैसे खोजेगा, यही तो कंट्राडिक्शन है। अशांत मन कैसे शांति को खोजेगा? अंधेरा प्रकाश को खोजने चला जाए, तो कैसे पाएगा? अशांत मन कभी शांति को नहीं पा सकता। मेरे पास लोग आते हैं, वे कहते हैं हमें शांति पानी है, मैं उनसे कहता हूं आप कहीं और जाएं। क्योंकि मैं यह नहीं बता सकता कि शांति कैसे पाई जाए, मैं यह बता सकता हूं कि अशांति कैसे छोड़ी जाए। मत खोजिए शांति को, खोजिए अशांति को, वह आपका तथ्य है। आप अशांत हैं, तो अशांति आपका तथ्य है, वह आपकी वास्तविकता है। इस अशांति को खोजिए, समझिए क्या है? क्यों है? कौन से कारण हैं? अकारण तो नहीं है ना कुछ? शांति-अशांति जो भी है, कोई कारण होगा।
एक डाक्टर के पास आप जाएं, और कहें मुझे स्वास्थ्य चाहिए तो वह क्या करेगा? वह कहेगा आप कहीं और जाएं, हम तो बीमारियों को मिटाते हैं, स्वास्थ्य नहीं देते। स्वास्थ्य देने वाला कोई डाक्टर कभी हुआ ही नहीं। बीमारी जरूर मिटाई जा सकती है, बीमारी मिट जाए तो जो शेष रह जाता है, उसका नाम स्वास्थ्य है। अशांति मिट जाए तो जो शेष रह जाता है उसका नाम शांति है। अशांत मन शांति को नहीं खोजता, न खोज सकता है। अशांत मन को अपनी अशांति समझनी चाहिए। अशांति के कारण समझने चाहिए, कॉ.जेलिटी समझनी चाहिए, पूरी वजह समझनी चाहिए क्यों यह अशांति है?
एक व्यक्ति मेरे पास आए, मुझसे उन्होंने कहा कि मैं दूर से आ रहा हूं। किसी ने कहा कि मैं आपके पास जाऊं मेरा मन बहुत अशांत है। तो मुझे शांति चाहिए, मैं इस आश्रम में गया, उस आश्रम में गया, पांडिचेरी या गया, अरुणाचल गया, शिवानंद के गया, यहां-वहां न मालूम। मैंने कहाः बहुत दुकानों पर आप घूम आए, अब मेरी दुकान पर आए हैं। कहीं-कहीं कोई बिकती है शांति। उन लोगों ने क्या कहा आपसे? किसी ने कहा, राम-राम जपो; किसी ने कहा, माला फेरो; किसी ने कहा, सब भगवान पर छोड़ दो, भाग्य है, सब होता है। सब ठीक हो जाएगा, उस पर छोड़ने से सब ठीक हो जाएगा। मैंने कहा, मैं मुश्किल में हूं, मैं आपको कोई उपाय नहीं बता सकता। लेकिन हां, कोई डाइग्नोसिस हो सकती है, कोई निदान हो सकता है, उपाय नहीं। उपचार की मेरी संभावना नहीं है, न सुविधा है। न मैं समझता हूं कि उपचार संभव है। हां निदान हो सकता है। विचार हम कर सकते हैं। तो मैंने कहा बेहतर है आप रुक जाएं। अपने मन की बातें मुझसे कहें। रुक
गए धीरे-धीरे एक-दो दिन में थोडी मैत्री बनी, तो उन्होंने अपने मन की बातें कहनी शुरु कीं। अशांति थी कि उनके लड़के ने एक ऐसी लड़की से विवाह कर लिया, जो उनकी जात की नहीं है। अशांति थी, कि उनकी पत्नी यद्यपि अब वो बूढ़े हो गए, अब भी उनकी आज्ञा नहीं मानती। अशांति थी कि मरने के बाद क्या होगा? क्योंकि वह बड़े ठेकेदार हैं और जिंदगी में बहुत पाप किया है। अशांति थी कि राम-राम बहुत दिन जपते हो गए, अभी तक राम के दर्शन नहीं हुए। ये सब अशांतियां थीं और बहुत अशांतियां थी, इन सबको सुन कर हमें हंसी आती है। आपकी अशांति कोई दूसरी तरह की है? बहुत गौर से देखेंगे तो अशांतियां बहुत दूसरी तरह की नहीं हैं? मैंने उनसे कहा कि इन अशांतियों से समझिए, दूसरे को सुनाऊंगा आपकी अशांतियां तो वह हंसेगा और आप गंभीर होकर बैठे हैं, आप भी हंसिए। समझिए थोड़ा आपको भी हंसी आएगी। लड़कियों की और लड़कों की भी कोई जात होती है? प्रेम भी कोई जाति देखता है? लड़की में कोई खराबी है, जिससे आपके लड़के ने विवाह कर लिया है? नहीं खराबी तो नहीं है, लेकिन मुझसे बिना पूछे किया। मेरी बिना आज्ञा के किया। तो मैंने कहाः थोड़ा समझिए, अशांति अहंकार की है। मेरी आज्ञा, आप सोचते हैं कि आपकी आज्ञा से आपका लड़का चलेगा। आप कल मर जाएंगे, लड़का फिर भी रहेगा, फिर क्या होगा? आप सोचते हैं आपकी आज्ञा से लड़का पैदा हुआ है? जो आपकी आज्ञा से प्रेम करेगा।

आप सोचते हैं लड़का मरने लगे, आपकी आज्ञा से बच सकता है। लड़के का अपना जीवन है, अपना व्यक्तित्व है, अपनी धारा है, आप कृपा करें उसे अपने मार्ग पर जाने दें, आप कौन हैं? क्या केवल यह संयोगवश कि आप भी कारणभूत हुए थे, उसके जगत में पैदा होने में, तो आप मालिक हो गए उसके। नहीं, प्रेम करने का हक आपको है, मालिक बनने का हक नहीं है। तो आप कृपा करें, मालिक बनें। क्रोध न करें, समझें थोड़ा, समझें और अपने मन को थोड़ा पहचाने, यह मन कैसा अहंकारग्रस्त होकर दुख और पीड़ा उठा रहा है। अगर हम अपनी सारी अशांति को समझें तो उस अशांति में हमें कारण दिखाई पड़ेंगे, और फिर अगर हमको अशांत रहना हो, तो उन कारणों को हम किए चले जाएं, और अगर हमें शांत होना हो, तो उन कारणों से थोड़ा बचें, शांति खोजने की कोई जरूरत नहीं है। अशांति को पहचानने की और खोजने की थोड़ी जरूरत है। अशांति को जाने, अशांति मिटनी शुरू हो जाएगी।
जिस दिन चित्त में कोई कारण नहीं रह जाते हैं अशांत होने के, उस दिन जो शेष रह जाती है घटना वह शांति है। अशांति के विरोध में शांति नहीं है। अशांति के अभाव में शांति है। अशांति की शत्रु शांति नहीं है, अशांति जब नहीं होती, तब जो होती है वह शांति है। अशांति से शांति का अभी तक मिलना ही नहीं हुआ, और न कभी होगा। जैसे आप सूरज से पूछें कि तुम्हारा मिलना कभी अंधेरे से हुआ? तो वह कहेगा, अभी तक तो नहीं हुआ, आप हैरान हो जाएंगे, आप रोज अंधेरे से मिलते हैं, सूरज की अभी तक मुलाकात नहीं हुई अंधेरे से। वह जहां भी जाता है, वहां अंधेरा नहीं पाता। शांति अब तक अशांति से नहीं मिली है। अशांति अब तक शांति से नहीं मिली है। तो अशांत चित्त को लेकर शांत होने चले हों तो पागल हैं। यह तो मिलना हो ही नहीं सकता, जमीन घूम आइए। अगर चित्त अशांत है तो शांति से मिलना नहीं हो सकेगा। लेकिन अशांत चित्त माला लिए बैठा है, आंख बंद किए बैठा है, राम-राम जप रहा है, गीता पढ़ रहा है, रामायण पढ़ रहा है, मंदिर में जा रहा है, तीर्थ में जा रहा है, कि शांत हो जाऊं; गुरुओं के पैर पकड़ रहा है, इस कौन से उस कौने तक गुरु बदल रहा है, सोच रहा है कि शांत हो जाऊं। इस मंदिर से उस मंदिर भाग रहा है, इस दुकान से उस दुकान यह अशांत मन कभी शांत नहीं हो सकता, न कभी हुआ है। अशांति को समझें। पहचानें, उसके वैज्ञानिक कारण को देखें। ज्ञान, कारण का ज्ञान मुक्ति लाता है, मुक्ति की सामर्थ्य लाता है। मुक्ति की सुविधा उपस्थित करता है। बोध शक्तिशाली बनाता है और फिर जब अशांति के कारण क्रमशः विलीन होने लगते हैं, तो आप पाते हैं कि शांति तो भीतर थी, अशांति लाई गई थी। शांति स्वरूप थी, अशांति थोपी गई थी। अशांति हम खोज-खोज कर घर ले आए थे, और उसकी वजह से शांति दब गई थी। जब अशांति नहीं होगी, शांति आप स्वयं हैं। सत्य आप स्वयं हैं।
वह शांति को पा सकता है, जो अज्ञान में है वह ज्ञान में प्रविष्ट हो सकता है। यह सबूत है इस बात का, बीमार होना इस बात का सबूत है कि स्वस्थ हुआ जा सकता है, केवल मुर्दे ही बीमार नहीं होते, जिंदा आदमी बीमार होता है। बीमारी सबूत है स्वस्थ्य हो जाने की संभावना का। अशांति सबूत है, शांत हुआ जा सकता है, तभी तो अशांति का बोध हो रहा है, नहीं तो अशांति का बोध भी नहीं होता। अज्ञान का बोध हो रहा है, किसी केंद्र पर ज्ञान है। प्रत्येक की संभावना है, शांत और सत्य और सुंदर को पाने की, लेकिन अगर सम्यक दिशा में प्रयोग हों तो, और अगर असम्यक दिशा में हम भटकें, तो फिर बहुत कठिन है। मैंने सुना है एक यात्री पेकिंग की तरफ जाना चाहता था। कोई पेकिंग से थोड़ा दूर होगा, दो-चार, दस मील, उसने एक राहगीर से पूछा कि पेकिंग कितनी दूर है? उस राहगीर ने कहाः जिस तरफ तुम्हारा मुंह है अगर उसी तरफ चले जाओ तो पूरी जमीन पर चक्कर मारने के बाद पेकिंग आएगा। और अगर कृपा करो, जिस तरफ तुम्हारी पीठ है, उस तरफ मुंह कर लो, तो पेकिंग केवल तीन मील के फासले पर है। तो शांति कितनी दूर है? जिस तरफ आपका मुंह है, अगर उस तरफ ही चले जाएं तो वह जो चौरासी करोड़ योनियों का प्रश्न पूछा है, चौरासी करोड़ योनियों का चक्कर मार कर भी पेकिंग नहीं आएगा। और अगर मुंह फेर लें, तो पेकिंग तीन मील के फासले पर भी नहीं है। आप पेकिंग में ही खड़े हैं। आप वहीं हैं जहां पेकिंग है। आप वहीं है जहां सत्य है।

मेरी बातों को इतने प्रेम से सुना, उसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

स्वयं की सत्ता
चौथा प्रवचन

छोड़ें दौड़ और देखें

मेरे प्रिय आत्मन्!
किस संबंध में आपसे बात करूं यह सोचता था, तो शायद क्या है कि आपके धर्म के दिन चल रहे हैं, हालांकि जिन लोगों के भी धर्म के दिन अलग और अधर्म के दिन अलग होते हैं, उनके जीवन में कोई धर्म के दिन नहीं होते। और न ही हो सकते हैं। यह कैसे संभव है? यह कैसे संभव है कि कुछ दिन धर्म के हों, बाकी दिन धर्म के न हों? यह भी कैसे संभव है कि दिन के किसी घड़ी में आदमी धार्मिक हो फिर बाकी घड़ियों में धार्मिक न हो?
धर्म ऐसी खंडित बात नहीं है।
तो चूंकि धर्म के दिन चलते हैं इसलिए सोचा धर्म के संबंध में थोड़ी सी बातें आपसे कहनी चाहिए।
धर्म के संबंध में जितनी बातें कहीं गई हैं, उतनी और किसी संबंध में नहीं कही गई। और जितने ग्रंथ लिखे गए हैं, जितने शास्त्र लिखे गए हैं, जितने प्रवचन और जितने उपदेश धर्म के संबंध में होते हैं और किसी संबंध में नहीं होते हैं। और मनुष्य-जाति ने अपने मस्तिष्क का, अपनी बुद्धि का और विचारों का जितना श्रम और शक्ति धर्म के लिए खर्च की है और किस बात के लिए खर्च की है?
लेकिन बड़ा आश्चर्य है कि आदमी अधार्मिक का अधार्मिक ही है। इस सबसे कोई फर्क नहीं पड़ा। इस सबसे कोई अंतर नहीं आया। पांच हजार साल का श्रम करीब-करीब मिट्टी में गया है। इसे कहने में कोई संकोच की जरूरत नहीं है। इधर पांच हजार साल में तो हमें ज्ञात है कि धर्म के संबंध में बहुत चिंतन और मनन हुआ लेकिन परिणाम क्या है? यह मनुष्य तो वैसा का वैसा है, इसके भीतर कोई बुनियादी क्रांति, कोई परिवर्तन, कुछ भी नहीं हुआ। हां, अच्छी-अच्छी बातें हम जरूर सीख गए हैं। और हमने बहुत मंदिर बना लिए हैं, बहुत शास्त्र रच लिए हैं, बहुत से संप्रदाय खड़े कर लिए हैं। इन संप्रदायों, इन शास्त्रों और मंदिरों के कारण मुसीबत कम नहीं हुई और बढ़ गई है। क्योंकि ये सब शास्त्र आपस में लड़ते हैं, ये सब मंदिर आपस में लड़ते हैं, ये सब पंडित, पुरोहित आपस में लड़ते हैं। और इनके लड़ने की वजह से मनुष्य को खंडित करते हैं--हत्या होती है, हिंसा होती है और सारी दुनिया में मनुष्य मनुष्य के बीच वैमनस्य पैदा होता है।
यह आश्चर्य की बात है। आश्चर्य की इसलिए कि अगर धर्म सचमुच आया होता,
तो दुनिया में इतने धर्म कैसे हो सकते थे? एक ही धर्म होता। एक ही हो सकता है। अगर धर्म वस्तुतः आया होता, तो एक ही धर्म होता। ये जैन, हिंदू, मुसलमान, ईसाई कैसे हो सकते थे? लेकिन धर्म तो नहीं है, हिंदू हैं, जैन हैं, ईसाई हैं, मुसलमान हैं और न मालूम कौन-कौन हैं।
मैं आपसे कहूं कि जो आदमी भी हिंदू है, जैन है, ईसाई है, इसी कारण से वह आदमी धार्मिक नहीं हो सकता है। यह बाधा है। धर्म है असीम और अनंत। उस पर कोई भी सीमा बाधा है। उस पर कोई भी विशेषण बाधा है। क्या कभी आपने सोचा कि कोई अगर कहे कि मैं हिंदू प्रेम करता हूं, कोई कहे मैं मुसलमान प्रेम करता हूं, कोई कहे मैं जैन प्रेम करता हूं, कहेंगे यह पागल है। क्योंकि प्रेम तो बस प्रेम होता है, उस पर कोई सीमा नहीं होती।
कोई कहे कि मैं हिंदू सत्य बोलता हूं, कोई कहे मैं जैन सत्य बोलता हूं
तो हैरान होंगे कि सत्य भी हिंदू और जैन कैसे हो सकता है? सत्य तो बस सत्य ही होगा। तो धर्म कैसे हो सकता है हिंदू और मुसलमान? जब प्रेम नहीं हो सकता, सत्य नहीं हो सकता, दया नहीं हो सकती, करुणा नहीं हो सकती तो धर्म कैसे हो सकता है? धर्म क्या इन सबसे गया बीता है? धर्म तो इन सबकी आत्मा है। धर्म तो इन सबका प्राण है। लेकिन धर्म कहीं नहीं दिखाई पड़ता, धर्मों की बहुतायत दिखाई पड़ती है। यही कारण है कि धर्मोत्सव होते हैं, धर्म दिवस आते हैं। लेकिन धर्म नहीं आता। नहीं आ सकता है। कैसे आएगा? क्या रास्ता हो सकता है? और कठिनाई यह है कि अगर धर्म नहीं आया, तो अब तक तो चल गया, आगे

नहीं चल सकेगा। अब तक तो चला। अब तक इसलिए चला क्योंकि अधर्म की ताकत बहुत कम थी, अधर्म के हाथ में लाठियां थी, तलवारें थी, अब अधर्म के हाथ में एटम है, हाइड्रोजन बम है। अब यह मरा-मरा, घिसटता हुआ धर्म नहीं चल सकता। और अगर यही चला, तो मनुष्य नहीं चल सकेगा, मनुष्य मरेगा। अधर्म के पास अब बहुत ताकत है, उसके पास असीम शक्ति है। और धर्म के नाम पर ये फिरकापरस्तियां हैं, ये छोटे-छोटे मंदिर और ये छोटे-छोटे मूर्तियों वाले लोग, और छोटी किताबों वाले लड़ने वाले लोग हैं। इनकी थोड़ी-थोड़ी संख्या है, इनके थोड़े- थोड़े संगठन हैं। आपस में इनकी लड़ाई है। अधर्म का कोई संप्रदाय नहीं है। अधर्म का कोई अलग-अलग मंदिर नहीं है, अधर्म इकट्ठा है और धर्म खंडित है और टुकड़ों में बंटा है। अधर्म की लड़ाई सीधे धर्म से है, और धर्म वालों की लड़ाई दूसरे धर्म वालों से है, तो फिर क्या होगा? तो फिर क्या होगा? यह तो स्पष्ट ही है, साफ ही है कि तथाकथित धार्मिक लोग आपस में लड़ कर अपनी सारी शक्ति नष्ट कर देते हैं। और अधर्म जीतता चला जाता है।
मैं आपसे कहूं दुनिया में अधर्म का बढ़ने का कारण अगर साधु-संन्यासी
और पंडित आपसे कहते हों कि भौतिक वाद है तो झूठ कहते हैं, दुनिया में अधर्म का बढ़ने का कारण ये धर्मों की बहुतायत है। क्योंकि ये धार्मिक लोग आपस में लड़कर अपनी शक्ति खो देते हैं। और अशुभ की शक्ति बलिष्ट से बलिष्ट होती जाती है। शुभ खंडित है, भले लोग विभाजित हैं, परमात्मा के नाम पर खड़े लोग एक दूसरे के दुश्मन हैं, शैतान के अनुयायी सब इकट्ठे हैं, एक साथ हैं उनका कोई चर्च नहीं, कोई सम्प्रदाय नहीं। इससे धर्म क्षीण होता गया है, इससे धर्म की ताकत रोज क्षीण होती चली गई है, और जब धर्म की ताकत क्षीण होती है, तो ये सारे धार्मिक लोग चिल्लाते हैं, कि जरूर भौतिकवादियों ने सब गड़बड़ किया हुआ है। ये मैटीरियलिस्ट हैं जो धर्म को नष्ट कर रहे हैं, कैसे पागल हैं आप? अगर मैटीरियलिस्ट धर्म को नष्ट कर दे तो इसका मतलब हुआ कि मैटल की ताकत आत्मा की ताकत से बलवान है, शक्तिशाली है। अगर मैटीरियलिज्म, स्प्रिचुएलिज्म को हटा कर नष्ट कर दे तो इसका मतलब क्या हुआ? इसका मतलब हुआ कि स्प्रिचुएलिज्म कमजोर है और मैटीरियलिज्म मजबूत, ताकतवर है। तो फिर ऐसे स्प्रिचुअलिज्म को लेकर हम करेंगे भी क्या, जो मैटीरियलिज्म से ही हार जाता है। ऐसी स्प्रिचुएलिज्म की जान भी कितनी है, ऐसे अध्यात्म की शक्ति भी कितनी है? नहीं यह असली कारण नहीं है, असली कारण यह है कि धर्म के नाम पर झूठा धर्म के नाम पर कुछ मिथ्या, धर्म के नाम पर कुछ असत्य को हम पकड़े हुए हैं। और उसके पकड़ने के कारण हम अधार्मिक होते हुए, अपने को धार्मिक समझने का मजा ले लेते हैं।
एक आदमी है मंदिर हो आता है और सोचता है कि धार्मिक हो गया। एक आदमी है सुबह से कोई किताब खोल लेता है, और जितनी ज्यादा पुरानी किताब हो, उतना ही वह बड़ा धार्मिक हो जाता है। उसे खोल लेता है, उसको पढ लेता है, तिलक लगा लेता है, माला डाल लेता है, कुछ और कई तरकीबें हैं, और आदमी की चालाकी बहुत है, उसने बहुत सी तरकीबें ईजाद कर ली हैं, धार्मिक होने की। वस्त्र बदल लेता है, एक ढंग से दूसरे ढंग के कपड़े पहन लेता है, यह कनिंग माइंड है। यह आदमी का बहुत चालाक दिमाग है। धोखा बहुत-बहुत तरकीब से दिया जा सकता है, खुद को। और दुनिया में कोई किसी दूसरे को धोखा नहीं देता, हम सब अपने को धोखा देते हैं।
मैं यह पूछना चाहता हूं, यह मैं आपके सामने एक प्रश्न रखना चाहता हूं आपके मनों के लिए, आपकी खोज के लिए, आपका धर्म से कौन सा संबंध है? आपके प्राणों में धर्म का कौन सा संगीत है। कौन सी जड़ है? धर्म से कौन सा लगाव है आपका। फिर मंदिर क्यों जाते हैं? फिर किसी मूर्ति के सामने सिर क्यों टेकते हैं। क्या यह एक बहुत बुनियादी रूप से नैतिक नहीं है। क्या एक डिसऑनेस्टी नहीं है? अगर नहीं है आपकी कोई श्रद्धा इन मंदिरों में नहीं है इन शास्त्रों में, क्योंकि आपका जीवन तो कहता है कि आपकी काई श्रद्धा नहीं है, हम सबका इकट्ठा जीवन तो कहता है कि धर्म से हमें कोई संबंध नहीं रहा है। लेकिन फिर भी हम मंदिर तो जाते हैं, महावीर का, कृष्ण का, राम का, जन्मदिन तो बनाते हैं, उनकी पूजा तो करते हैं। यह कैसा धोखा है, और यह धोखा

हम किसको दे रहे हैं, किसी और को नहीं, कोई आदमी किसी और को क्या धोखा देगा? हम अपने को धोखा दे रहे हैं।
कल ही मैं एक कहानी कह रहा था, कहानी कह रहा था कि इंग्लैंड में, एक बड़े महानगर में एक नाटक चल रहा था। वहां का जो सबसे बड़ा धर्म पुरोहित था, उसके भी मन में लालसा लगी थी कि नाटक को देखे, और स्मरण रखना आम आदमी से ज्यादा धर्म-ेपुरोहित के मन में लालसा होती है नाटक को देखने की, क्योंकि नाटक उसके लिए वर्जित है। और जहां वर्जना है, जहां निषेध है, वहां आकर्षण है। यहां दरवाजे पर हम लिख दें कि यहां झांकना मना है। फिर किसकी ताकत है कि बिना झांके निकल जाए। जहां निषेध है, जहां वर्जना है, जहां इनकार है कि मत झांकना, वहां झांकने का आकर्षण पैदा हो जाना बिल्कुल स्वाभाविक है। इसलिए आपके मन में भला नाटक को देखने की उतनी प्यास न जगे, लेकिन धार्मिक धर्मपुरोहित के मन में बहुत ज्यादा प्यास जगती है, उसे वर्जित है।
तो उस गांव में नाटक आया, उसकी बड़ी प्रशंसा थी, उस धर्मपुरोहित के मन में भी हुआ कि मैं नाटक देखूं, लेकिन नाटक देखना वर्जित था। साधु-संन्यासी धार्मिक लोग नाटक कैसे देख सकते हैं, भले आदमियों की चीज तो नाटक नहीं है। क्या करे, क्या न करे? उसने उस थियेटर के मालिक को एक खत लिखा, और लिखा कि क्या कृपा करके इतनी व्यवस्था नहीं कर सकेंगे कि जब हॉल में अंधेरा हो जाए तो मैं पीछे के दरवाजे से आ जाऊं और नाटक देख लूं और लोग मुझे न देख पायें। कोई गलती बात तो लिखी नहीं थी, यह तो हम सबकी रोज की बात है, हम सभी करते हैं। कोई ऐसी बात नहीं थी कि हंसे आप। बात ऐसी थी जैसा हम सभी करते हैं। यहां तक मामला कुछ बिगड़ा न था, यह तो बिल्कुल स्वाभाविक था, जैसा रोज होता है, सबके साथ होता है, बाहर के दरवाजे पर दिक्कत होती है, हम पीछे के दरवाजे से चले जाते हैं। लेकिन कठिनाई यहां आई कि वह जो हॉल का मैनेजर था, बड़ा अजीब आदमी रहा होगा। उसने उत्तर में चिट्ठी लिखी, उसने कहा कि मैं बिल्कुल राजी हूं, और हमें बड़ी खुशी होगी, हमे बड़ी खुशी होगी कि आप हमारे नाटक को देखने आएंगे। लेकिन एक बड़ी कठिनाई है, इस हॉल में ऐसे तो दरवाजे हैं जो पीछे की तरफ से हैं, लेकिन ऐसा कोई भी दरवाजा नहीं है, जो भगवान को दिखाई न पड़ता हो? आदमियों की आंख से तो बच जायेंगे, लेकिन भगवान का क्या होगा? हम सब भी सारी दुनिया करीब-करीब ऐसी स्थिति में है। हम दूसरों की आंख में तो धार्मिक हैं, अपनी आंख में धार्मिक हैं क्या? और अगर हम अपनी आंख के समक्ष धार्मिक नहीं हैं, तो परमात्मा की आंख के समक्ष कैसे धार्मिक हो सकते हैं? फिर हमारे यह जो आयोजन हैं ये क्या हैं? करोड़ों रुपया खर्च होता है, रोज है कि नये मंदिर बनते जाते हैं, नई किताबें छपती जाती हैं, नये साधु पैदा होते जाते हैं, नये उपदेशक, नये आंदोलन, अध्यात्म का ऐसा शोरगुल मचा है सारी दुनिया में हजारों साल से जिसका कोई हिसाब नहीं। कि अगर दूसरे प्लेनेट से कोई आए और केवल बातें सुने तो समझे कि जमीन पर तो रामराज कभी का आ चुका होगा। आदमी को न देखे और सिर्फ बातें सुने तब तो हैरान हो जाएगा, लेकिन इतना ये सब हम फिर क्यों करते हैं? कुछ कारण हैं। सबसे बड़ा कारण यह है कि जितना मनुष्य पापी होता चला जाता है, उतनी धर्म की बातें करने लगता है। और जितना मनुष्य विकृत होता चला जाता है, उतना पुण्य का विचार करने लगता है। क्यों? क्योंकि हम अपनी इस पाप की स्थिति को भूलना चाहते हैं। और सिवाय इसके कोई उपाय नहीं है। सिवाय इसके कोई उपाय नहीं है कि अगर मैंने बहुत पाप किया है तो मैं भूलने का उपाय करूं, तीर्थ जाऊं या कि मंदिर जाऊं, या कि टीका लगाऊं ताकि मैं कम से कम औरों के सामने तो धार्मिक हो सकूं और जब बहुत से लोगों की आखों में मैं धार्मिक हो जाता हूं, तो धीरे-धीरे रिफ्लेक्शन से, जब और सारे लोग मुझे धार्मिक समझने लगते हैं, और नमस्कार करन लगते हैं और कहते हैं कि बहुत धार्मिक आदमी है, दिन भर राम-राम का नाम इसके मुंह पर बना रहता है। तो उन सबकी बातें सुनकर मुझको भी विश्वास आने लगता है, कि कौन कहता है कि मैं पापी हूं, मैं तो धार्मिक हूं, कि इतने लोग कोई गलती तो नहीं मानते होंगे।
जितने ज्यादा लोग मुझे मानने लगते हैं कि मैं धार्मिक हूं उतना मुझे
भी विश्वास आने लगता है और मेरा वह जो पाप का बोध था, वह जो मेरी पीड़ा थी कि अधर्म है मेरे जीवन में वह ढकने लगती है, छिपने लगती है। ढकती जाती है और

मैं उसे भूलने लग जाता हूं। हम भूलने के लिए धार्मिक होना चाहते हैं। अगर हम सच में धार्मिक होना चाहते हों, तो यह रास्ता नहीं है कि हम कोई नकल करें धार्मिक होने की, रास्ता यह है कि अपने अधर्म को पहचाने कि वह कहां है? उसकी जड़ें कहां हैं? उन जड़ों को पकड़े और उखाड़ें और परिवर्तित करें। धार्मिक होना बड़ी आधारभूत क्रांति है। धार्मिक होना जन्म से नहीं होता, एक आदमी पैदा हुआ और किसी घर में पैदा हो गया और बस उसी धर्म का हो गया। कितनी बच्चों जैसी बात है, इतनी इम्मैच्योर बात है? कि आप एक घर में पैदा हो गए, उस घर के लोगों के नाम के साथ में जैन की तख्ती लगी थी, आप भी जैन हो गए। कि आप एक घर में पैदा हो गए, उस घर के लोग कुरान को नमस्कार करते थे तो आप मुसलमान हो गए। कितने पागलपन की बात है, इतनी सस्ती बात है धार्मिक होना? मुफ्त में, केवल जन्म के अधिकार से कोई कभी धार्मिक हुआ है? और यह भी आसान नहीं है कि आपके पिता मानते हैं किसी मूर्ति को कि यह भगवान है, और आपने भी मान लिया तो आप धार्मिक हो गए। सच तो यह है कि जो व्यक्ति दूसरों की बातों को मान लेता है, वह कभी धार्मिक नहीं हो सकता। नहीं हो सकता इसलिए कि उसकी अपनी आत्मगवेषणा नहीं है, उसकी अपनी खोज नहीं है, उसकी अपनी कोई आकांक्षा और प्यास नहीं है, जब मेरी प्यास होगी तो दुनिया में किसी की बात नहीं मानूंगा, जब तक कि मैं खुद पानी न पी लूं। अगर मेरी प्यास है, अगर मेरी प्यास नहीं है, तो आप बिल्कुल ठीक कहते हैं, जरूर वहां सरोवर होगा, जरूर वहां होना चाहिए, जब आप कहते हो तो होना ही चाहिए। बात खतम हो गई। आप कहें तो यहीं से मैं नमस्कार किए लेता हूं उस सरोवर को, लेकिन मुझे काम में बाधा न दें, मुझे काम करने दें। मुझे तो कोई प्यास नहीं कि मैं सरोवर तक जाऊं, और खोजूं, जिनकी प्यास नहीं होती पानी के संबंध में वे दूसरों के सिद्धांतों को मान लेते हैं। क्योंकि सिद्धातों से कोई अड़चन नहीं होती, जीवन को बदलने में कोई अड़चन नहीं होती। कोई परिवर्तन करने की जरूरत नहीं होती।
आप जैन बने रहिए, मुसलमान, हिंदू कुछ भी बने रहिए, आपकी जिंदगी एक ढर्रे में चली जाती है, उसमें कोई फर्क नहीं पड़ता है। और आसान है, आप कहते हैं कि परमात्मा है, आप कहते हैं कि आत्मा जरूर होगी, लेकिन हमारी अपनी कोई प्यास नहीं है। हमारी अपनी कोई अभीप्सा नहीं है। हमें खुद ऐसा नहीं लगता कि बिना सत्य को जाने जीवन निराधार है। हमें ऐसा नहीं लगता कि बिना सत्य को जाने जीवन मीनिंगलेस है, अर्थहीन है। हमें ऐसा नहीं लगता है कि बिना सत्य की भूमि को उपलब्ध किए मैं सारा समय व्यर्थ खो रहा हूं, और जिस जीवन संपदा को मैंने पाया है, वह रोज मौत में बदलती जा रही है। मैं मर रहा हूं रोज। मैं मौत की तरफ सरका जा रहा हूं। मेरे हाथ से वह अवसर छीना जा रहा है। हमें कोई प्यास नहीं है, हमें जिस बात की प्यास है, उसका हम खुद प्रयास करते हैं। आप इस बात से तृप्त नहीं होते कि दो हजार वर्ष पहले आपके जो परदादे थे वे बहुत धनी थे। धन आप खुद कमाते हैं। आप इस बात से तृप्त नहीं होते कि हजार वर्ष पहले हमारे परिवार में एक आदमी हुआ जो बादशाह था। नहीं, बादशाहत आप खुद पाना चाहते हैं। लेकिन जब भगवान का सवाल उठता है, आप कहते हैं कि महावीर को जो ज्ञान हुआ था बिल्कुल सच्चा था, बुद्ध को जो ज्ञान हुआ था बिल्कुल सच्चा था। बड़े महापुरुष हो चुके, हम उनकी पूजा करते हैं और प्रसन्न हैं। लेकिन वह ज्ञान हम कमाने के लिए उत्सुक नहीं हैं। इससे जाहिर है कि हमारे भीतर कोई प्यास नहीं है। अगर हमारे भीतर प्यास हो तो जन्म से कोई किसी धर्म को अंगीकार नहीं करेगा। अगर प्यास हो तो खोजेगा, श्रम करेगा, शक्ति लगाएगा, समय देगा और तब जो उसे जो अनुभव होगा, उस अनुभूति को वह अपनी संपदा मानेगा। वह अनुभूति उसे भीतर से बदलने लगेगी, और वह धार्मिक होने लगेगा। धार्मिक होना उधार स्वीकृति नहीं है। किसी से स्वीकार कर लेने की बात नहीं, लेकिन हम क्या जानते हैं? हम तो सब स्वीकार किए हुए हैं।
सोचे, खोजें अपने भीतर आज जितना जानते हैं, सब स्वीकार किए हुए है। आत्मा है आपने स्वीकार कर लिया है, परमात्मा है आपने स्वीकार कर लिया है, अहिंसा परम धर्म है स्वीकार कर लिया है। आपने खोजा है कुछ? और नहीं खोजा, तो आप सोचते हैं कि बिना खोजे धर्म मिल सकता है, धर्म बाजार में नहीं बिकता, न ही किसी साधु-संन्यासी के बस की बात है कि आपको दे दे। खुद भगवान

भी उतर आए तो आपको धर्म नहीं दे सकता। और नहीं तो अब तक भगवान उतर कर सबको धर्म दे दिया होता। खुद तीर्थंकर भी खड़े हो जाएं, आपको धर्म देना चाहें तो नहीं दे सकते। नहीं तो कभी का धर्म सबको मिल गया होता, धर्म दिया नहीं जा सकता, सिर्फ लिया जा सकता है। कोई किसी को दे नहीं सकता, हां, कोई चाहे तो ले सकता है। और लेने में पैसिव एसेप्टिबिलिटी काम नहीं देगी, हम चुपचाप स्वीकार कर लें कि ये सब कहते हैं तो ठीक कहते होंगे, चुपचाप स्वीकृति काम नहीं देगी, पैसिव होना काम नहीं देगा, बहुत एक्टिव सर्च, बहुत सक्रिय खोज काम देगी। लेकिन आप कहेंगे हमें फुर्सत कहां। हम हैं अपने काम में, हम हैं अपनी दौड़ में, धर्म को कौन खोजे, चूंकि हम खुद नहीं खोज सकते इसलिए हमने कुछ दलाल बना रखे हैं। वे खोज लेते हैं, हम उनकी बात मान लेते हैं। चूंकि हम खुद नहीं खोज सकते, हमने पंडित किराए के रख रखे हैं, कुछ शास्त्र पढ़ लेते हैं और हमको बता देते हैं। चूंकि हम खुद प्रार्थना नहीं कर सकते, इसलिए घर में हम पंडित को बुला लेते हैं वह भगवान की प्रार्थना कर देता है, बैठ कर, हम उसको कुछ पैसे दे देते हैं, मामला निपट जाता है। चूंकि हम बहुत व्यस्त हैं, मगर सोचिए तो आपकी यह व्यस्तता यह खबर दे रही है, कि आपके लिए आत्मा, धर्म और परमात्मा से भी बड़ी बातें कुछ और हैं? जिनमें आप व्यस्त हैं। क्या आपको ऐसा अनुभव में आता है कि परमात्मा और धर्म से बड़ी और क्या बात हो सकती है? कौन सी बात बड़ी हो सकती है? यह जो जीवन का व्यवसाय है, यह जो धंधा है जीवन का, रोटी है, और कपड़ा है, और मकान है, और धन है, और दौलत है आप सोचते हैं, यह परमात्मा और धर्म से बड़ा हो सकता है? और अगर सोचते हैं, पता नहीं सोचते हैं या नहीं जीवन से तो हम सब यही सिद्ध करते हैं कि ये बड़ा है, क्योंकि इसके लिए हम कभी नहीं कहते कि हमें फुरसत नहीं, लेकिन परमात्मा और आत्मा की जब बात होती है तो हम कहते हैं, हमें समय कहां, हमें फुरसत कहां? जो महत्वपूर्ण है उसके लिए हमारे पास पूरा जीवन है। जो गैर महत्वपूर्ण है, उसके लिए हम कभी-कभी धार्मिक दिन निकाल लेते हैं, दस-पांच दिन और उसका भी विचार कर लेते हैं।
दस दिन में जितना अधर्म बच जाता होगा, दस दिन खत्म होते से ही एकदम टूट पड़ते हैं, उस अधर्म को पूरा कर लेते हैं, साल का हिसाब पूरा कर लेते हैं। उसे कहीं हम छोड़ते नहीं, उसे कहीं हम छोड़ने को राजी नहीं। क्योंकि किसी तरह कुछ दिन हम निकाल लेते हैं, फिर हम टूट पड़ते हैं, आखिरी हिसाब हम हमेशा पूरा कर लेते हैं। लेकिन थोड़ा विचारें कि क्या सच में यह बात है कि धर्म से भी महत्वपूर्ण कोई बात हो? नहीं धर्म से महत्वपूर्ण कोई दूसरी बात नहीं हो सकती। धर्म से महत्वपूर्ण इसलिए कोई दूसरी बात नहीं हो सकती है कि धर्म की अनुभूति ही व्यक्ति को आनंद, शांति और कृतार्थता के बोध में ले जाती है, उसके अतिरिक्त उसका जीवन चाहे वह कितना ही सोचे कि सफलता की ओर जा रहा है, आखिर में पाया जाता है कि विफल हो गया। दुनिया के बड़े से बड़े सफल जीवन आंतरिक अर्थों में विचार के समक्ष विफल जीवन है। आखिर में उनके हाथ में कुछ भी नहीं है। आखिर में उनके हाथ खाली हैं।
सिकंदर या नेपोलियन या हिटलर इनके पास क्या है? बड़े से बड़े करोड़पति, इनके पास क्या है, बड़े से बड़े सम्राट इनके पास क्या है? क्या है जिसे कहा जा सके, क्या है इनकी उपलब्धि, शायद हम कहें कि इतने बड़े होकर अहंकार की तृप्ति होती है। और तो कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता। जिसके पास जितनी ज्यादा संपत्ति है, जितना ज्यादा धन है, जितना बड़ा मकान है, जितना बड़ा साम्राज्य है, उसका अहंकार उतना ही तृप्त होता है, वह सबके ऊ पर है। लेकिन कैसी बच्चों जैसी बात है, जैसे छोटे-छोटे बच्चे होते हैं, उनसे हम कहें कि हम तुमसे बड़े हैं तो वो बगल के स्टूल पर खड़े हो जायेंगे और कहेंगे हम तुमसे बड़े हैं। क्योंकि हम तुमसे ऊ पर हैं। इस बच्चे पर हम हंसते हैं कि छोटा सा बच्चा है, चाइल्डिश भी है, बचकानी बुद्धि है। बड़ी कुर्सी पर खड़ा होकर समझता है कि हम बड़े हो गए, लेकिन आपको पता है कि जो बड़े मकान में बैठ कर समझ रहा है कि हम बड़े हो गए, वह इससे भिन्न है? उसमें कोई फर्क है? जो आदमी राष्ट्रपति के पद पर बैठ कर सोच रहा है कि हम चपरासी से बड़े हो गए, उसमें कुछ फर्क है? इसमें कोई बुनियादी भेद है? यह तो एक ही बात है, इसमें कोई भी फर्क नहीं है।

एक मित्र ने मुझे एक घटना सुनाई थी। उन्होंने मुझे बताया कि एक अंग्रेज मजिस्ट्रेट था, वह अपनी अदालत में खुद के बैठने की कुर्सी के अलावा कोई भी कुर्सी नहीं रखता था। लेकिन उसने सात नंबर की कुर्सियां बनवा रखीं थी, वे बगल के कमरे में छिपा रखी थीं। वह देख लेता था कि आदमी कितनी कीमत का है, उस हिसाब से कुर्सी मंगवाता था। उसने नंबर डाल रखे थे, ए नम्बर से सात तक। एक नंबर का छोटा सा मूढ़ा था, छोटा स्टूल था, दो नंबर का बड़ा था, फिर तीन नंबर का, फिर चार नंबर की कुर्सी थी, फिर पांच नंबर की और अच्छी कुर्सी थी, ऐसे ही सातवें नंबर की सबसे बढ़िया कुर्सी थी।
देख लेता था, अगर ऐसा-वैसा आदमी हुआ, और ऐसे-वैसे आदमी ही ज्यादा हैं
इस दुनिया में, तो उनको वैसे ही खड़े-खड़े निपटा देता था। दिखा की हां, इसकी जेब में कुछ गर्मी है, या कि सिर थोड़ा अकड़ा हुआ है, या कि रीढ़ बड़ी सीधी करके चलता है, या कि कपड़ों पर चमक है; तो फिर वह नंबर के हिसाब से कुर्सियां बुला लेता था। एक दिन एक आदमी आया और उसने सब गड़बड़ कर दिया। वह आदमी ही गड़बड़ था। आया तो देखने में ऐसा लगा कि नोबडी, ना-कुछ, कोई खास नहीं। लेकिन आते से उसने... तो उसने कोई बुलाने की जरूरत नहीं समझी, चपरासी अपने कोने में ही बैठा रहा। उस आदमी ने आकर कहा कि क्या आप मुझे पहचाने नहीं? फलां-फलां गांव का मैं मालगुजार हूं। यह सुनते से ही वह हैरान हुआ उसने जल्दी से चपरासी को, क्यों बैठा हुआ है, जा जल्दी से ला, नंबर दो वाली, नंबर दो ले आ। वह नंबर दो लेने भीतर गया, तब तक उसने बताया शायद आपको अभी खयाल नहीं आया, सरकार ने मुझे रायबहादुर की पदवी दी थी। कुर्सी नंबर दो की लेकर चपरासी बीच में ही था, उसने चिल्ला कर कहा कि रख, रख... उसको वहीं रख, नंबर चार ले आ। वह भीतर गया तब तक उसने बताया कि नहीं आप अब भी मुझे नहीं पहचान पाए, अभी दस लाख रुपया मैंने वारफंड में दिया है, उसका भी आपको पता नहीं है। बहुत हैरान हो गया, आदमी बड़ा ही गड़बड़ था, सब हिसाब खराब किए दे रहा था, वह चपरासी तब तक चार नंबर की कुर्सी लाता था, उसने चिल्लाया कि तू रुक, नंबर छह ले आ। उस आदमी ने कहा कि काहे को चपरासी को व्यर्थ परेशान करते रहे हैं? नंबर सात ही बुलवा लें मुझे सब पता है, क्योंकि अभी मैं कुछ और बातें बताऊं गा, अभी कुछ और बातें हैं बताने की, क्योंकि मैं आगे अभी और दस लाख का फंड देने का विचार करके आया हूं। आप नंबर सात ही बुलवा लें।
हमें हंसी आती है, इस मजिस्ट्रेट पर, लेकिन हम सब इसी तरह के लोग हैं। छोटी कुर्सी पर बैठा हुआ छोटा आदमी है, बड़ी कुर्सी पर बैठा हुआ बड़ा आदमी है। छोटे मकान में बैठा आदमी छोटा, बड़े मकान में छोटा आदमी बड़ा; जमीन पर खड़ा आदमी छोटा, आकाश में लटक जाए किसी तरकीब से तो बड़ा। यह दौड़ है हमारी। जिसको हम कहते हैं हमें फुर्सत नहीं है, हमें समय नहीं कि हम धर्म के और आत्मा के बाबत विचार कर सकें। किस चीज से समय नहीं है आपको? समय नहीं है नंबर एक की कुर्सी वाला नंबर दो की कुर्सी पर जाने में लगा है। और नंबर दो की कुर्सी पर जाना कोई आसान है, क्योंकि नंबर दो की कुर्सी पर कोई पहले से बैठा है। और नंबर दो की कुर्सी वाला नंबर तीन की कुर्सी पर जाने में लगा है। और ये सातों कुर्सियां बड़े आश्चर्य की बात है, ऐसी सीढ़ियों की तरह नहीं खड़ी हैं, ये सातों कुर्सियां एक गोल घेरे में रखी हैं। और हर एक के आगे कोई न कोई कुर्सी है, ऐसा कोई आदमी आज तक जमीन पर नहीं हुआ जिसके आगे कोई कुर्सी न हो, जिस पर उसे पहुंचना है। हुआ कोई एक आध आदमी जिसने कहा हो मैं आखिरी नंबर एक आ गया। न सिंकदर ने कहा, न नेपोलियन ने कहा, न किसी ने कहा। किसी न यह नहीं कहा कि मैं नंबर एक आ गया, दौड़ खत्म। इसका क्या मतलब है, इसका मतलब है जरूर मनुष्य दस चक्कर में घूम रहे हैं, नहीं तो कोई न कोई तो पहले नंबर आ जाता इतने हजार सालों में। कोई न कोई तो एक जगह पहुंच जाता, जहां वह कहता कि अब सब मेरे पीछे हैं, मैं सबसे आगे मेरी आत्मा तृप्त हो गई। आज तक किसी आदमी ने नहीं कहा, इससे जाहिर होता है, मनुष्यता एक गोल चक्कर में घूम रही है, उसने आज तक नहीं कहा कि कोई हमारे आगे है। हमेशा कोई हमारे पीछे है, न तो कोई बिल्कुल आगे है, न कोई बिल्कुल पीछे है, इस चक्कर में हम उलझे हैं और कहते हैं धर्म के लिए हमें फुरसत कहां, समय कहां। कभी भाग-दौड में थोड़ा बहुत निकाल लेते हैं, वह दूसरी बात है, थोड़ा ध्यान रख लेते हैं, पता नहीं कि परमात्मा हो ही और बाद में कोई दिक्कत दे। पता नहीं

कहीं आत्मा निकल ही आए और बाद में झंझट हो, इसलिए थोड़ा बहुत लगाव उस तरफ भी थोड़ा-बहुत खर्च करते रहना, उचित है, उपयोगी है। यह हमारी जो व्यवसायी बुद्धि है, उस तरह हम सोचते हैं। लेकिन स्मरण रखें इस दौड़ में सिवाय दुख के और क्या है? आप सभी कुछ न कुछ दौड़ लिए हैं, स्मरण करें इस दौड़ में सिवाय दुख के और क्या मिला है? और जिस भांति आप आज तक दौड़े हैं, अगर वही आपका मस्तिष्क और वही आपकी बुद्धि और वृत्ति रही तो आगे भी तो इसी भांति दौडेंगे। और अगर आज चालीस साल की उम्र तक या पचास साल की उम्र तक आपको कोई जीवन के रस की अनुभूति उपलब्ध नहीं हुई, तो क्या आप सोचते हैं कि इन्हीं पटरियों पर आगे हो जाएगी। तो उनसे पूछ लें जो आपसे आगे चले गए हैं, या उनसे पूछ लें जो कि खत्त्म हो गए हैं, और लाशें पड़ी हैं, और कब्रों में दफना दिए गए हैं। तो पूछ लें अपने चारों तरफ लेकिन हम पूछने को भी राजी नहीं हैं। हम देखने को भी राजी नहीं हैं कि जो हम कर रहे हैं, उससे किसी और को भी कुछ मिला है। एक साधारण बुद्धि भी विचार कर लेती है कि मैं जो काम करने जा रहा हूं, इससे किसी और को भी कुछ मिला है? लेकिन बड़ा आश्चर्य, बड़ा मिरेकल है हर आदमी उस जगह गड्ढे खोद रहा है, जहां कुछ भी मिलने को नहीं है, और अपने आस-पास नहीं देख रहा है कि करोड़ों लोग भी उस तरह के गड्ढे खोद रहे हैं, जिनको कुछ भी नहीं मिला। और उनसे भी पहले अरबों लोग वहां गड्ढे खोद चुके हैं, उन्हीं गड्ढों में गिर गए हैं और मर गए हैं और कुछ भी नहीं मिला। लेकिन आंख उठा कर देखने की आप कहते हैं फुर्सत नहीं, आप कहते हैं कि मैं अपना गड्ढा खोद रहा हूं। पास देखूं, आंख उठा कर देखने को मैं धर्म कहता हूं, आंख उठा कर देखें चारों तरफ क्या हो रहा है? जिस पड़ोसी से आपके मन में ईर्ष्या भर रही है, और सोचते हैं, कि वैसा मकान मेरे पास हो जाए, थोड़ा आंख उठा कर देखें उस पड़ोसी को उस मकान में क्या मिल गया है। जिस बड़े पद पर बैठे देख कर आदमी को जलन पड़ती है, प्राण अकुलाते हैं कि मैं भी वहां पहुंच जाऊं, थोड़ा उसमें झांकें और देखें उसे क्या मिल गया है?
एक कहानी आपसे कहूं। एक युवक गुरुकुल से वापस लौटा, गुरु को छोड़ कर जा रहा था, उसकी अंतिम परीक्षाएं भी पूरी हो गई, सभी विद्यार्थी बड़े-बड़े घरों के थे, वे सब गुरु को कुछ न कुछ भेंट दे रहे थे। वह भी देना चाहता था। गुरु के पैर में सिर रखा उसने और कहा कि मैं बड़ा दीन-हीन मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। मैं क्या भेंट करूं? गुरु ने कहाः कोई भेंट की बात नहीं, तुमने प्रेम दिया, श्रद्धा दी, वह बहुत है, वह अमूल्य है। तुम निश्चिंत जाओ, मन में कोई पश्चाताप न करो। लेकिन उसने कहा, एक ही शर्त पर मैं जाऊं गा, आप मुझे विश्वास दिला दें कि जब भी मेरे पास कुछ हो, जो भी छोटा-मोटा मैं भेंट करने आऊं, तो आप इंकार नहीं करेंगे। इसी शर्त पर वह गया। रात जाकर राजधानी में अपने एक मित्र के घर ठहरा, उसने अपने दुख की बात कही कि मैं सोचता था कि अगर मेरे पास कुछ भी होता तो अपने गुरु को दे देता, तो मेरा मन आनंदित होता। मैं बड़े भार में दबा हूं, मेरे मन में बड़ी चोट, बड़ा दुख है। उसने कहा तुम क्यों परेशान हो, इस गांव का जो राजा है, वह जो भी व्यक्ति जाता है, जो व्यक्ति उस राजा के पास जाता है, जो भी मांगता है सुबह जाकर वह उसे भेंट कर देता है, तो तुम जाओ, और राजा से भेंट मांग लो। क्या मांगना है? अभी तक उसने सोचा नहीं था। उसने सोचा था कि अगर एक सोने की मोहर भी मैं पा सका जीवन में तो भेंट कर दूंगा। लेकिन जब उसने सुना कि राजा जो भी मांगो दे देता है, तो फौरन बोला मैं पांच सोने की मोहरें चाहता हूं। उसने कहा कोई बड़ी कठिनाई नहीं, तुम जाओ और सुबह ही चले जाओ।
वह सुबह ही सुबह उठ कर चला गया, कोई पांच ही बजे होंगे और राजा बगिया में टहलता था उठ कर। पुराने दिनों के राजाओं की बात है, आज-कल के राजा पांच बजे बगियाओं में नहीं टहलते, ऐसे तो आज-कल कोई राजा ही नहीं होते, क्योंकि सभी राजा हो गए हैं। मगर पुराने जमाने की बात है। वह पांच बजे उठ कर बगिया में टहलता था, यह युवक गया, इसने जाकर हाथ जोड़े और कहा कि मैं एक याचक हूं, मैं शायद प्रथम याचक हूं दिन का और मैंने सुना कि प्रथम याचक जो भी मांगता है, आप दे देते हैं। क्या मैं निवेदन करूं? राजा ने कहाः खुशी से, खुशी से। राज्य इतना धनी है हमारा कि यहां दान का सुख हमें नहीं मिल पाता। कभी कोई आता ही नहीं, वर्षों से प्रतीक्षा करता हूं, तुम आ गए बड़ी खुशी, बोलो क्या

मांगते हो? जो मांगोगे दूंगा। सोच कर आया था पांच मागूंगा लेकिन उसने कहा, जो मांगोगे दूंगा, उसने सोचा पचास क्यों न मांग लूं, या कि पांच सौ क्यों न मांग लूं, या कि पांच हजार, या कि पांच लाख, वह सोच में पड़ गया, राजा ने कहा मालूम होता है तुम तय करके नहीं आए।
असल में कौन इस दुनिया में तय करके आया है कि क्या मांगना है? तो उसने कहा कि मैं एक चक्कर लगा आऊं, तब तक तुम तय कर लो। जो मांगोगे दे दूंगा इसलिए बहुत चिंता मत करो, जो भी तय करना है कर लो। वह और भी आश्वस्त हुआ, संख्या बढ़ने लगी। जैसे-जैसे आदमी आश्वस्त होता है कि मिल सकता है, वैसे- वैसे संख्या बढ़ती जाती है। जैसे-जैसे कुछ मिलता है, उसकी दौड़ बड़ी होती चली जाती है, क्योंकि विश्वास आता है कि मिल सकता है। इसीलिए तो दरिद्र धनी होता है, दरिद्रता मिटाने को लेकिन और बड़ा धनी होकर और बड़ा दरिद्र हो जाता है, क्योंकि मांग उसकी बढ़ती चली जाती है।
राजा चक्कर लगाकर लौटा, वह युवक अब तब आसमान छूने लगा था, गणित की जितनी संख्याएं उसे मालूम थीं, वो सब पार हो चुकी थीं। अब उसे कुछ नहीं सूझ रहा था कि आगे और... आज उसे पछतावा हो रहा था कि गणित में पहले एक और कुशलता क्यों न प्राप्त कर ली? संख्याएं याद नहीं आ रही थीं आगे की अब और क्या मागूं? तब उसने सोचा कि संख्याओं से काम नहीं चलेगा, क्योंकि हम मांगे संख्याओं में और राजा के पास पीछे बहुत कुछ पीछे शेष रह जाए, तो बाद में पछतावा हो। इसलिए उचित है कि हम राजा से कहें कि जो भी तेरे पास है, सब दे दे। और जैसे हम इस मकान के भीतर आए हैं, एक कपड़ा पहन कर, ऐसा जो कपड़ा तुम पहने हुए हो, उसी को पहने ही बाहर हो जाओ। भीतर जाने की जरूरत नहीं है। स्वाभाविक था, कौन पागल होता, आप होते, मैं होता? जो कि यही बात नहीं करता, जिनके दिमाग में भी गणित साफ है, वो यही करते जो भी होशियार हैं, जिनको कि हम कहते समझदार हैं, वो यही करते। कोई नासमझ होता बात अलग है, उसने ठीक समझदारी का काम ही किया। पूछें अपने से आप क्या करते? यही करते। आदमी खोजना कठिन है, जो यही नहीं करता। और अगर ऐसा आदमी मिल जाए तो समझना कि वह परमात्मा के रस्ते पर है। कोई भी यही करता, यह सीधी-साफ गणित की बात है। इसमें कुछ उलझन भी तो नहीं है।
राजा लौटा उस युवक ने कहा कि क्षमा करें, मैंने निर्णय किया है क्या मैं बताऊं? राजा ने कहाः बोलो। तुम्हारा निर्णय मैं समझ गया। क्योंकि ऐसी स्थिति में क्या निर्णय कोई कर सकता है? उसे मैं भी सोच सकता हूं, लेकिन तुम बोलो, संकोच न करो। उसने कहा मैंने निर्णय किया है, आप बाहर हो जायें मकान के। और जो भी आपका है, मुझे दे दें। राजा ने ऊपर हाथ उठाए, परमात्मा को कहा कि तुझे धन्यवाद! वह आदमी आ गया जिसकी मुझे वर्षों से प्रतीक्षा थी। युवक घबड़ा गया। वह तो सोचा था कि राजा घबरा जाएगा। उसने हाथ उठाए परमात्मा से कहा कि धन्यवाद! आ गया वह आदमी जिसकी मुझे प्रतीक्षा थी। अब भार इस पर देता हूं, अब मेरी मुक्ति हुई। वह युवक बोला ठहर जायें, ठहर जाएं अभी धन्यवाद न दें। आप एक चक्कर और लगा आएं, मैं थोड़ा और विचार कर लूं। क्योंकि मैं तो बड़ी कठिनाई में पड़ गया। मैं तो बड़ी मुश्किल में पड़ गया। मैं थोड़ा विचार कर लूं, मौका एक और दे दें, आपकी बड़ी कृपा होगा, राजा ने कहा देखो जो बहुत विचार करता है, वो फिर राजा नहीं हो सकता। बहुत विचार की जरूरत नहीं, अभी तो तुम युवा हो, यह तो बूढ़ों की बात है, तुम क्यों विचार करते हो? तुम तो लो और मुझे जाने दो, तुम देर मत करो क्योंकि देर का मतलब गड़बड़ है। जो विलम्ब करता है और विचार करता है, वह झंझट में पड़ जाता है। तुम तो लो और मुझे जाने दो।
वह युवक बोला कि नहीं, नहीं। इतनी कृपा करें, अबोध हूं, नामसझ हूं मुझे कुछ अनुभव नहीं, आप एक चक्कर लगा आएं, सिर्फ एक चक्कर। आपको पता है लौट कर क्या हुआ, वह युवक वहां नहीं था, वह युवक भाग गया था। इसको मैं देखना कहता हूं। जिंदगी को चारों तरफ देखें, यह है अंतर्दृष्टि। जरा खोलें आंख और देखें कि चारों तरफ क्या हो रहा है? लेकिन आप अपना गड्ढा खोदने में लगे हैं, कोई अपना गड्ढा नहीं खोद रहा, सब अपनी कब्रें खोद रहे हैं। जिसको हम समझते हैं, मकान बना रहे हैं, वह आखिर में कब्र सिद्ध होता है। क्या होगा? और कुछ हो ही नहीं सकता, चूंकि यह सारे जीवन की दौड़ मौत में समाप्त होती

है। इसलिए स्वभावतः जो भी हम करते हैं, वही हमारी कब्र का सामान बन जाता है। जो भी हम करते हैं तो फिर क्या हो, थोड़ा आंख खोल कर देखें चारों तरफ। थोड़ा विचार करें, थोड़ा होश से भरें, और तब आप पायेंगे कि धर्म के सिवाय शायद और कुछ भी सार्थक नहीं है। धर्म के सिवाय शायद और कोई सहारा नहीं है। धर्म के सिवाय शायद और कोई संबल नहीं है। और धर्म क्या है? संसार का अर्थ हैः दौड़ का जीवन, दौड़ना है कुछ पाना है, कुछ पाना है, कुछ पाना है। धर्म का क्या अर्थ है? धर्म का अर्थ है उसकी खोज जो है। संसार का अर्थ है उसकी खोज जो मिलेगा। संसार हमेशा आशा में भविष्य में है, संसार एक होप है। धर्म का क्या अर्थ है? धर्म का अर्थ है जो है। भविष्य में नहीं इसी क्षण; अभी और यहीं। संसार है हमेशा भविष्य में, कल मिलेगा, मेहनत करूं, कल मिलेगा। पाऊं, इकट्ठा करूं, जोडूं; धर्म है वह जो मौजूद है, इसी क्षण अभी और यहीं। वह जो है भीतर, वह जो सदा से आपके साथ है, वही आप हो, वही आपका स्वरूप है। वही आपकी आत्मा है। वही आपका होना है, वही आपका ऑथेंटिक बीइंग है। वह है। धर्म कोई पाने की चीज नहीं, धर्म है। संसार पाने की चीज है। संसार दौड़ने की चीज है। धर्म तो है, उसे कहां पाइएगा, उसे कहां जाकर पाइएगा? लेकिन जब तक संसार की दौड़ चित्त में होती है, तो चित्त इससे योग्य नहीं हो पाता, नहीं ठहर पाता कि उसे देख सकें जो है।
जब तक हम कुछ होने की दौड़ में हैं, तब तक हम उसे नहीं देख सकेंगे जो हम हैं। यही वासना और आत्मा का फर्क है। वासना है दौड़, कुछ होने की दौड़; और आत्मा है ठहर जाना उसमें जो हम हैं। कुछ भी होने की दौड़ वासना है, और उसमें ठहर जाना जो हम हैं, जो भी हम हैं, आत्मा है। वासना संसार है, आत्मा धर्म है। कैसे इस आत्मा को उपलब्ध करें, कैसे इसे जाने? कैसे इसे पहचानें?
तो मैंने कहा दौड़ के प्रति जागें, दौड़ की व्यर्थता को देखें, उठाएं मुर्दों को, उनसे पूछें जो जिंदा हैं, जो मुर्दा होने के इंतजार में हैं उनसे पूछें; आस-पास देखें, देखें कि यह कथा क्या है? यह क्या हो रहा है सब? एक फकीर था, गांव के बाहर रहता था। फकीर तो बाद में हुआ, पहले तो एक बादशाह था वह। अपने महल में रहता था। एक रात सोया था, सोया क्या था, करवटें बदलता था। क्योंकि जिसके पास बहुत कुछ है, वह सो कैसे सकता है? उसे रखवाली होती है, उसे करवटें बदलनी होती हैं। जिसके पास कुछ नहीं है, वही सो सकता है। जिसके पास कुछ है और खोने का, चोरी जाने का डर है, वह कैसे सो सकता है? तो वह तो राजा था, बहुत उसके पास था, कैसे सोता, करवटें बदलता था, तभी उसने देखा कि ऊपर उसके छप्पर पर कोई चलता है, तो हैरान हुआ। रात बादशाह के महल के छप्पर पर कौन है? उसने चिल्ला कर पूछा कि कौन है यहां ऊपर? कौन चल रहा है? उसने कहा क्षमा करें, मेरा ऊं ट खो गया है, उसे खोजता हूं। उसने कहा कि पागल, कौन पागल है यह? ऊंट कहीं छप्परों पर खोते हैं? ऊंट कहीं छप्परों पर खोजने से मिलेंगे? ऊपर से वह आदमी जो भी रहा हो, खूब हंसने लगा और उसने कहा कि तू सम्पत्ति में स्वयं को खोजता हो, साम्राज्य में सत्य को खोजता हो, चीजें इकट्ठी करके आनंद खोजता हो, परिग्रह में शांति खोजता हो, और तुझे विरोध न दिखता हो, लेकिन मैं छप्पर पर ऊंट खोजता हूं तो तुझे विरोध दिखता है? क्या मेरी खोज से तेरी खोज ज्यादा असंगत नहीं है? राजा भागा बाहर आया, यह आदमी पागल नहीं था, यह तो पकड़ने जैसा था, पूछने जैसा था, लेकिन वह आदमी मिला नहीं। वह आदमी तो भाग गया। लेकिन दूसरे दिन वह राजा भी भाग गया। उसने देखा ऊं ट छप्परों पर नहीं मिल सकते। परिग्रह में परमात्मा भी नहीं मिल सकता। वे दिशाएं अलग हैं, वासना में आत्मा नहीं मिल सकती, वे दिशाएं विरोधी हैं। फिर वह गांव के बाहर फकीर हो गया और गांव के बाहर रहने लगा। फिर तो अनेक लोगों से उसके झगड़े हो जाते और अनेक लोग उसको मारने को उतारू हो जाते, उसकी बात कुछ गड़बड़ थी। असल में जिन्होंने जाना है, उनकी बात थोड़ी गड़बड़ हो ही जाती है। जिन्होंने नहीं जाना उनकी बात बिल्कुल ठीक-ठीक होती है, उसमें कुछ गड़बड़ नहीं होता।
झगड़ा उसका उपद्रव हो जाता था, कोई भी राहगीर निकलता वह चौरस्ते पर रहता था, कोई भी राहगीर निकलता उससे पूछता बस्ती का रास्ता कहां है? तो वह कहता बाईं तरफ चले जाओ, और भूल कर भी दाएं तरफ मत देखना। एकदम बांए तरफ जाओ। कोई भी उसकी बात मान लेता, फकीर की बात कौन झूंठ बोले, लेकिन बाईं तरफ

जाकर आदमी पाते कि वे तो मरघट में पहुंच गए। वहां मरघट था गांव का। वह गुस्से में वापस लौटा दो-चार मील चल कर कहता तुम कैसे पागल हो? मरघट में भेज दिया। बस्ती कहां है? तो वह कहता जहां तक मेरी समझ है, जिसको लोग बस्ती कहते हैं, वहां बसने वाला कोई भी नहीं है, सब उजड़ने वाले हैं। वहां तो सब मुर्दे हैं जो तैयार हैं मुर्दा होने को। वहां तो मरने की तैयारियां चल रही हैं, जिसको लोग बस्ती कहते हैं। सो मैंने से बस्ती कहना बंद कर दिया है, ये मरघट से कोई नहीं भागता, जो बस गया है वहीं बसा हुआ है। इसलिए मैं इसको बस्ती कहता हूं।
इस पर झगड़ा हो जाता, लोग उसको मारने को उतारू हो जाते। तुमने हमारा समय खराब किया। मरघट भेज दिया। लेकिन मैं भी आपसे यही कहना चाहता हूं, चारों तरफ आंख खोल कर देखें आप पाएंगे जो जिंदा हैं वो मरने की तैयार में हैं। जो मर गए हैं वे मरघट पर हैं। जो अभी पैदा नहीं हुए वे भी मरने की तैयारी के किसी क्रम में गुजर रहे होंगे। मरने का इतना जाल फैला हुआ है, या तो कुछ लोग मर गए हैं, या कुछ लोग मरने वाले हैं या कुछ लोग पैदा होकर मरेंगे। इस मरने के जाल में आप इतने व्यस्त हैं कि कहते हैं कि मुझे फुरसत कहां कि मैं धर्म को जानूं। तो फिर मरिए। लेकिन फिर होश से मरिए, समझ कर मरिए कि मरने का काम चल रहा है, इसमें हम लगे हुए हैं, तो मरेंगे ठीक है, गड्ढा खोद रहे हैं, इस में हमारी कब्र बनेगी। लेकिन जरा गौर से देखेंगे तो कोई आदमी अपना गड्ढा अपनी कब्र नहीं खोदना चाहता। कोई आदमी मरना नहीं चाहता, कोई आदमी मिटना नहीं चाहता। तो फिर धर्म है, तो फिर आत्मा का मार्ग है, वहां भीतर चलें, वहां खोजें, वहां जागें और देखें वहां देखने पर पता चलता है कि सच में हम दौड़ते थे, इसलिए उसे खो गए थे, जो हमारे पास था। जो निरंतर हमारे पास था, दौड़ने के ऊहापोह में, दौड़ने के ज्वर में, फीवर में याद नहीं रहा था, कई बार हो जाता है, कई बार हो जाता है। जब हम बहुत तेजी से दौड़ते हैं, तो दौड़ की तेजी, दौड़ की गति उसको भुला देती है, जो हमारे पास है। जो हमारे निकट है। ऐसा ही हुआ है। धर्म है स्वरूप, संसार है दौड़ और दौड़ क्या है? दौड़ है अहंकार की। इसके प्रति जागें। सजग हों, जो जागता है, सजग होता है, विचार करता है, देखता है, वह फिर बहुत ज्यादा दिन तक उस गड्ढे को नहीं खोद सकता है जो उसकी कब्र बनेगा। फिर वह उस मंदिर को खोजने लगता है, जो उसका शाश्वत आवास बन सकता है, वह मंदिर ही धर्म है, वह मंदिर ही परमात्मा का मंदिर है, वह भीतर है। वह सबके पास है। अभी और यहीं मौजूद है। छोड़ें दौड़ और देखें, इतना सरल सा सूत्र है धर्म का--छोड़ें दौड़ और देखें। यह छोटे से सूत्र पर विचार करना। विचार करने को कह रहा हूं, मानने को नहीं। यह नहीं कहता हूं कि मेरी बात मान लेना। क्योंकि मेरी बात अगर मान ली तो मैं आपका दुश्मन हो गया। अगर मेरी बात मान ली तो आपकी खोज खत्म। ऐसे तो आपने बातें मान ली हैं किसी न किसी की, नहीं किसी की मत मानना। मैं जो कहता हूं सोचना, विचार करना, देखना प्रयोग करना; हो सकता है बात मेरी बिल्कुल ही गलत हो, हो सकता है कि बिल्कुल ही झूठी हो। तो जब आप देखेंगे, खोजेंगे, विचार करेंगे उसका असत्य दिख जाएगा और आप बंधन से बच जाएंगे। हो सकता है उसमें कुछ हो, हो सकता है उसमें कोई रहस्य हो, कोई राज हो, कोई बीज हो, जो खोजें और मिल जाए तो आपका जीवन परिवर्तित हो जाए। लेकिन मेरी बात मानना मत क्योंकि जो मान लेता है, वह खोजता नहीं प्रयोग नहीं करता। मानना मत। इसका क्या अर्थ है? इसका क्या यह अर्थ है कि मेरी बात मत मानना? क्योंकि जो नहीं मानता वह भी नहीं खोजता। जो मान लेता है वह भी नहीं खोजता। जो विश्वास कर लेता है वह भी रुक जाता है, जो अविश्वास कर लेता है वह भी रुक जाता है। फिर क्या करना? न विश्वास करना, न अविश्वास करना, मेरी बात पर विचार करना। होशपूर्वक विचार करना। विचार करने से आपके भीतर ऊर्जा जगेगी, हमने हजारों साल से विचार करना बंद किया हुआ है, हम विचार नहीं करते, हम तोतों की भांति रटते हैं, कोई गीता रटता है, कोई कुरान रटता है, कोई बाइबिल रटता है, सब रट रहे हैं। सोच नहीं रहे। सोचें तो जीवन में क्रांति हो जाए, अभिनव जीवन पैदा हो जाए। सोचें। देखें जीवन को। जो भी कर रहे हैं, रुके एक क्षण और देखें कि मैं क्या कर रहा हूं? और वस्तुतः इसका कितना मूल्य है क्या इसके लिए मैं जीवन समाप्त करूं? और अगर यह सोच सारी

दुनिया में पैदा हो सके, थोड़े से लोगों में भी यह क्रांति और अग्नि पैदा हो सके तो इस दुनिया में अब, इस बीसवीं सदी में इतना कपड़ा, इतना भोजन, इतने मकान सबके लिए उपलब्ध हो सकते हैं कि किसी को चिंता का कोई कारण न हो। लेकिन यह सोच किसी को नहीं है और सब बडे से बड़े होने में, बड़ी से बड़ी कुर्सी पर चढ़ने में लगे हुए हैं। उसके कारण वे खुद की आत्मा तो खोते हैं और सारे जगत से शांति और आत्मा को भी नष्ट कर देते हैं। जो व्यक्ति अपने भीतर धर्म को नहीं खोजता, उसका जीवन बाहर के जगत में अधर्म का प्रचार और प्रसार बन जाता है।
तो जहां करोड़-करा.ेड, अरबों लोग अज्ञान के स्थिति में बिना अपने को जाने, बिना अपने को खोजे रह रहे हों, वहां इतना विषाक्त, इतनी कलह, इतना क्लेश, इतनी घृणा भर गई है कि हर दस-पांच साल में उसे निकालने के लिए एकाध युद्ध करना पड़ता है। युद्ध निकास है। सारी हमारी घृणा, सारे उपद्रव हमारे दिमाग के जल जाते हैं, निकल जाते हैं। दो महायुद्धों में दस करोड़ लोगों की हत्या की है हमने, आपने, मैंने, हमने दस करोड़ लोगों की हत्या की, दो महायुद्धों में, फिर भी हमारे सिर पर कोई चिंता नहीं आती, कोई लहर नहीं आती कि कैसी दुनिया है ये, यह क्या हो रहा है? और अब हम तैयारी कर रहे हैं, सबके विनाश की। क्योंकि जो व्यक्ति स्वयं शांति में नहीं है, वह स्वयं अशांति फैलाने के और कुछ भी नहीं कर सकता। जो व्यक्ति खुद बीमार है, वह बीमारी के रोगाणु तो फैलाएगा और करेगा क्या? तो धर्म न केवल व्यक्ति की बल्कि समस्त समष्टि की आधारशिला है। और जितने हम उससे दूर होते हैं, उतने ही हम विकृत, और पतित और दीनहीन, दरिद्र और दुखी होते चले जाते हैं। जितने हम उसके निकट होंगे, उतनी ही एक गौरवपूर्ण गरिमा उत्पन्न होगी, व्यक्तित्व का जन्म होगा, भीतर एक आनंद का जगत उदघाटित होगा। द्वार खुलेंगे उस दुनिया के जिसका हमें कोई भी पता नहीं, उस अननोन, उस अज्ञात स्रोत का हमारे भीतर आगमन होगा जिसकी छोटी सी ध्वनि भी हमें नाद से भर देगी, नृत्य से भर देगी। जिसकी थोड़ी सी खबर भी संगीत बन जाएगी। जिसका थोड़ा सा आगमन भी हमारे सोए और मुर्दा प्राणों में जीवन की अदभुत लहर बन जाएगा। उस जीवन को आने दें, उस अज्ञात और अनंत जीवन को आने दें। लेकिन कैसे? रुकें और भीतर देखें, वहीं उस दर्शन से ही उसको द्वार मिलता है।

ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं, इनको इतने प्रेम और शांति से सुना है, उससे मैं बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। सबके भीतर बैठे उस परमात्मा को प्रणाम करता हूं।
जिसकी मैंने बात की, और उस परमात्मा से प्रार्थना करता हूं जागरण दे, प्रकाश दे सबके जीवन में आनंद और शांति दे। धर्म आ सके जमीन पर, तो जमीन मोक्ष बन सकती है। और धर्म तिरोहित होता जाए जमीन से तो हम नरक में जी रहे हैं और और बड़े नरकों की तैयारी में जी रहे हैं। परमात्मा प्रकाश दे। पुनः सबको प्रणाम करता हूं।

स्वयं की सत्ता
पांचवां प्रवचन

जागो और देखो

मेरे प्र्रिय आत्मन्!
मैं कल सुबह एक कहानी कह कर बहुत मुसीबत में पड़ गया। उसी से आज की शुरुआत भी करनी है। कल सुबह मैं बोला और मैंने तैमूरलंग और बादशाह बैजद के संबंध में एक छोटी सी कहानी कही। मैं सोचता था तैमूरलंग और बैजद बहुत समय हुआ मर चुके हैं, इसलिए कोई मैंने परेशानी अनुभव नहीं की। मुर्दों से कोई डर होने का कारण भी नहीं है। लेकिन मैं घर लौटा भोजन किया और सो गया। मैंने देखा कि तैमूरलंग और बैजद दोनों उपस्थित हैं और मुझ पर बहुत नाराज हैं। वे दोनों कहने लगे कि हमने सुना है कि आज सुबह हमारे संबंध में बहुत सी गलत बातें आपने कही हैं। आपने ऐसी कहानी कही है जिसमें हमारी बड़ी निंदा है। आप अपनी कहानी वापस ले लें और क्षमा मांग लें। मैंने उनसे कहा कि क्षमा मांगना तो असंभव है, कल सुबह की मीटिंग में तुम फिर आ जाना, मैं फिर वही कहानी कहूंगा। अभी जब मैं दरवाजे से घुसा तो देखा कि वे दोनों भी आ चुके हैं। जरूर कहीं न कहीं आकर बैठ गए होंगे, जहां तक तो मंच पर ही बैठे होंगे, क्योंकि उनकी आदत नीचे बैठने की नहीं है।
अगर मंच पर जगह नहीं मिली होगी तो पहली कतार में बैठे होंगे, क्योंकि दूसरी कतार में बैठना उनके अहंकार के विरोध में है। हो सकता है किसी डर से कि लोग उनको पहचान न लें और फिर मेरा वायदा भी है कि मैं कहानी फिर से कहूंगा, इसलिए यह भी हो सकता है कि भीड़ में कहीं छिप गए हों, या बाहर खड़े हों। उन दोनों की पहचान मैं आपको बता दूं, इसलिए जिसके पास भी वे बैठे होंगे पहचान लेगा। तैमूर तो लंगड़ा है और बैजद की एक ही आंख है, वह काना है। जिसके भी पड़ोस में होंगे वह पहचान लेगा। अपने आस-पास आप देखेंगे आपको समझ में आ जाएगा। इधर मंच पर देखेंगे तो खयाल में आ सकता है, कौन बैजद है, कौन तैमूर है। या आपके पड़ोस में, अगर आपको कहीं भी दिखाई न पड़े, तो फिर आंख बंद करके आप भीतर देखना। फिर वे वहीं छिप गए होंगे। क्योंकि सबसे सुरक्षित जगह, जहां कोई भी मनुष्य कभी नहीं देखता है, हर आदमी के भीतर है। जब भी किसी को छिपना होता है, वह वहीं छिप जाता है। आप दुनिया में खोज लेंगे वह नहीं दिखाई पड़ेगा, क्योंकि वह भीतर मौजूद है, और भीतर कोई भी ख्ल्लजता नहीं है। क्योंकि मैंने उनको वायदा कर दिया है, आश्वासन दे दिया है कि मैं कहानी कहूंगा इसलिए मैं वह कहानी दोहराता हूं, ताकि वे सुन लें और फिर मैं अपनी चर्चा को शुरू करूं।
तैमूर सारी दुनिया को जीतने के खयाल से निकला था, सारी दुनिया उसे जीतनी थी। जो भी रास्ते में आयेगा उसको मिटा देगा और दुनिया को जीत कर रहेगा। और सभी लोग करीब-करीब इसी इरादे से दुनिया में निकलते हैं कि दुनिया को जीतनी है। तैमूर भी निकला, उसने अनेक बादशाहों को मिटाया, अनेक बादशाहतें जीतीं; फिर बैजद नाम के बादशाह को भी उसने हराया, और हथकड़ियों में बांध कर उसे अपने दरबार में बुलाया। जब बैजद हथकड़ियों में बंधा हुआ तैमूर के दरबार में लाया गया, तैमूर अपने सिंहासन पर बैठा था, बैजद को देख कर जोर से हंसने लगा, एक तो बैजद हार गया था, दूसरे तैमूर की हंसी, उसके मन में तीर की तरह लग गई। उसने बहुत गुस्से से कहा कि तैमूर न तो यह शिष्ट बात है, न यह सज्जन के लिए योग्य है कि एक हारे हुए आदमी को देख कर हंसे। और इस छोटी सी विजय पर इतने इतरा रहे हो इस भूल में मत पड़ो और खयाल रखो कि जो आदमी दूसरे के हार जाने से हंसता है, एक दिन उसे खुद अपनी हार पर आंसू बहाने पड़ते हैं। लेकिन तैमूर बोला बैजद तुम गलत समझ गए, तुम्हारे हार जाने से नहीं हस रहा हूं, और न ही इस छोटी सी फतेह से मुझे कोई खुशी हो गई है। हंस तो मैं दूसरी बात से रहा हूं, और वह यह बात है तुम्हें देख कर मुझे यह आश्चर्य हुआ, अपने को देख कर तो हमेशा होता था, मैं हूं लंगड़ा, तुम हो काने; यह भगवान कैसा पागल है कि अंधों को, लंगड़ों को, कानों को बादशाहतें देता है! यह देखकर मुझे हंसी आ गई।

मैं वहां पर मौजूद नहीं था, अन्यथा मैं तैमूर से कहता कि इसमें भगवान
की कोई भूल नहीं है। असल में लंगड़ों और कानों के सिवाय बादशाहत कोई मांगता ही नहीं है। दुनिया में कोई स्वस्थ्य आदमी बादशाहत नहीं मांगता। बल्कि जब कोई आदमी स्वस्थ्य हो जाता है, तो उसके बापदादों की भूल से उसे अगर बादशाहत मिल गई हो तो, उसे ठुकरा देता है, उसे फेंक देता है। हम जानते हैं महावीर को, हम जानते हैं बुद्ध को, बापदादों की भूल से उन्हें बादशाहतें मिल गई थी, बापदादे काने और लंगड़े निश्चित ही रहे होंगे, लेकिन जब वो स्वस्थ्य लड़के उनके घर पैदा हुए, उन्होंने लात मार दी और वे बाहर निकल गए। स्वस्थ्य आदमी किसी का मालिक नहीं होना चाहता। स्वस्थ्य आदमी किसी का मालिक कभी नहीं होना चाहेगा। क्योंकि किसी के मालिक होने में, किसी के ऊपर कब्जा करने में, बीमार चित्त, रूग्ण और हिंसक चित्त की खबर मिलती है। और हमें जब यह रस मिलता है कि हम किसी के मालिक हो गये, और किसी की गर्दन पर हमारा हाथ है और हम चाहें तो उसकी जान ले लें, इसमें जो रस है और आनंद है वह बीमार और विक्षिप्त चित्त का है, वह मेडनेस का है, वह पागलपन का है।
अगर मैं वहां होता तो मैं तैमूर से कहता, भगवान की इसमें कोई भूल नहीं है, तुम्हारा लंगड़ा होना, तुम्हारा काना होना, तुम्हारे भीतर यह हीनता का भाव कि मैं लंगड़ा हूं या काना हूं, तुम्हें सारी दुनिया के सामने अपनी हीनता मिटाने के लिए एक ही रास्ता है कि तुम दबाओ, जीतो, बड़े हो जाओ, पहाड़ पर खड़े हो जाओ, ताकि दुनिया देख सके कि तुम कुछ हो, और कोई इशारा न कर सके कि तुम लंगड़े हो। और जब दुनिया मान ले कि तुम कुछ हो, तो तुमको भी विश्वास आ जाये कि मैं कुछ हूं। मैं लंगड़ा नहीं हूं। मनुष्य में जो अभाव है, जो खालीपन है, उसे भरने के लिए बादशाहतें खोजता है, धन खोजता है, पद खोजता है, और एक दौड़ शुरू होती है। आज की चर्चा मैं इसी बात से शुरु करना चाहता हूं मनुष्य के भीतर अभाव है, एंप्टीनेस है, वहां सब खाली-खाली है, वहां कुछ भी नहीं है। वहां कोई भराव नहीं है, वहां कोई संपदा नहीं मालूम होती, वहां कोई शक्ति नहीं मालूम होती, वहां कोई सहारा, मित्र, साथी, संगी नहीं मालूम होता। वहां बिल्कुल लोनलीनेस है, अकेलापन है। उस अकेलेपन में, उस एकाकीपन में घबड़ाहट मालूम होती है, उस घबड़ाहट से बचने को मित्र बनाते हैं, परिवार बसाते हैं, समाज बनाते हैं, राष्ट्र बनाते हैं, यह सब भय पर, फीयर पर खड़े हुए हैं। अपने से बचने के लिए हम परिवार बसाते हैं, ताकि लगे कि हम कुछ हैं, हमारे पास शक्ति है, फिर परिवार मिल कर संप्रदाय बनाते हैं, संगठन बनाते हैं, राष्ट्र बनाते हैं, ताकि हमें लगे कि हमारे पास ताकत है। एक अकेला आदमी शक्तिहीन मालूम होता है, एक संगठन के भीतर उसे शक्ति मालूम होने लगती है, एक अकेला आदमी कमजोर मालूम होता है, एक मुल्क की तरह, राष्ट्र की तरह उसके हाथ में ताकत मालूम होने लगती है। ये सारे के सारे संगठन, परिवार से लेकर राष्ट्र तक सब भय पर खड़े हैं और सब अधार्मिक हैं। जो भी चीज भय पर खड़ी है, वह अधर्म है और भय किस बात का है? भय इस बात का है कि मैं हूं अकेला, अकेले में भय मालूम होता है, मैं हूं खाली, खाली में डर मालूम होता है। मैं हूं नाकुछ, नोबडी, इससे भय मालूम होता है घबड़ाहट मालूम होती है, मुझे कुछ होना चाहिए, मेरे पास धन हो, शक्ति हो, पद हो, मुझे लगेगा कि मैं कुछ हूं। और उस कुछ होने से मुझे थोड़ा आश्वासन मिलेगा, मुझे थोड़ा धीरज बंधेगा, मैं मौत के खिलाफ थोड़ा उपाय कर लूंगा, मौत आने वाली है, सब तरफ से घेरती है, एक दिन मौत आकर हर आदमी को नाकुछ कर देती है, मिट्टी में मिला देती है, मैं उसके खिलाफ इंतजाम कर रहा हूं कि मैं कुछ हूं। मौत मुझे मार नहीं सकती। लेकिन मौत सब छीन लेती है और मार देती है।
लेकिन हमारी सारी दौड़ ये अपने भीतरी अभाव को, खालीपन को, नथिंगनेस को भरने की सारी दौड़, अंततः मौत मिट्टी कर देती है और हमें पता चलता है कि हम फिर ना-कुछ हो गए। इसीलिए दुनिया में हर आदमी मौत से डरा हुआ है। मौत से डरने का मतलब! मौत से डरने का मतलब है कि फिर मौत हमें उघाड़ कर ना-कुछ कर देगी। राष्ट्रपति को भी नाकुछ कर देगी, चपरासी को भी नाकुछ कर देगी। जिसके पास धन है उसको भी ना-कुछ कर देगी, जो निर्धन है उसको भी ना-कुछ कर देगी। और हम कुछ भी करें, कहीं भी दौड़ें, बड़े आश्चर्य की बात है, कोई कहीं भी दौड़े, गरीबी में, अमीरी में, पद में प्रतिष्ठा में, अपमान में, सम्मान में, कहीं

से भी दौड़े और किसी भी रास्ते से दौड़े, बड़े आश्चर्य की बात है हर आदमी कहीं से दौड़े और कहीं से जाए, आखिर में मौत में पहुंच जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि हमारी सब दौड़ अंततः हमें मौत में ले जाती है। यानि आप जो मेहनत कर रहे हैं, जो दौड़ रहे हैं, वह कहां के लिए? आप अपनी मौत में जाने के लिए दौड़ रहे हैं और मेहनत कर रहे हैं।
एक छोटी सी कहानी कहूं, उससे मेरी बात खयाल में आए।
एक बादशाह हुआ, उसने रात सपना देखा सपने में उसने देखा कि मौत उसके सामने खड़ी है, और मौत उससे कह रही है कि सावधान! कल मुझे तैयार मिल जाना, सूरज डूबने के पहले तैयार हो जाना, मैं तुम्हें कल लेने आ रही हूं। वह सुबह उठा घबड़ा गया, कोई भी घबड़ा जाता। उसने ज्योतिषी बुलवाए और उनसे पूछा, स्वप्न को जानने वाले मनोवैज्ञानिक बुलवाए, उनको पूछा, उस जमाने के जो फ्रायड होंगे, उनको बुलवाया, उनसे पूछा, पूछा कि क्या मामला है, इस स्वप्न का क्या अर्थ है? उन्होंने कहा कि अर्थ साफ है, मौत सांझ के पहले आ जाएगी, इसमें अर्थ पूछने की क्या बात है? उस राजा ने पूछा कि मैं बचने के लिए क्या करूं? उन्होंने कहाः एक ही उपाय है, आपके पास जो तेज से तेज घोड़ा हो, उस पर बैठ जाएं और भागें, और क्या हो सकता है? और क्या उपाय हो सकता है? राजा था, उसके पास तेज से तेज घोड़ा था। उसने तेज से तेज घोड़ा कसवाया, फिर उसे कोई फिक्र न रही, उसे कोई और फुरसत भी न रही कि कोई और इंतजाम कर ले, एक ही फिकर थी, भागे, वह वैसा ही उठा था, वैसे ही घोड़े को कसवाया और भागा। हवा की रफ्तार से भागा। सांझ होते-होते जब सूरज ढलने को था, तो वह सैकड़ों मील पार कर गया था।
एक बगीचे में, एक घनी छाया के दरख्त के नीचे उसने घोड़े को बांधा, घोड़ा
भी थक गया था, वह भी थक गया था। रात सो लेगा सुबह फिर भागेगा। इतना ही तो हम करते हैं, दिन भर भागते हैं। रात सो लेते हैं, फिर सुबह भागते हैं। वह भी थक गया था, वह भी आदमी था, रुक गया, घोड़े को बांध दिया रात सोने की तैयारी करने लगा, लेकिन घोड़े को बांध कर हटता ही था, उसने देखा कि मौत उसके कंधे पर हाथ रखे खड़ी है। वह तो घबड़ा गया, उसने पूछा कि यह क्या बात है, तुम यहां कैसे? मौत से उसने पूछा कि तुम यहां कैसे? मौत ने कहा कि मैंने तो तुमसे कल कहा था कि तैयार मिलना, और तुम तैयार मिल गए। इसी जगह को मिलने के लिए तो कहा था। ख्याल करो सपने में कौन सा दरख्त था? उस आदमी को खयाल आया, दरख्त देखा सपने में यही दरख्त के नीचे मौत से मिलना हुआ था। उस मौत ने कहा था, कि मैं परेशान थी कि पता नहीं तुम कहीं धीरे-धीरे कोई छोटे-मोटे घोड़े पर बैठ कर तो नहीं आ रहे, नहीं तो सांझ तक न पहुंच पाओ! तुम ठीक तेजी से आए हो, वक्त पर पहुंच गये, चलो। यही जगह मिलने के लिए तो कहा था। वह तेज दौड़ उस जगह ले आई, जहां मौत प्रतीक्षा करती थी। और हमारी तेज दौड़ भी कहां ले जायेगी? किसी की भी दौड़ कहां ले जाती है? हम किस तरफ भागे जा रहे हैं? क्या है लक्ष्य, कहां आप जाते हैं? कहां मैं जाता हूं? निश्चित ही हम मौत की तरफ जाते हैं, इसके सिवाय तो कोई बात संदिग्ध हो सकती है, यह बात असंदिग्ध है कि हर आदमी कैसे भी चले, कुछ भी करे, मौत की तरफ जाता है। हमारा हर उपाय, हमारा हर कदम मौत की तरफ पड़ता है और हम उस दरख्त के नीचे पहुंच जाते हैं, जिस दरख्त के नीचे जिसकी मौत प्रतीक्षा कर रही है, वह वहीं पर पहुंच जाता है।
बड़े आश्चर्य की बात है हम अपने भीतर के अभाव से भागते हैं और आखिर में पता चलता हैं कि मौत के अभाव में पहुंच जाते हैं। अभाव मिटता नहीं है। और जो भी उपाय हम करते हैं, जो भी प्रयोग हम करते हैं, जीवन में, वे सब निष्फल हो जाते हैं। समस्या यह है कि मैं भीतर खाली हूं, भीतर मुझे कोई संगी-साथी नहीं, भीतर कोई संपदा नहीं, भीतर कोई शक्ति नहीं, भीतर सब खाली-खाली है, रिक्त है। भीतर शून्य है, इस शून्य से बचने को भागते हैं, भागते हैं, आखिर में पाते हैं समस्या तो वही की वही रही, और जीवन समाप्त हो गया। जिन समाधानों से हम अपने जीवन को सुलझाना चाहते हैं, वे समाधान सिद्ध नहीं होते, समस्या नष्ट नहीं होती, उनसे आदमी की समस्या का अंत नहीं आता, आदमी पाता है अकेला था, प्रेम करता है, परिवार बसाता है, मौत में फिर पाता है कि अकेला हो गया। फिर कोई उसका साथी-संगी नहीं रह जाता। जिंदगी भर जिनको इकट्ठा किया था, वे फिर उसे विदा दे देते हैं, तुम जाओ, वह अकेला था, फिर

अकेला हो जाता है। संपत्ति इकट्ठी करता है, आया था, तब उसके पास कुछ भी नहीं था, इकट्ठा करता है, इकट्ठा करता है, आखिर में पाता है कि संपत्ति उसे छोड़ देती है, उसे अकेले ही उसे यात्रा करनी होती है। कोई संपत्ति उसके साथ नहीं जाती। जो भी हम करते हैं, वह समस्या है, समाधान नहीं है। जिस खालीपन से भागते हैं, वह खालीपन आखिर में मिल जाता है। जरूर हमारे जीवन की दृष्टि में कुछ भूल है, इस भूल का नाम ही अधर्म है। इस भूल का नाम अधर्म है कि जीवन का हमारा तर्क और गणित कुछ गलत है। एक छोटी सी कहानी से मैं अपनी बात समझाऊं शायद समझ में आ जाए कि हमारे तर्क कैसे भूल भरे होते हैं, और जिन बातों को हम समाधान समझते हैं, वह समाधान नहीं होते, वे फिर समस्या को वहीं के वहीं खड़ा कर देते हैं।
एक ट्रेन में, तेजी से दौड़ती हुई एक गाड़ी में, दो व्यक्ति एक स्टेशन से सवार हुए। एक सज्जन पुरुष थे, एक सज्जन महिला थीं। दोनों ही थे, उस डब्बे में। सज्जन पुरुष ने बैठने के बाद सिगरेट पीनी शुरू कर दी। ऐसा कौन सज्जन पुरुष है, जो सिगरेट नहीं पीता? ऐसा कौन सज्जन पुरुष है, जो किसी न किसी तरह के नशे न करता हो? ऐसा कौन सज्जन पुरुष है, जो किसी न किसी तरह की बेहोशी, उलझाव के रास्ते न खोजता हो? हां, रास्ते अलग-अलग हो सकते हैं, कोई शराब पीता होगा, कोई सिगरेट पीता होगा, कोई तंबाकू खाता होगा, कोई मंदिर में जाकर भजन करता होगा; कोई सुबह से उठ कर गीता पढ़ता होगा, लेकिन ये सब नशे की तरकीबें हैं। अपने को भुलाने के, फॉरगेटफुलनेस के उपाय हैं, वह जो भीतर घबड़ाहट है, अकेलापन है, अभाव है, उसको भुलाने के उपाय हैं, किसी तरह अपने को भूल जायें कहीं भी भूल जायें, किसी तरह भी हमको याद न रहे, हम हैं, लेकिन क्या होगा?
वह सज्जन सिगरेट पीने लगे। महिला भी अपना कुत्ता साथ में लिए हुई थीं। वह अपने कुत्ते से खिलवाड़ करने लगीं। लेकिन धुआं उनको भारी पड़ रहा था। महिला ने उन सज्जन को कहा कि सिगरेट बुझा दीजिए, मुझे एतराज है। सज्जन ने कहाः एतराज तो मुझे भी है, कुत्ते को नीचे फेंक दीजिए। कुत्ते को मैं देख नहीं सकता, बरदाश्त नहीं कर सकता, यह भी क्या जहालत है कि आदमी कुत्ते को लिये बैठा हुआ है? स्वाभाविक था कि यह तो मामला बिगड़ गया। महिला के कुत्ते का अपमान, महिला का अपमान हो गया। सज्जन की सिगरेट को फेंके जाने की बात, सज्जन को ही फेंके जाने की बात हो गई, सारी बात तुम्हारे अहंकार पर चोट कर देती है। ये तो सब सिम्बल्स हैं, ये तो सब प्रतीक हैं अहंकार के। महिला ने झपट कर सज्जन की सिगरेट मुंह से खींची और बाहर फेंक दी। बिल्कुल इसी जमाने की बात है, पहले जमाने की महिलाओं की बात नहीं कह रहा हूं। महिला कोई साधारण नहीं थी, कुलीन थीं, संभ्रांत परिवार से थीं। उनके बापदादे बड़े मकानों में रहे थे, उनके बापदादों के शरीर में खून नहीं बहता था, हीरे- जवाहरात बहते थे। साधारण महिला नहीं थी कि सह लेती, उन्होंने उनकी सिगरेट छीनी और बाहर फेंक दी। लेकिन सभ्रांत व्यक्ति भी, सज्जन भी कोई साधारण न थे। यद्यपि बापदादों ने सोना नहीं खाया उनके, चांदी नहीं खाई थी, लेकिन उनके बापदादे जेल गए थे, और उनके देश के आंदोलन में उन्होंने बड़ी मुसीबतें झेली थीं। और वो खादी पहनते थे, और वे चरखा चलाते थे। और वक्त-बेवक्त उन्होंने अपनी जान लड़ा दी थी। फिर देश में आजादी भी आ गई थी तो उन्होंने त्याग का अपने फल भी ले लिया था, पुराने जमाने के लोग गलत थे, वो त्याग यहां करते थे, स्वर्ग में फल मांगते थे। अब लोग समझदार हैं, वो त्याग यहीं करते हैं, यहीं फल ले लेते हैं। वे गलती में थे। वे पहले समझते थे बाद में वहां स्वर्ग में जायेंगे, तो मिनिस्टर हो जाएंगे, वे यहीं हो जाते हैं। गणित करीब खिसका लिया है, दूर का फांसला छोड़ दिया है, ठीक है, होशियार लोग ऐसा करते हैं। करना चाहिए। नासमझ हैं, जो दूर की बीतों में मौजूदा को छोड़ दें। तो यद्यपि उनका कोई बहुत कुलीन परिवार न था, लेकिन कुलीन परिवार से क्या होता है, उनका परविर देशभक्त था। और उनके बाप ने सजाएं भोगी थीं। और उसकी वजह से वो भी काफी ऊंची जगह पहुंच गये थे। उन्होंने भी उठ कर झपट कर महिला का कुत्ता छीना और डब्बे के बाहर फेंक दिया। यह कहानी कहने में तो मुझे देर लग रही है, मामला तो बहुत जल्दी हो गया, एक सेकेंड में हो गया था। सिगरेट फेंकी गई थी, पीछे कुत्ता फेंक दिया गया था। फिर स्वाभाविक था कि

महिला ने चेन खींची, गॉर्ड दौड़ा, कंडक्टर दौड़े। और नीचे क्या हुआ? नीचे एक चमत्कार हुआ एक मिरेकल हो गया। मिरेकल यह हो गया कि वह कुत्ता लंगड़ाता हुआ आया, अपने मुंह में सिगरेट को दबाए हुए था। सज्जन ने सिगरेट झपट कर छीन ली, महिला ने अपना कुत्ता उठा लिया, फिर गाड़ी में बैठ गये, फिर गाड़ी चलने लगी, सज्जन सिगरेट से धुआं फेंकने लगे, महिला अपने कुत्ते को खिलाने लगी। मामला वहीं का वहीं था। समस्या वहीं की वहीं थी, उन्होंने जो समाधान खोजा, वह कोई समाधान नहीं था। इतनी परेशानी हुई, झगड़ा हुआ, कुत्ते की टांग टूटी; गाड़ी रुकी, यह सब हुआ, लेकिन बात आखिर में वहीं की वहीं थी। वह कुत्ता सिगरेट को मुंह में दबाये खड़ा था, सज्जन ने अपनी सिगरेट छीन ली, महिला ने अपना कुत्ता उठा लिया, फिर डब्बे में वही कथा थी, धुआं फिर फेंका जा रहा था, कुत्ता फिर खिलाया जा रहा था; वह समाधान समाधान नहीं था।
जीवन में रोज हम ऐसा करते हैं कि जिनको हम समाधान कहते हैं, उनसे समस्याओं का कोई अंत नहीं होता। समस्या वही बनी रहती है, समाधान व्यर्थ हो जाता है। और छोटे-छोटे मामलों में ही नहीं जीवन के वृहत्तर, गहरे से गहरे मामलों में भी यही होता है। आपका कौन सा समाधान समाधान सिद्ध हुआ है। आपने अपने जीवन की कौन सी समस्या हल कर ली है? कोई एकाध समस्या हल करने का आपको ख्याल आता है? समाधान तो बहुत पकड़े होंगे, समस्याएं अलग खड़ी होंगी, समाधान अलग पड़े होंगे। कोई समस्या हल नहीं हुई होगी। बड़े आश्चर्य की बात है, और बड़े रहस्य की कि किसी आदमी की एक इंडिविजुअल समस्या हल हो भी नहीं सकती। या तो किसी मनुष्य की सारी समस्याएं हल हो जाती हैं या फिर सारी समस्याएं बनी रहती हैं। यह इसलिए होता है कि वस्तुतः समस्याएं अलग-अलग नहीं हैं, समस्या बुनियाद में एक है। और आप हर समस्या के लिए अलग-अलग समाधान खोजते हैं, क्रोध आता है, तो उसके लिए समाधान खोजते हैं; लोभ आता है तो उसके लिए अलग समाधान खोजते हैं; घृणा आती है, उसके लिए अलग समाधान खोजते हैं, ईर्ष्या आती है, उसके लिए अलग समाधान खोजते हैं, भूल में हैं आप। ये बीमारियां अलग-अलग नहीं हैं, मनुष्य की सारी बीमारियां बुनियाद में एक बात पर खड़ी हैं और वह बात यह है कि वह जो है, जैसा है, उसे स्वीकार करने को राजी नहीं है। उससे अन्यथा होना चाहता है, उससे भिन्न होना चाहता है, छोटा है तो बड़ा होना चाहता है, गरीब है तो अमीर होना चाहता है। कुरूप है तो सुंदर होना चाहता है, कमजोर है तो शक्तिशाली होना चाहता है। और हमारी पूरी संस्कृति, और हमारी पूरी शिक्षा, और हमारे पूरे संस्कार इस बात को सहारा देते हैं कि मैं एक तराजू रखूं, उसमें एक किलो का बाट रखूं एक पलड़े पर, दूसरे पलड़े पर दो किलो का बाट रखूं। दो किलो का पलड़ा जमीन से लग जाएगा तो क्या हम दो किलो के पलड़े को फूल-मालाएं पहनाएंगे, और हाथ जोड़ेंगे कि तुम बहुत महान हो, तुमने इस एक किलो को हरा दिया? हम कहेंगे इसमें कौन सी खास बात है, वह एक किलो का बाट है, तुम दो किलो के बाट हो। अगर मुझे आप हरा दें और मेरी छाती पर बैठ जाएं तो आपके गले में लोग फूल-मालाएं पहनाएंगे कि तुमने बहुत गजब कर दिया, और मैं इतना ही समझूंगा कि मैं एक किलो का बाट हूं और आप दो किलो के बाट हैं। इसमें इतने आश्चर्य की बात क्या है?
जीवन जैसा है, मैं जैसा हूं, कोई भी अपने व्यक्तित्व को स्वीकार नहीं
कर रहा है, हम सब अपने व्यक्तित्व से भागे हुए हैं, हमें कुछ और होना है। और जिनकी नकल हम करना चाहते हैं, अगर उनके पास जाकर जांच करेंगे, तो आपको पता चलेगा कि वे किसी और की नकल करना चाहते हैं। अगर आप उनके पास दोनों मिल कर जाएंगे तो आप पाएंगे कि वे किसी तीसरे की नकल करना चाहते हैं। अगर आप तीनों मिलकर चौथे के पास जाएंगे तो आखिर में आप उस आदमी को नहीं खोज सकते, जिसकी सब नकल करना चाहते हैं। हर आदमी किसी और की नकल करना चाहता है। हम सब एक चक्कर में घूम रहे हैं और एक-दूसरे की नकल करना चाहते हैं। जब तक यह चक्कर है, हम एक-दूसरे की नकल करना चाहते हैं और यह हमें सिखाया गया है। हमें हजारों साल से यह सिखाया गया है कि तुम महावीर जैसे हो जाओ, बुद्ध जैसे हो जाओ, गांधी जैसे हो जाओ; इस जैसे हो जाओ, उस जैसे हो जाओ लेकिन कोई यह कहने को नहीं है आपसे कि आप आप जैसे हो जाओ और किसी और जैसा होने की आपको जरूरत नहीं है। जब तक मनुष्य को यह गलत बात सिखाई जाएगी कि तुम किसी और जैसे हो जाओ, तब तक जीवन में दुख और पीड़ा अनिवार्य है, कोई समस्या हल नहीं

हो सकती। और मैं आपसे निवेदन करूं, क्या आपको पता है कि कभी कोई मनुष्य किसी दूसरे जैसा हुआ है? राम को हुए कितने वर्ष हुए, कृष्ण को हुए कितने वर्ष हुए, क्राइस्ट को हुए कितने वर्ष हुए; कोई दूसरा क्राइस्ट, कोई दूसरा कृष्ण, कोई दूसरा महावीर दिखाई पड़ता है, इस पूरे मनुष्यजाति के इतिहास में। इसमें इंडिविजुअल्स तो दिखाई पड़ते हैं, टाइप्स कहां दिखाई पड़ते हैं? कोई दूसरा महावीर, तीसरा महावीर, चौथा महावीर दिखाई पड़ता है? नहीं प्रत्येक मनुष्य की प्रतिभा अद्वितीय है। यूनीक है। इसलिए नकल घातक है, आदर्श खतरनाक हैं, किसी दूसरे जैसे होने की चेष्टा कष्टपूर्ण है। और उससे कभी कोई हित और हल नहीं हो सकता।
अगर एक बगीचे में फूल लगे हों और गुलाब चमेली जैसा होने में लग जाए, और चमेली चंपा जैसी होने में लग जाए और कुछ कुछ और होने में तो वह बगिया उजड़ जाएगी, उसमें कोई फूल नहीं खिलेगा कभी, उसमें कोई पत्ता हरा नहीं दिखोगा कभी। क्योंकि सब पौधे चिंता में, एंजायटी में पड़ जाएंगे। चंपा को चमेली जैसा होना है, कितने प्राण संकट में पड़ जाएंगे? और होगा क्या? चंपा क्या चमेली हो सकती है? नहीं, चंपा कभी चमेली नहीं हो सकती। हां, एक बात हो जायेगी, जो चंपा चमेली होने की कोशिश करेगी, वह चंपा नहीं हो पाएगी। चंपा कैसे हो पाएगी? उसकी सारी व्यस्तता तो चमेली होने में व्यय हो जाएगी, उसकी सारी शक्ति तो चमेली होने में लग जाएगी। चमेली तो हो नहीं सकती, क्योंकि अपने स्वभाव के बाहर कोई भी नहीं जा सकता, अपने व्यक्तित्व के बाहर दूसरा व्यक्ति नहीं बन सकता; लेकिन एक बात हो जाएगी, चंपा चमेली नहीं हो पाएगी, लेकिन चंपा भी नहीं हो पाएगी। और तब उस वृक्ष के पौधे के प्राण कितने संकट में, पीड़ा में पड़ जाएंगे। सारी मनुष्य-जाति के प्राण इसी तरह के संकट में पड़े हैं।
धर्म कहता है कि तुम्हारा जो स्वभाव है, वही धर्म है। वही धर्म है। और उसे छोड़ कर किसी दूसरे की तुम नकल मत करना। परधर्म भयावह। वह दूसरे का जो धर्म है भयभीत करने वाला है, उसका मतलब यह नहीं है कि तुम हिंदू हो तो मुसलमान से डरना, या मुसलमान के धर्म से डरना; और जैन हो तो ईसाई के धर्म से डरना। नहीं, प्रत्येक व्यक्ति का जो स्वरूप है, वह उसका धर्म है। उससे अन्यथा होने की सब कोशिश अधर्म है, और उस अधर्म में उसके व्यक्तित्व में जो पंगुता आयेगी, क्रिपिल्डनेस आएगी, टूटेगा, खंडित होगा, सड़ेगा, मरेगा लेकिन आनंद, सुवास, संगीत पैदा नहीं हो सकते। आदर्श ने मार डाला है। हर आदमी की छाती पर पत्थर की तरह आदर्श सवार हैं। वह किसी जैसा होना चाहता है, बिना इसकी फिकर किए कि मैं क्या हूं? जब तक आप किसी जैसा होना चाहते हैं, तब तक आप किसी जैसा होना चाहते हैं, तब तक आप चिंता को आमंत्रण दे रहे हैं, तब तक आप दुख को बुलावा दे रहे हैं। कृपा करें, अपने जैसे होने का इरादा करें। यह अपने जैसे होने का इरादा क्या है? इसको मैं धर्म कहता हूं। अपने जैसे होने के इरादे को मैं साधना कहता हूं। दूसरे के जैसे होने के इरादे में ईर्ष्या है। काम्पिटीशन है, स्पर्धा है, आप सोचते होंगे हम महावीर जैसा होना चाहते हैं तो महावीर की बड़ी प्रशंसा हो रही है, इस भूल में मत पड़ जाइये, महावीर से आपके मन में ईर्ष्या हो रही है। आप सोचते हों कि हम बुद्ध के जैसा होना चाहते हैं तो बुद्ध के बड़े अनुयायी हैं; धोखे में मत पड़िए आप अनुयायी वगैराह कुछ भी नहीं है, बुद्ध की शांति, बुद्धि का आनंद आपके भीतर ईर्ष्या पैदा कर रहा है, काम्पिटीशन पैदा कर रहा है, आप भी उन जैसा होना चाहते हैं। आपके बगल का आदमी बड़ा मकान बनाता है, आप भी बड़ा मकान बनाना चाहते हैं, तो क्या आप उस आदमी को आदर करते हैं जो आपके बगल में रहता है? एक आदमी बहुत धन इकट्ठा कर लेता है, आप भी इकट्ठा करना चाहते हैं, तो क्या आप उस आदमी को आदर करते हैं, जिसने धन इकट्ठा कर लिया? नहीं, आपके अहंकार को पीड़ा हो रही है, मैं भी वैसा क्यों न हो जाऊं? आदर्श, अहंकार आधारित होते हैं। गांधी हों, कोई भी हों, कोई भी आ जाए; उसको देख कर आपके अहंकार को चोट लगती है कि ये आदमी इतना ऊंचा हो सकता है तो मैं क्यों न हो जाऊं। लेकिन आपसे निवेदन करूं, इस जगत में केवल वे ही आदमी ठीक-ठीक विकसित हो पाते हैं, जो किसी की नकल नहीं करते और जिनकी आप नकल करना चाहते हैं, खयाल करें उनने किसी की कभी नकल नहीं की है। क्राइस्ट ने किसकी नकल की?

बुद्ध ने किसकी नकल की? लाओत्से ने किसकी नकल की? वे किसकी टुकापियां थे? वे खुद थे। अपने खुदी थे। इनडिविजुअलिटी थी। आपमें कोई इनडिविजुअलिटी है? धर्म का संबंध इनडिविजुअल से है, व्यक्ति से है; आपमें कोई इनडिविजुअलिटी है? आप व्यक्ति हैं? आप बिल्कुल व्यक्ति नहीं हैं। आपके खयाल समाज से उधार मिले खयाल हैं। आपकी ईर्ष्याएं, आपकी जलनें दूसरों की नकल के बोझ से हैं, आपके पास खुद का क्या है? और जब आप इस सारी नकल और दौड़ में पड़े रहेंगे तो अपनी आत्मा को कैसे पा सकेंगे? आत्मा का अर्थ है व्यक्तित्व। आत्मा का अर्थ है, उस खुद की निजता को पा लेना, जो आपकी है और किसी दूसरे से उधार नहीं पाई गई। आपके विचार दूसरों के, आपके आदर्श दूसरों के, आपका आचरण दूसरों का, आपके कपड़े दूसरों से उधार लिए हुए, आपके मकान दूसरों की नकल पर बनाए हुए, आपका सारा ढांचा दूसरों का; आपकी अपनी आत्मा कहां है? और अगर खुद की कोई आत्मा न हो, सारा व्यक्तित्व उधार हो तो स्वाभाविक है कि आप नरक में होंगे। जिसके पास अपनी आत्मा होती है और व्यक्तित्व उधार नहीं होता, जिसके प्राण अपने होते हैं और किसी से दूसरे से मांगकर नहीं लाए गए होते, वह व्यक्ति यहीं और इसी जमीन पर मोक्ष को उपलब्ध कर लेता है। आत्मा को पा लेना मुक्त हो जाना है। कैसे यह होगा? यह होगा, सारे आदर्श छोड़ देने होंगे। हिम्मत करके किसी की भी नकल करनी छोड़ देनी होगी। हिम्मत करके स्वीकार कर लेना होगा कि मैं कौन हूं, क्या हूं और उस स्वीकृति से एक क्रांति पैदा होती है। जब मैं स्वीकार करता हूं कि मैं जो हूं वही होऊंगा, मेरे भीतर जो पोटेंशियलिटी है, जो बीज है, उसी को विकसित करूंगा, मैं किसी की नकल नहीं करूंगा। अगर मैं गुलाब हूं तो गुलाब सही, अगर मैं घास का एक फूल हूं तो घास का फूल सही, गौरव इसमें नहीं है कि कोई गुलाब का फूल हो जाए, गौरव इसमें है कि फूल खिले और पूरा खिल जाए और ये सब फासले, गुलाब के फूल के और घास के फूल के मनुष्य निर्मित हैं। अगर मनुष्य जमीन पर न हो तो गुलाब का फूल घास के फूल से बेहतर है? फूल फूल हैं, और सारा जजमेंट, सारा वैल्युएशन मनुष्य का है। हां एक वैल्युएशन फिर भी होगा, एक ऐसा फूल होगा जो पूरा खिल गया, वह चाहे गुलाब का हो, चाहे घास का हो, एक ऐसा फूल होगा जो पूरा नहीं खिल पाया है, जिसकी पंखुड़ियां बंद रह गईं, वह चाहे घास का हो, चाहे गुलाब का हो, मूल्यांकन दो हैं, फूल खिल जाए, सौरभ प्रकट हो जाए तो तो आनंद हैं, तो तो ठीक है, फूल मुड़ा रह जाये, पंखुड़ियां खिल न पाएं, प्रांण संकुचित, कुंठित रह जायें तो विकृति है, बीमारी है। मैं आपसे कहूं किसी को किसी जैसा नहीं होना है, प्रत्येक को उसके भीतर जो है, उसे खिलाना है, पूरा फुलाना है। कैसे यह होगा? डर तो यह है कि जब हम अपने भीतर देखते हैं तो पाते हैं क्रोध, पाते हैं लोभ, पाते हैं काम, पाते हैं सेक्स, पाते हैं अहंकार; तो हमें डर लगता है, डर लगता है कि इन सबको लेकर हम क्या करेंगे? तो हम जल्दी से उनकी नकल करना शुरु करते हैं, जिनमें अहंकार नहीं है, क्रोध नहीं है, जिनमें लोभ नहीं है हम उनकी नकल करना शुरु करते हैं। हमको तो लगता है, डर कि हम तो लोभी हैं, क्रोधी हैं, बुरे आदमी अगर हम अपने भीतर ही रह गए और किसी की नकल न की तो मर जाएंगे, यह क्रोध ही क्रोध है और तो यहां कुछ भी नहीं है। बात सच है, यह ठीक है कि भीतर क्रोध है, भीतर अहंकार है, भीतर लोभ है लेकिन क्या किसी ऐसे व्यक्ति की नकल करके जिसके भीतर लोभ न हो आप अपने लोभ को मिटा सकेंगे।
एक फकीर हुआ बायजीद उसके पास एक युवक गया और उसने कहा कि कृपा करें और आपके वस्त्र मुझे दे दें। मैं भी संन्यासी होना चाहता हूं, मैं अपने वस्त्र पहन लूं ऐसे पवित्र वस्त्र और कहां मिलेंगे? बायजीद ने कहा वस्त्र तो मैं तुझे सारे दे दूं, लेकिन मैं तुझसे एक प्रश्न पूछता हूं कि अगर कोई स्त्री किसी पुरुष के वस्त्र पहन ले तो क्या पुरुष हो जाएगी? या कोई पुरुष स्त्री के वस्त्र पहन ले तो क्या स्त्री हो जाएगा? अगर यह होता हो तो तू मेरे वस्त्र ले जा और पहन ले।
आपको हंसी आती है कि वह आदमी बड़ा नासमझ रहा होगा, लेकिन महावीर के पीछे महावीर के जैसी शक्लें बनाये हुए जो घूम रहे हैं, वो कोई अगल हैं? या बुद्ध के पीछे बुद्ध के जैसे कपड़े लगा कर जो घूम रहे हैं, वो कोई अलग हैं? उनकी भी बुद्धि, उनका भी गणित यही है। गणित यह है कि तुम जैसे रहते हो, तुम

जैसे उठते-बैठते हो, तुम जो खाते हो, पीतो हो ठीक हम भी वैसा ही करेंगे तो सब हो जायेगा। नहीं, इस तरह कुछ भी नहीं होगा। प्राण बदलते हैं, अंतस बदलता है तो आचरण बदलता है, आचरण के बदलने से किसी का अंतःकरण न कभी बदला है और न बदल सकता है। अंतस कैसे बदलेगा? एक रास्ता ही हम जानते रहे हैं, क्रोध है तो उससे विरोधी गुण को लाओ। क्रोध है तो क्षमा को लाओ, झूठ है तो सत्य को लाओ, हिंसा है तो अहिंसा को लाओ। यही जानते रहे हैं। अगर हमारे भीतर क्रोध है, तो हम अक्रोध को लायें, गलत है यह बात; गलत इसलिए है कि क्रोध है, क्रोधी मन अक्रोध को कैसे ला सकता है, लोभ है तो लोभी मन त्यागी कैसे हो सकता है? अहंकार है तो अहंकारी मन विनीत कैसे हो सकता है? ह्युमिलिटी कैसे आ सकती है? और इसलिए तो यह गड़बड़ हो जाती है, देखा आपने, उन लोगों को देखा जो बहुत विनीत हैं, और उनके विनय में आपको अहंकार दिखाई पड़ता है या नहीं दिखाई पड़ता है? उनको यही अहंकार हो जाएगा कि मुझसे बड़ा विनीत और कोई भी नहीं। आपने सेवकों के दंभ को देखा है? आपने साधुओं के दंभ को देखा है? उनको यही दंभ हो जाएगा, मुझसे बड़ा त्यागी और कोई भी नहीं। स्वाभाविक है अहंकार हो तो विनय आ ही नहीं सकती। फिर क्या रास्ता है? अहंकार चला जाए तो विनय आती है। अहंकार के रहते विनय नहीं लाई जा सकती। अहंकार का अभाव है विनय। अहंकार की विरोधी नहीं है, स्मरण रखें बहुत सूक्ष्म बात है। अर्थपूर्ण है, उस पर पूरे जीवन की दिशा निर्भर करेगी।
क्रोध और क्षमा में विरोध नहीं है, क्षमा क्रोध की विरोधी नहीं है। क्योंकि जहां क्रोध होता है, वहां क्षमा हो ही नहीं सकती। क्षमा क्रोध का अभाव है। जहां क्रोध नहीं होता, वहां जो है उसका नाम क्षमा है। इसलिए आप क्षमा को ला नहीं सकते, आप क्रोध को जरूर हटा सकते हैं। क्षमा को लाना हो तो किसी का अनुसरण करना पड़ता है, क्रोध को हटाना हो तो खुद का आत्मानुसंधान और विश्लेषण करना होता है। मेरे भीतर क्रोध है, क्यों है? मैं इस तथ्य के प्रति जागूं, देखूं, पहचानूं और एक बड़े आश्चर्य की बात है, बहुत आश्चर्य की बात है जब तक हम क्रोध से लड़ते हैं, तब तक क्रोध में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। नहीं हो सकता इसलिए कि क्रोध से लड़ना अपने ही दोनों हाथों को लड़ाने जैसा है। क्रोध की ताकत भी मेरी है और लड़ने वाले की ताकत भी मेरी है, लड़ने वाला कौन है, और क्रोध करने वाला कौन है, ये कोई दो हैं? ये एक ही व्यक्ति है। क्रोध भी वही करता है, क्रोध से लड़ता भी वही है। जब एक ही व्यक्ति अपने ही दोनों हाथों को लड़ाएगा, तो क्या होगा? क्या कोई जीत हो सकती है? जीत तो नहीं होगी कोई हाथ नहीं जीतेगा, क्योंकि दोनों के पीछे एक की ताकत है। लेकिन एक बात हो जायेगी, दोनों हाथ लड़ते-लड़ते हाथों में तो कोई नहीं जीतेगा, लड़ाने वाला धीरे-धीरे मर जाएगा। उसकी ताकत नष्ट हो जाएगी। क्रोध से लड़ने वाला क्रोध को नहीं जीत पाता, लड़ने में अपनी ही शक्ति को खो देता है। और जिसकी शक्ति जितनी कम हो जाती है, वह उतना क्रोधी हो जाता है। कमजोर का लक्षण है क्रोध। इसलिए आप देखेंगे आपके बड़े-बड़े ऋषि- मुनि जिनकी आप कथाएं पढ़ते हैं, वे क्रोध में हद दर्जा आगे थे, उन्होंने अभिशाप दिए, लोगों को जलाने के, मार डालने के, जन्मों तक परेशान करने के अभिशाप दिए। धन्य थे ऋषि-मुनि! क्रोध से लड़े थे, क्रोध से लड़ कर कमजोर हो गए थे, तो क्रोध और प्रदीप्त हो गया, जितना आदमी कमजोर हो उतना क्रोध बढ़ जाता है। कोई व्यक्ति कभी भी अपने किसी दुर्गुण से लड़ कर विजय नहीं पा सकता। फिर क्या करे?
पहली बात लड़ाई छोड़ दे, बिल्कुल छोड़ दे। आप कहेंगे तब तो बड़ा मुश्किल होगा। अगर मैंने क्रोध से लड़ाई छोड़ दी, फिर तो मैं एकदम क्रोधी हो जाऊंगा। अगर आप क्रोधी हैं तो समझ लें कि कोई हर्जा नहीं है, अगर मैं क्रोधी हूं तो मुझे पूरी तरह जानना चाहिए कि मैं क्रोधी हूं और अपने पूरे क्रोध से परिचित होना चाहिए। यह आपकी शक्ति है, इससे घबड़ाइए मत, इससे परिचित होइए और एक रहस्य का अनुभव करिए कि जैसे ही आप लड़ाई छोड़ेंगे कि आपके पास लड़ने में जो शक्ति व्यय होती थी, वह बच जाएगी। और वह बची हुई शक्ति आपको शक्तिशाली बनाएगी। और जितना व्यक्ति शक्तिशाली होता है, उतना ही क्रोध कम होता है। क्योंकि क्रोध कमजोर का लक्षण है। क्रोध है वीकनेस। जितनी शक्ति आती है, उतना क्रोध कम होता है। क्रोध से लड़ाई छोड़िये, फिर क्या करिये?

क्रोध के प्रति जागिए, लड़िए मत। भागिए मत, जागिए। यह मैं नहीं कह रहा हूं कि आप जाइए और क्रोध करिये। मैं यह कह रहा हूं कि क्रोध के प्रति जागिए। देखिए अपने भीतर कि कहां-कहां क्रोध है? किन-किन चित्त की स्थितियों में क्रोध है, कहां-कहां सेक्स है, कहां-कहां अहंकार है, जागिए, पहचानिए; और लड़ाई छोड़ दीजिए, लड़ाई में आप एक बात मान लेते हैं कि क्रोध अलग है। अहंकार अलग है, सेक्स अलग है, ये कोई भी अलग नहीं हैं। आपके चित्त की स्थितियां हैं, शक्तियां हैं। जब आप इनको स्वीकार करके देखना शुरु करेंगे तो एक बहुत आश्चर्य की बात है, कुछ परिवर्तन हैं, जो मात्र देखने से हो जाते हैं। इस जगह अंधेरा हो और हम एक दीया ले आयें और अंधेरे को देखें, क्योंकि अंधेरे को देखने के लिए दीया लाना पड़ेगा। हम अंधेरे को देखें तो अंधेरा विलीन हो जायेगा, जैसे ही प्रकाश आएगा अंधेरा विलीन हो जाएगा।
जब कोई व्यक्ति अपने पूरे प्राणों की शक्ति से अपनी किसी बुराई को देखना शुरू करता है तो यह बहुत आश्चर्य की बात है कि उस देखने के प्रकाश में बुराई क्रमशः विलीन और क्षीण हो जाती है। दर्शन अदभुत शक्ति है और दर्शन बहुत ट्रांसफॉर्मिंग फोर्स है। परिवर्तनकारी, क्रांतिकारी शक्ति है। इस दर्शन की शक्ति को ही ध्यान कहा गया है। ध्यान का अर्थ यह नहीं है कि आप बैठे हैं और राम-राम, राम जप रहे हैं, उससे तो माइंड डल हो जाएगा। उससे तो मस्तिष्क की जड़ता आ जाएगी। कोई एक शब्द बार-बार दोहराने से कोई मस्तिष्क का विकास होगा, जिन कौमों ने भी इस तरह के शब्द दोहराए हैं, उनकी पूरी कौमें की कौमें जड़ हो गई हैं। उनसे न कुछ अविष्कार हुआ, न कोई सर्जन हुआ, न उनसे कुछ क्रिएशन हुआ। दरिद्र, दीन, दुखी, पीड़ित पूरी कौम हो गई है। क्योंकि मन बैठा हुआ है और आप राम-राम जप रहे हैं, इससे क्या होगा? एक आदमी बैठा-बैठा कुर्सी-कुर्सी जप रहा है, एक आदमी बैठा हुआ झाड़-झाड़ जप रहा है तो क्या होगा? अगर पूरा मुल्क इसको समझ ले और इस तहर करने लगे तो मुल्क मर गया, तो मुल्क सड़ गया और उसकी पूरी संस्कृति उसके प्राण खो देगी। राम-राम जपना ध्यान नहीं है। और न बैठ कर माला फेरना ध्यान, क्या इडियाटिक हमने सारी बातें पकड़ रखी हैं, कैसी मूर्खतापूर्ण? एक आदमी एक माला को लिये है और गुरिए सरका रहा है और सोच रहा है कि भगवान के करीब पहुंच रहे हैं, गुरिए सरकाने से? लेकिन हमको यह खयाल रहे, यह ध्यान नहीं है; ध्यान का अर्थ है चित्त की हर एक स्थिति के प्रति सजग हो जाना, अवेयरनेस। अगर मेरे भीतर क्रोध है तो मैं अपने सारे प्राणों को इकट्ठा करूं और क्रोध के प्रति जाग जाऊं। फिर देखें क्या होता है? आपके जागते ही क्रोध विलीन होने लगेगा। आप जितने होश से भरेंगे, कभी होश से भर कर क्रोध करके देखें, फिर मेरी बात समझ में आ जाएगी। क्रोध आए, उसी वक्त एकदम सजग हो जाएं, और अपने क्रोध को देखें और देखें कि क्रोध कहां है? आप हैरान हो जाएंगे, आप जागेंगे, जानेंगे क्रोध गया। सोया हुआ आदमी क्रोध करता है। सोया हुआ आदमी सपने देखता है, जागने के बाद सपना कहां?
ये सब सपने हैं, इनसे लड़ने की जरूरत नहीं है, जागने की जरूरत है। जीवन
की इन सारी चित्त की विकृतियों के प्रति जागें और देखें कि जागने से क्या होता है? कितना आश्चर्य है और कई बार ऐसा हो जाता है कि हम कहीं और समस्या को खोजते रहते हैं और समस्या कहीं और होती है। यह क्रोध का होना समस्या नहीं है, निद्रा का होना, मूर्च्छा का होना समस्या है। हम खोजते हैं अक्रोध में हल, अक्रोध में कोई हल नहीं है। क्षमा में कोई हल नहीं है। हल है जागरण में, होश से भर जाने में। विवेक में। लेकिन हम कहीं और खोजते हैं, एक कहानी कहूं उससे शायद खयाल आ जाए।
एक राजा का बड़ा वजीर मर गया था। जब बड़ा वजीर मर गया तो सवाल उठा कि उसके राज्य में जो सबसे बुद्धिमान आदमी हो उसको खोजा जाए। तो बड़ी-बड़ी परीक्षाओं की व्यवस्था की गई। बहुत से लोगों ने परीक्षाएं दी फिर अंततः बहुत सी सीढ़ियां पार करते-करते तीन व्यक्ति चुने गए। वे उस राज्य के सर्वाधिक बुद्धिमान लोग थे। लेकिन अब भी सवाल था, उन तीन में से एक को चुनना था। इसलिए अंतिम निर्णायक परीक्षा तय की गई। एक दिन पहले अफवाह उड़ा दी गई, जैसा आजकल सभी परीक्षाओं में एक दिन पहले पता चल जाता है कि पेपर क्या आने वाला है। ऐसी न मालूम कैसी गड़बड़ हुई कि अफवाह पहले ही उड़ गई कि

क्या परीक्षा होने वाली है? अफवाह यह थी कि कल राजा सुबह ही उन तीनों को एक कमरे में बंद कर देगा, उस कमरे में एक ही दरवाजा है, उस दरवाजे पर उस समय के इंजीनियरों, गणितज्ञों, मैथेमेटिशियंस की सलाह से एक ऐसा अदभुत ताला लगाया गया है, जो गणित की एक पहेली है। जो गणित में बहुत होशियार होगा वही उस पहेली को हल कर सकता है और ताले को खोलने की तरकीब निकाल सकता है, उसकी कोई चाबी नहीं है। उसकी एक पहेली है।
एक यांत्रिक पहेली है, जो आदमी उस दरवाजे को खोल कर बाहर निकल जायेगा
वह वजीर बना दिया जाएगा। वह सबसे बुद्धिमान आदमी सिद्ध हो जाएगा। आप सोच सकते हैं, बेचारे बड़ी मुसीबत में पड़ गये। पर्चा पता न चले तो भी मुसीबत कम होती है, पर्चा पता चल जाये तो मुसीबत और बढ़ जाती है। रात आराम से सोते तो उस रात बड़ी मुश्किल हो गई। भागे, गये दुकानों की किताबों पर गये, क्योंकि क्या करते, जब भी आदमी को खोज करनी होती है तो वह किताब की तरफ जाता है, शास्त्र की तरफ जाता है। उन्होंने पुराने शास्त्र खुजवाए कि तालों के संबंध में कोई ग्रंथ हो तो उसको देखें, गणित की किताबें लाए, इंजीनियरिंग, यांत्रिकी की किताबें लाए, रात भर लेकिन यह दोनों ही आदमियों ने किया। एक बड़ा पागल था। उसको पर्चा पता चल गया, फिर भी उसने कोई फिकर नहीं की। दोनों उस पर हंसते थे कि यह मूढ़ है, वह अपना चादर तान कर सो गया। समझा उन्होंने कि इसकी हिम्मत नहीं है, प्रतियोगिता में खड़े होने की, शायद भाग जाएगा सुबह होने के पहले। वे दोनों रात भर शास्त्रों को पढ़ रहे हैं, गणित का हिसाब लगा रहे हैं। वह उन्होंने जिंदगी में कभी किया नहीं था, तो शाम को जितने कंफ्यूज्ड थे, सुबह उससे ज्यादा कंफ्यूज्ड हो गये। गणित से परिचित न थे। इंजीनियरिंग से परिचित न थे, बड़े-बड़े शास्त्र, मोटे, और हमारा ख्याल यह होता है कि जितना बड़ा शास्त्र होता है उतना ही बड़ा सत्य उसमें होता है। किसी धर्म की छोटी किताब हो तो वह धर्म छोटा हो जाता है। शास्त्र बड़ा। फिर जितना पुराना शास्त्र हो, उतना ज्यादा सत्य होता है, तो सभी धर्म कोशिश करते हैं कि हमारा शास्त्र सबसे मोटा, खूब मोटी जिल्द में छाप दें, खूब मोटे पन्ने में, बड़े-बड़े अक्षरों में और सबसे पुराना, क्योंकि सबसे पुराना जो होता है वह उतना ही कीमती उतना ही सच होता है।
तो पुराने से पुरानी किताबें बेचारे ले आएं, एक किताब पलटें फिर दूसरी, क्योंकि रातभर थोड़ा सा वक्त जिंदगी बड़ी कितनी। रात छोटी, बहुत शास्त्र सारे कमरे में भर लिए, फिर से उस पर, इस पर; रात भर, सुबह तक हालत उनकी यह हो गई कि अगर आप उनसे पूछते कि दो और दो कितने? तो वे नहीं बता सकते थे। पंडित बता सकते हैं कि दो और दो कितने? नहीं बता सकते, कोई पंडित नहीं बता सकता। क्योंकि पंडित होते-होते दिमाग तो विकृत हो जाता है। उसकी रटी हुई बातें पूछ लें तो बता देगा, लेकिन जिंदगी कोई समस्या खड़ी कर दे तो खड़ा रह जाएगा। उससे पूछें गीता के श्लोक का अर्थ फौरन बता देगा, वह तो मशीन है, उसने तो याद किया हुआ है। लेकिन जिंदगी कोई समस्या खड़ी कर दे तो मुश्किल हो जायेगी।
लेकिन सुबह तक उन्होंने समझा कि हम तो तैयार हो गए, वह आदमी सोकर उठा, रोज की बजाय और देर से उठा, तो उन्होंने कहा, तुम बिल्कुल मूढ़ मालूम होते हो, रात भर सोये रहे, वह कुछ भी नहीं बोला। क्योंकि जो जानता है वह मूढ़ों की बात पर कुछ भी नहीं बोलता है। तीनों चले राजमहल की तरफ, जिन दो का शास्त्र ज्ञान घना हो गया था उनके पैर तो डगमग हो रहे थे, कहीं रखते थे, कहीं पड़ते थे। हमेशा ऐसा ही हुआ है, पंडित पैर कहीं रखता है, कहीं पड़ता है। पंडित से अंधा कोई होता है दुनिया में? क्योंकि आंख तो बचती ही नहीं, वह तो पढ़ते- पढ़ते ही नष्ट हो जाती है। खैर किसी तरह डगमगाते हुए वे महल द्वार तक पहुंचे, मगर तीसरा आदमी गीत गुनगुनाता हुआ चल रहा था, वह अपने भीतर गणित चला रहे थे। रात भर जो सीखा था, वह घूम रहा था, घूम रहा था, चक्कर खा रहा था। पैर कहां, हम कहां, उसका कहां पता था। हिसाब चल रहे थे भीतर कि अगर ऐसा हो तो क्या हो, वैसा हो तो क्या हो?
पहुंचे राजमहल। सच थी, अफवाह सच भी, पर्चा सच में ही पता चल गया था। वे
एक कमरे में बंद कर दिए गए। और राजा ने कहाः जो पहले निकल आएगा, वह बड़ा वजीर हो जायेगा। बड़ा भारी ताला, ताला क्या जैसे बड़ी मशीन उस दरवाजे पर लटकी थी।

उस मशीन में बड़े कलपुर्जे थे, हर कलपुर्जे पर गणित के अंक और चिह्न बने हुए थे। उनके तो प्राण निकल गए, ये दोनों तो उन्हें देख कर ही घबड़ा गए। खैर अब वह तो हल करना ही था, बंद थे भीतर, निकलना ही था। वजीर हो न हों, कम से कम बाहर तो निकलना ही पड़ेगा। अपनी-अपनी कागज कलम लेकर देखने में लग गये और यह भी आपको बता दूं, हालांकि बताना नहीं चाहिए क्योंकि यह शिष्टाचार नहीं है; घर से चलते वक्त उन्होंने कुछ किताबें उन्होंने अपने खीसें में और कपड़ों में भी छुपा ली थी। अगर जरूरत पड़ जाए... । यह मुझे कहना नहीं चाहिए, क्योंकि यह बात ठीक नहीं है, किसी के बाबत बताना। लेकिन ऐसा कौन परीक्षार्थी है, जो किताबें छिपा कर नहीं जाता है? खींसे में छिपाता है, कोई दिमाग में घुसेड़ लेता है, बात तो एक ही है, कोई फर्क है क्या? तो वो बहुत सी किताबें भी ले गए थे, उनका बोझ अलग था, वो जल्दी उन्होंने जैसे ही राजा बाहर हुआ किताबें खोली। जल्दी हिसाब-किताब लगाने में लग गये, ताले को इधर से देखते थे, उधर से देखते थे, नीचे से, ऊ पर से एक-एक अंक लिखते थे। मगर वह जो तीसरा पागल था, निपट ही पागल रहा होगा; वह तो आंख बंद करके वहां भी बैठ गया एक कोने में। उन्होंने सोचा कि यह जड़बुद्धि इसका क्या होगा? वह कुछ अजीब ही था, वह न कुछ किताब लाया था, न उसने कुछ रात पढ़ा था, लेकिन आंख बंद किये बैठा था, ऐसा भी नहीं लगता था कि कुछ सोचता है। क्योंकि सोचने से भी तो चेहरे पर सलवटें आ जाती हैं। सोचने से भी तो चिंताएं आ जाती हैं, लेकिन वह तो बिल्कुल निश्चिंत था, जैसे अपने घर में मजे से सोया हो। वह बैठा रहा, बैठा रहा, ये तो अपनी किताबों में धीरे-धीरे डूबते गए, धीरे-धीरे किताबें ही रह गई, वे भूल ही गए; वे तो अपने काम में लगे थे, एक चक्कर था चल रहा था।
वह आदमी एकदम उठा, न मालूम उसे क्या हुआ, एकदम उठा, दरवाजे पर गया; हैंडिल घुमाया और हैरान रह गया, दरवाजा खुला हुआ था, ताला नकली था, ताला लगा हुआ नहीं था। हैंडिल घुमाया दरवाजा खुल गया, वह तो एकदम हैरान रह गया, बाहर निकला दरवाजा अटका दिया। ये दो बेचारे तो अपनी किताबों में, अपनी रामायण में, गीता में, कुरान में इस तरह से लगे हुए थे, इन्होंने यह भी नहीं देखा अब दो ही हैं भीतर, एक बाहर चला गया। यह देखने की फुर्सत किसको थी? उन्हें तो तब पता चला जब राजा उस आदमी को भीतर लेकर आया और कहा कि महानुभवों, गणितज्ञों, शास्त्रियों रुक जाओ, हे पंडितो! अब रुको, अब कृपा करो, जिसको निकलना था वह निकल गया। वे तो, चौंक कर उन्होंने आंखें खोलीं, उनकी तो समझ में नहीं आता था, वहां तो गणित घूम रहे थे, उन्होंने कहा, क्या बात है? कि ये तुम्हारा मित्र निकल चुका। और तुमसे यह निवेदन करना है कि सबसे समझदार आदमी दुनिया में वही है, जो किसी समस्या को हल करने के पहले यह देख ले कि समस्या है भी या नहीं।
सिर घूमता जाता है और मनुष्य विकृत से विकृत होता चला जाता है। मैं आपको कहूं, देखें कि जीवन की समस्या क्या है? और मैं आपको कहता हूं कि भगवान के द्वार पर कोई ताला नहीं है, प्रेम के हृदय पर कोई ताला नहीं है, सत्य के भवन में कोई ताला नहीं है, आप धक्का दें और दरवाजा खुल जायेगा। लेकिन आप तो जमाने में घूम रहे हैं, सिर्फ उस दरवाजे पर धक्का देने का आपको ख्याल नहीं आता। वह धक्का क्या है? चित्त के प्रति जागें, जायें, खड़े हों और देखें, चित्त को देखें, अपने माइंड को देखें, पहचानें, सजग हों और आप पायेंगे कि आपकी सजगता मात्र आपका हैंडल पर हाथ रखना मात्र दरवाजे को खोल देता है। और आप वहां पहुंच जाते हैं, जहां के लिए आप दौड़ते थे और खोजते थे और नहीं पहुंच पाते थे। वह चिंरतन सत्य, वह आलोक, वह शांति, वह आनंद, वह सच्चिदानंद प्रत्येक के भीतर मौजूद है, लेकिन थो--ड़ा धकायें तो। क्राइस्ट ने कहा हैः नॉक एंड द डोर शैल बी ओपन अनटू यू। कहा है कि खटखटाओ और दरवाजे खुल जाएंगे। मैं आपसे निवेदन करता हूं, क्राइस्ट ने कुछ जरा सख्त बात कह दी, खटखटाओ! मैं कहता हूं, हाथ रखो और खुल जाएंगे। और भी अगर चाहते हैं, तो मैं कहता हूं, हाथ भी मत रखो, दरवाजे की तरफ देखो और खुल जाएंगे। जस्ट सी। सिर्फ देखो। मात्र अपने चित्त को देखो और परमात्मा के द्वार खुल जायेंगे।
चित्त से भागो मत, स्वयं से भागो मत, कोई पलायन, कोई एस्केप मत करो। जागो और देखो। अपने को स्वीकार कर लो और फिर देखो कि क्या होता है। क्या

होगा वह मैं नहीं कह सकता, क्योंकि उसे कभी कोई मनुष्य नहीं कह सका कि क्या होगा। होगा कुछ अदभुत, अलौकिक जो हम नहीं जानते, जो बिल्कुल अननोन है, जो बिल्कुल अज्ञात है, जिसे हमने कभी नहीं जाना, कभी नहीं पहचाना। उस अदभुत प्रीतम से मिलना हो सकता है। एक ऐसे आलोक, एक ऐसे अमृत, एक ऐसी शांति के निकट पहुंच सकते हैं जो अनंत सनातन है, अनादि है। जिसे हमने कभी नहीं पहचाना। क्योंकि हम तब चक्कर में थे, हमें तो पता ही नहीं कि और भी कुछ है। मनुष्यकृत मनुष्य की दुनिया के बाहर एक दुनिया और है प्रकृति की, परमात्मा की। मनुष्य के विचारों के पीछे एक अदभुत लोक है सनातन और अमृत। एक ऐसा आलोक है, एक ऐसी सत्ता है, एक ऐसा एक्झिस्टेंस है, जहां कोई मृत्यु नहीं, कोई पीड़ा नहीं, कोई दुख नहीं। जहां शास्वत संगीत सदा से निनानिद हो रहा है। उसकी तरफ आंख खुलते ही, जागते ही पहुंचना हो जाता है। उसके लिए आमंत्रण देता हूं, यह आमंत्रण ही धर्म का आमंत्रण है।
मस्जिद के ऊपर से होती अजान धर्म का आमंत्रण नहीं है, मंदिर के बजते हुए घंटे धर्म का आमंत्रण नहीं है। क्योंकि घंटे और अजान आपस में लड़ते हैं और आदमी को कटवाते हैं। धर्म का आमंत्रण तो एक है--मंदिर में जाओ, मस्जिद में जाओ। यह नहीं, यह तो किन्हीं सांप्रदायिकों के, किन्हीं पुरोहितों के षडयंत्र और जाल हैं; धर्म का आमंत्रण तो यह है कि सब मंदिर, सब मकान, सब मस्जिद छोड़ो, अपने भीतर जाओ। क्योंकि अगर परमात्मा का कोई मंदिर है तो वहां है। मैं उस मंदिर में चलने के लिए निवेदन करता, प्रार्थना करता। इससे ज्यादा कुछ नहीं कह सकता कि वहां क्या होगा। वहां यह होगा कि आप तो मिट जाओगे और परमात्मा होगा। वहां यह तो होगा कि आपकी बूंद तो मिट जाएगी लेकिन सागर प्रकट होगा। उस सागर की तरफ अपनी बूंद को ले चलें और देखें, जागें, पहचानें।
परमात्मा करे, प्रत्येक के जीवन में यह मौका आए कि वह मिट सके और परमात्मा हो सके। प्रत्येक के जीवन में यह अवसर आए कि वह समाप्त हो जाए और सत्य उपलब्ध हो जाए।
यह हो सकता है लेकिन जो मृत्यु से डरेंगे और भागेंगे और अभाव से डरेंगे और भागेंगे उनको कभी नहीं हो सकता। लेकिन जो मरने के लिए आज राजी है, मिटने के लिए आज राजी है और जो अपने अहंकार को छोड़ कर और अपने भीतर देखने के लिए आज राजी है, वह आज ही हो जाएगा।
अंततः आपसे कहूं जो मृत्यु से भागते हैं, वे मृत्यु में पहुंच जाते हैं। जो मृत्यु को स्वीकार कर लेते हैं और जागते हैं, वे मोक्ष में पहुंच जाते हैं। जो अभाव से भागते हैं, वे बड़े से बड़े अभाव में घुसते जाते हैं, और जो अभाव को अंगीकार कर लेते हैं वे परमभाव में पहुंच जाते हैं, वे परमात्मा में पहुंच जाते हैं। शून्य हो जायें, अभाव को अंगीकार कर लें और देखें कि पूर्ण आ जाता है। परमात्मा ये करे।

मेरी इन बातों को इतने प्रेम इतनी शांति से सुना है, उससे बहुत-बहुत आनंदित, अनुगृहीत हूं। सबके चरणों में प्रणाम करता हूं, क्योंकि सभी के चरण परमात्मा के चरण हैं।

स्वयं की सत्ता
छठवां प्रवचन

भार क्या है?

मेरे प्रिय आत्मन्!
किस संबंध में आपसे बात करूं, इस पर विचार करता हूं। सबसे पहली बात जो मेरे खयाल में आती है, वह यह इधर मनुष्य के जीवन में निरंतर पीड़ा, दुख और अशांति बढ़ती गई है। बढ़ती जा रही है। जीवन के रस का अनुभव, आनंद का अनुभव विलीन होता जा रहा है। जैसे एक भारी बोझ पत्थर की तरह हमारे मन और हृदय पर है, हम जीवन भर उसमें दबे-दबे जीते हैं, उसी बोझ के नीचे समाप्त हो जाते हैं। लेकिन किसलिए यह जीवन था, किसलिए हम थे, कौन सा प्रयोजन था? इस सबका कोई अनुभव नहीं हो पाता। यह कौन सा बोझ है जो हमारे चित्त पर बैठ कर हमारे जीवन रस को सोख लेता है? कौन सा भार है, जो हमारे प्राणों पर पाषाण बन कर बोझिल हो जाता है? इस संबंध में ही आपसे थोड़ी बात कहूं। इससे पहले कि मैं अपनी बात शुरू करूं, एक छोटी सी कहानी कहूं, उससे मेरी बात भी जो मैं कहना चाहता हूं खयाल में आ सकेगी।
बहुत पुराने समय की बात है, एक पहाड़ के ऊपर, एक बहुत दुर्गम पहाड़ के ऊपर एक स्वर्ण का मंदिर था। उस मंदिर में जितनी संपदा थी, उतनी उस समय सारी जमीन पर भी मिला कर नहीं थी। सारा मंदिर ही स्वर्ण का था, रत्न रचित था। उस मंदिर का जो प्रधान पुजारी था, उसकी मृत्यु निकट आई, तो उसके सामने सवाल उठा कि वह मंदिर के दूसरे पुजारी को नियुक्त कर दे। उस मंदिर की प्रथा थी कि जो व्यक्ति उस युग का सर्वाधिक शक्तिशाली व्यक्ति हो, वही मंदिर का पुजारी हो सकता था। तो सारे देश में शक्तिशाली व्यक्ति को खोजने की योजना बनी। कैसे सारे देश में सबसे शक्तिशाली व्यक्ति को खोजा जाए? तो घोषणा की गई कि जो व्यक्ति एक निश्चित समय पर, जिन-जिन व्यक्तियों को भी यह ख्याल हो कि वे शक्तिशाली हैं, पर्वत के नीचे इकट्ठे हो जाएं। निश्चित समय पर, सारे प्रतियोगी पर्वत की चढ़ाई पर निकलें, जो सबसे पहले मंदिर में पहुंच जाएगा, वही शक्तिशाली सिद्ध होगा और मंदिर का पुजारी हो जाएगा। स्वाभाविक था कि जिनमें भी बल था, वे सारे लोग इकट्ठे हुए, बहुत से युवक इकट्ठे हुए, ऐसा मौका कौन चूक सकता था। निश्चित दिन पर उन सारे लोगों ने पर्वत की चढ़ाई शुरु की। बलिष्ठ से बलिष्ठ लोग आये थे, बहुत दुर्गम चढ़ाई थी, चढ़ाई शुरु करते वक्त जो जितना बलिष्ठ था, उसने उतना ही बड़ा पत्थर भी अपने कंधे पर रख लिया, इसलिए ताकि उसका पौरुष उस पत्थर के भार से प्रकट हो सके। पौरुष चिह्न की तरह, अपनी शक्ति के चिह्न की तरह कुछ तो डर ही गए, उनसे पत्थर उठाते नहीं बने, वे यह सोच कर कि जब हम से पत्थर भी नहीं उठता और लोग इतने- इतने बड़े पत्थर लेकर पहाड़ चढ़ रहे हैं, भाग गये और लौट गये। फिर भी सौ युवक बड़े-बड़े पत्थर लेकर पहाड़ पर चढ़ने शुरु हुए, वैसे ही पहाड़ कठिन था; ऊंची दुर्गम चढ़ाई थी, फिर पत्थरों का भार था, कोई एक महीने की लम्बी चढ़ाई थी। बहुत दूर, बहुत दुर्गम में वह मंदिर था; इसीलिए तो स्वर्ण का था, इसीलिए तो रत्न खचित था, जो मंदिर जितना दूर होता है, उतना ही सोने का होता है। जो मंदिर जितना दुर्गम होता है, उतना ही रत्न खचित होता है। और जहां जितनी संपदा है, जितना धन है उतनी ही दुर्गम चढ़ाई है।
वे उस पर्वत पर चढ़ना शुरू किए। भार था भारी, धूप थी कठिन, पर्वत था सीधा। कुछ गिरे, खड्डों में और अपने पत्थरों के साथ ही मर गये। कुछ बचे वे घिसटते हैं, चलते हैं, भूखे-प्यासे; खाने को ठहरने की भी फुर्सत नहीं है। किसको है? दुनिया में किसी को भी नहीं है। पानी पीने की भी फुरसत नहीं है, किसको है, क्योंकि दूसरा बिना पानी पीए आगे निकला जाता है। और कौन चूके? स्वर्ण के मंदिर का मालिक होना कौन चूके? तो न खाते हैं, न पीते हैं, न विश्राम करते हैं, न दिन देखते हैं, न रात देखते हैं; आधी रात उठ आते हैं, थके-मांदे आधी रात सोते हैं। जल्दी उठते हैं, फिर भागना शुरू हो जाता है। कुछ गलत तो करते नहीं। हमेशा ऐसा ही हुआ है, जिनको भी पहाड़ पर चढ़ना है, ऐसे ही चढ़ना होता है। आज भी वैसा ही होता है, आगे भी शायद वैसा ही होता रहेगा। एक-एक कर वे गिरने लगे, जो जीवित थे, आगे बढ़ते थे; उन्हें लौट कर देखने की

फुर्सत भी नहीं थी। कौन गिर जाता था, पड़ोस में किसको देखने की फुर्सत थी? जो साथ-साथ चलते थे, कोई गिर जाता था तो लौट कर रुकने की किसको फुरसत थी? क्योंकि दूसरे आगे निकले जाते थे, मरने वालों के लिए कौन रुकता है? कौन ठहरता है? दुनिया में कोई नहीं ठहरता, मरने वाले का कोई साथी नहीं, कोई ठहरने वाला नहीं। जो चलते हैं उनसे साथ है, वह साथ भी मित्रता का नहीं, शत्रुता का है, क्योंकि कौन आगे निकल जाये, यह डर है। लेकिन किसी तरह चढ़ाई पूरी हुई, सौ निकले थे मुश्किल से दस-बारह जीवित रहे। बहुत थे, फिर भी बहुत थे, सौ में से दस बचे थे, काफी थे। अंतिम दिन था, कोई थोड़ा आगे था, कोई थोड़ा पीछे था। अब गति बढ़ गई थी, अंतिम दिन था और निर्णायक घड़ी थी। तभी उन सबने देखा कि एक युवक जिन्हें वे समझे थे कि मर गया, जिन्हें वे समझे थे वह सबसे पहले ही वह सबसे अंतिम था, वह अचानक उनके पास से तेजी से आगे निकला जाता है। तो घबरा गये, लेकिन फिर हंसने लगे, क्योंकि उस पागल ने अपना पत्थर जो था कंधे का वह कहीं फेंक दिया था। बिना ही पत्थर के बढ़ा जाता था। उन्होंने उससे चिल्ला कर भी कहा कि पागल हो तुम, ऐसे बढ़े जाने से फायदा भी क्या, वहां कौन तुम्हें पूछेगा, तुम्हारा पौरुष चिह्न कहां है? पत्थर कहां है? देखते हो इतना पत्थर लेकर हम चढ़ते हैं, और तुम ऐसे ही चढ़े जा रहे हो। लेकिन उसने कुछ ध्यान न दिया। निश्चित ही जब पत्थर उसके सिर पर न था तो उसकी गति बहुत बढ़ गई थी। पत्थर का न होना उसकी शक्ति बन गई थी।
तीव्रता से वह गया और सबसे पहले पहुंच गया। वह सुबह पहुंच गया, दूसरे सांझ पहुंचे। लेकिन जो दूसरे थे उन्होंने सोचा, पागल है, इसका प्रयोजन क्या है, पहुंच जाने का। कौन इसे पूछेगा? लेकिन जब वे सांझ पहुंचे तो चकित रह गये, पुजारी ने उसे भार सौंप दिया था। वह नया पुजारी नियुक्त हो गया था। उन सबने शिकायत की जाकर कि यह क्या बात है? यह कैसा अन्याय है, यह कैसा धोखा है? उस पुजारी ने कहाः न तो धोखा है, न अन्याय है और न ही ऐसी बात है कि मुझे तथ्यों का पता न हो। लेकिन मैं तुमसे कहना चाहता हूं कि इस जगत में सबसे शक्तिशाली वही है, जो अपने भार को छोड़ने का सामर्थ्य रखता है। और मैं तुमसे यह भी पूछना चाहता हूं कि किसने तुमसे कहा था कि तुम पत्थर लेकर चढ़ो? यह किसने तुम्हें सुझाव दिया था कि तुम अपने कंधों पर पत्थर भी ले लेना? बात तो सिर्फ चढ़ने की थी, भार लेने की कहां थी? निश्चित ही तुम्हारे अहंकार ने तुम्हें सुझाव दिया होगा कि मैं हूं बड़ा बली, तो बड़ा पत्थर लेकर चलूं। तुम्हारे अहंकार ने तुम्हारे कान में कहा होगा कि पत्थर सिर पर ले लो। अन्यथा ऐसी तो कोई बात न थी, किसने खबर की थी? इस युवक ने अदभुत साहस का, शक्ति का परिचय दिया है और सबसे बड़ी शक्ति और साहस यह है कि जबकि तुम सब पत्थर से बंधे थे, उस अकेले ने पत्थर छोड़ने की हिम्मत की। दुनिया में भीड़ से अलग होने से बड़ी और कोई कठिन बात नहीं है। जो भीड़ कर रही हो, जो सब कर रहे हों उससे एक व्यक्ति का अलग होकर कुछ कर लेना, अत्यंत नैतिक शक्ति का, आत्मिक शक्ति का प्रतीक है। इसलिए इसे मंदिर का पुजारी बना दिया। और उसने उन सबको विदा करते वक्त कहा और स्मरण रखो अंत में भगवान के दरवाजे पर वे ही प्रविष्ट होंगे, जिनके कंधे पर कोई भार नहीं है, जो निर्भार है, जो जितना निर्भार है, वह उतना ही ऊपर उठ जाता है। जो जितना भारी है वह नीचे बैठ जाता है।
इसी संबंध में थोड़ी सी बात कहूं कि यह भार क्या है, यह वेट क्या है जो आपकी जान लिए लेता है। मेरी जान लिए लेता है। सारी दुनिया में सारे मनुष्यों की जान लिए लेता है। भार क्या है? यह कौन सा पाषाण-भार है जो आपके कंधे पर है? कौन सी चीज है जो दबाए देती है, ऊपर नहीं उठने देती? आकांक्षाएं तो आकाश छूना चाहती हैं लेकिन प्राण तो पृथ्वी से बंधे रहते हैं। क्या है, कौन सी बात है? कौन रोके है, कौन अटकाए है, किसने यह सुझाव दिया कि इस पत्थर को अपने सिर पर ले लेना? किसने समझाया? शायद हमारे अहंकार ने हमको भी फुसलाया है। शायद हमारी अस्मिता ने, ईगो ने हमको भी कहा है कि भार सिर पर ले लो। क्योंकि इस जगत में जिसके सिर पर जितना भार है, वह उतना बड़ा है। बड़े होने की दौड़ है, इसलिए भार को सहना पड़ता है। एक और कहानी कहूं उससे बात और ख्याल में आ जाये।

एक बादशाह बहुत थक गया, परेशान हो गया। और कौन बादशाह नहीं थक जाता, नहीं परेशान हो जाता? बहुत थक गया, बहुत परेशान हो गया। जैसे-जैसे राज्य उसका बढ़ा, वैसे-वैसे चिंता बढ़ी। वैसे-वैसे बेचैनी और परेशानी बढ़ी। सोचा था सम्राट हो जाएगा, अंत में पाया कि जिनको जीता है, उन्हीं का गुलाम हो गया। लेकिन फिर कोई उपाय न था। बादशाह बन जाना तो सरल, फिर बादशाहत से छूटना बहुत कठिन। यह आप जान कर हैरान होंगे कि आदमी जिन जंजीरों से बंध जाता है, उन जंजीरों को अगर कह भी दिया जाये, खुद तोड़ दो तो भी तोड़ना कठिन हो जाता है। क्योंकि जंजीरों के साथ बहुत दिन रहते-रहते प्रेम हो जाता है। मित्रता हो जाती है। भार और बीमारियों से भी संबंध हो जाता है। वे भी एकदम छोड़कर चली जायें तो खालीपन और अकेलापन लगेगा।
तो बादशाह सोचता तो बहुत था कि यह तो झंझट सिर ले ली लेकिन छोड़ता कुछ
भी नहीं था। और सारी दुनिया में ऐसा होता है, सभी सोचते हैं कि बहुत झंझट सिर ले ली, लेकिन झंझट से भी प्रेम हो जाता है, उसके बिना भी तो हम अकेले और खाली हो जायेंगे। लेकिन एक दिन बहुत ऊब गया तो उसने सोचा कि अपने को समाप्त कर लूं, घोड़े को निकाला और जंगल की तरफ गया, सोचा था किसी खाई खड्ढ में गिर जाऊं और मिट जाऊं। अत्यंत बोझिल हो गया सब। कोई रस न रहा, कोई नींद न रही, कोई चैन न रहा। जंगल में भागा जाता था, एक बांसुरी की आवाज सुनी कोई पहाड़ी झरने के किनारे गीत गाता था। अदभुत थे स्वर। रुका और देखा कि कौन यहां जंगल में इतनी शांति से और बांसुरी बजा सकता है? गया, देखा, एक भेड़ों को चराने वाला चरवाहा है, बैठ कर झरने के किनारे बांसुरी बजा रहा है। उस राजा ने कहा तुम्हें ऐसी कौन सी संपदा, कौन सा साम्राज्य मिल गया है कि इतनी खुशी से गीत गा रहे हो। उस युवक ने कहा, परदेसी तुम चाहे कोई भी हो, एक भर मेरे लिए प्रार्थना करना कि भगवान मुझे कभी साम्राज्य न दे। उसने पूछा क्यों? उसने कहा, जहां तक मैंने सुना है, जहां तक मैंने जाना है केवल वे ही सम्राट हो सकते हैं, जिनके पास कोई साम्राज्य नहीं होता। जिनके पास साम्राज्य होता है, वे गुलाम हो जाते हैं। इसलिए दुआ करना परमात्मा से मेरे लिए, प्रार्थना करना कि मैं कभी कोई साम्राज्य मुझे न मिले। राजा ने कहाः अदभुत बात कहते हो, ऐसा क्या है तुम्हारे पास, जिसकी वजह से तुम साम्राज्य को ठुकराने का सोचते हो? उसने कहा ऐसा क्या है, जो मेरे पास नहीं है? वृक्षों में जो फूल खिलते हैं, वे मेरे लिए भी उतने ही खिलते हैं, जितने बादशाहों के लिए खिलते हैं। आकाश में जो तारे निकलते हैं, वे मेरे लिए भी उतने ही निकलते हैं, जितने बादशाहों के लिए निकलते हैं। हां एक फर्क जरूर है, मैं चरवाहा हूं इसलिए फूलों को देख सकता हूं, तारों का गीत सुन सकता हूं; कोई बादशाह न फूल देख सकता है, न तारों का गीत सुन सकता है, क्योंकि बादशाहत इतनी बड़ी चिंता है, आंख भी अंधी हो जाती है और कान भी बहरे हो जाते हैं। इसलिए क्षमा करें, यह दुआ मुझे न दें कि मुझे बादशाहत मिल जाए।
राजा ने कहाः तुम शायद ठीक कहते हो, मैं तुमसे सहमत हूं। और शायद तुम्हें पता नहीं कि मैं इस राज्य का मालिक हूं। जाओ अपने गांव में और पूरे राज्य में कह दो कि जो यह चरवाहा कहता है, उसकी गवाही बादशाह ने भी दी है। उसने भी कहा कि यह ठीक कहता है। जाओ अपने गांव में भी यह कह देना। लेकिन सारी दुनिया, सारे मनुष्य का मन कुछ ऐसी गलत धारणाओं में परिपक्व होता है, निर्मित होता है कि जिन पत्थरों को हम अपने ऊ पर अपने ही हाथों से रखते हैं, जिस भार के नीचे हम दबे जाते हैं और श्वासें घुटी जाती हैं, उस भार को भी अलग करने का मन नहीं होता। सच तो यह है कि है यह हमें दिखाई ही नहीं पड़ता कि इस भार को रखने वाले हाथ मेरे ही हैं। कौन सी चीजें हैं, कौन सा केंद्र है जिस पर भार इकट्ठा होता है, कौन से तत्व हैं जिनसे पत्थर की तरह भार संग्रहीत होता है। उनकी ही मैं आपसे चर्चा करना चाहता हूं।
केंद्र है मनुष्य का अहंकार। केंद्र है मनुष्य की यह धारणा कि मैं कुछ हूं। केंद्र है मैं का बोध। और यह मैं इस जगत में सबसे ज्यादा असत्य, सबसे ज्यादा भ्रामक, सबसे ज्यादा इलुजरी है। यह मैं कहीं है नहीं। इस शैडोई, इस अत्यंत भ्रामक, इस अत्यंत भ्रमपूर्ण मैं के लिए सारी दौड़ चलती

है जो कि कहीं है ही नहीं। कभी आंख बंद करके अपने भीतर खोजें कि यह मैं कहां है? तो आप खोज नहीं सकेंगे। कभी शांत होकर विचार करें कि यह मैं मेरे भीतर किस जगह है? यह मैं कहां छिपा है? आप पूरे मन को खोदें, उखाड़े इस मैं को आप कहीं पाएंगे नहीं। जैसे प्याज होती है, उसे छीलें, उसमें पर्त पर पर्त निकलती जायेगी, आखिर में आप पायेंगे कि कुछ भी नहीं बचा। भीतर खाली, कोरा रिक्तस्थान है। पर्त पर पर्त तो बहुत थी लेकिन भीतर कुछ भी न था। ठीक वैसे ही मनुष्य का यह मैं है, इसमें पर्तें तो बहुत हैं, जो हमने ही जमाई हैं, लेकिन एक-एक पर्त को निकालें तो भीतर पाएंगे कि वहां कुछ भी नहीं है। दो-चार पर्त हम उखाड़ें और विचार करें। इस मैं के साथ आपका नाम जुड़ा हुआ है, मेरा नाम जुड़ा हुआ है। अगर आपका नाम राम है, कोई राम को गाली दे दे तो आप अपना होश खो देंगे। लेकिन क्या कभी आपने सोचा कि किसी का कोई नाम होता है? क्या कभी विचार किया कि राम क्या मेरा नाम है? क्या किसी का भी कोई नाम है? नाम तो अत्यंत काल्पनिक औपचारिक बात है। कामचलाऊ है, जरूरत है इसलिए आपके ऊपर लगा दिया, ऊ पर से चिपका हुआ लेबिल है, आपके प्राणों से नाम का क्या संबंध है। लेकिन हमारे प्राणों से हम इस नाम को बहुत संबंधित मान कर जीते हैं।
एक फकीर हुआ, राम ही नाम था उसका। किसी ने उसे गाली दी, वह खूब हंसने लगा। गाली देने वाला चौंक गया और उसने पूछा कि आप हंसते क्यों हैं? उसने कहा तुम सांझ राम की तरफ आना, तो बतायेंगे। वह थोड़ा हैरान हुआ, उसने कहा कि कौन राम? उसने कहा कि मेरी तरफ आना, तो बतायेंगे। सांझ वह आया और उसने पूछा कि आप क्यों हंसे? उसने कहा मुझे हंसी इसलिए आ गई कि तुमने जैसे ही राम को गाली दी मुझे क्रोध आने वाला था, क्रोध उठा था फिर मुझे एकदम से खयाल आया कि क्या मैं राम हूं? या कि कामचलाऊ एक शब्द है, और तब मुझे हंसी आ गई। एक शब्द जो बिल्कुल कामचलाऊ है, उस पर की गई चोट मुझे कैसे पहुंच सकती है? उसे की गई चोट मुझे कैसे पहुंच सकती है, उसकी की गई प्रशंसा मुझ तक कैसे पहुंच सकती है? लेकिन आइडेंटिटी हमारी बहुत गहरी है, नाम और हम बिल्कुल एक हो गये हैं। उसमें कोई फर्क, फासला नहीं रहा। इसीलिए तो आदमी मर जाता है लेकिन कब्र पर उसका नाम हम लगा ही देते हैं। न केवल जिंदों के नाम होते हैं बल्कि मुर्दों के भी हमारी दुनिया में नाम होते हैं।
एक आदमी तो मिट जाता है, मर जाता है लेकिन मंदिर पर नाम लगा जाता है।
वे यहां तख्तियां कहीं न कहीं जरूर लगी होंगी। नाम से इतना गहरा, इतना गहरा, नाम जो कि बिल्कुल, बिल्कुल ही औपचारिक, बिल्कुल औपचारिक बात है; जिसका हमारे प्राणों से कोई भी, कोई गहरा संबंध नहीं है, कोई संबंध ही नहीं है। जिसे अ कहते हैं, उसे ब कहें, स कहें कुछ भी कहें, एक कहें, दो कहें, तीन कहें काम चल जाएगा। जो इतनी कामचलाऊ बात है, वह हमें इतनी महत्वपूर्ण है? और यह नाम हमारे अहंकार का बड़ा बुनियादी हिस्सा है, इसे हटाएं, देखें नाम किसी का भी नहीं। किसी का भी नहीं है। पौधों के कोई नाम हैं, पक्षियों के कोई नाम हैं? मछलियों के कोई नाम हैं? फिर भी वे हैं, बिना नाम के पौधे हैं, बिना नाम के पक्षी हैं, बिना नाम के मछलियां हैं, बिना नाम का सारा संसार है सिर्फ आदमी को छोड़ कर। आदमी का भी कोई नाम नहीं है, बच्चा पैदा होता है, अनाम। कोई उसका नाम नहीं। लेकिन हम नाम चिपका देते हैं। और फिर वह नाम के केंद्र पर जीने लगता है। उसका नाम ऊंचा हो, उसका नाम अखबार में हो, उसके नाम की इज्जत हो, उसके नाम की चर्चा हो, उसके नाम की प्रशंसा हो, उसके नाम पर फूलों की मालाएं हों, जिंदगी में, मरने के बाद भी।
एक आदमी था अमरीका में, शायद अकेला ही आदमी था लेकिन मन में तो सबके यही होता है। वह आदमी मरने के करीब था। मरने के करीब था डाक्टरों ने उससे कहा कि आप अब ज्यादा नहीं जी सकेंगे, उसकी उम्र भी काफी हो गई थी, अट्ठासी वर्ष का था। एक-दो दिन में आप मर जाएंगे। उसने अपने सेक्रेटरी को बुलाया। बड़ी भारी उसकी इंडस्ट्री थी, उस इंडस्ट्री के विज्ञापन करने वाले बहुत से विशेषज्ञ थे, उनको बुलाया और उनसे कहा कि मेरी एक इच्छा है, इसको पूरा करने का उपाय करो। उन्होंने कहा, कौन सी इच्छा? उसने कहा कि मैं इसके पहले कि मरूं, मैं अखबारों में अपने मरने की खबर पढ़ना चाहता हूं। आखिर कौन-कौन अखबार मेरी फोटो छापते हैं और कौन-कौन अखबार मेरा नाम छापते हैं?

उन्होंने कहा कि हो सकता है, इसमें क्या कठिनाई है? अफवाह उड़ा दी गई कि वह मर गया। सांझ तीन बजे अफवाह उड़ा दी गई कि वह मर गया और सांझ संध्या के सभी संस्करणों में उसके फोटो, उसके मरने की खबर, वह सब छाप दी गई। रात उसने निश्चिंतता से जब सारे अखबार पढ़ लिए तो वह बहुत प्रसन्न हुआ। फिर रात दो बजे मर गया। फिर दूसरी खबर उसके मरने के बाद छापी गयी वह मनुष्य जाति का पहला आदमी था, जिसने अपने मरने की खबर पढ़ी।
लेकिन क्या आप भी मनुष्य-जाति के ऐसे दूसरे मनुष्य नहीं होना चाहते? पूछें जरूर होना चाहते हों। कितना रस उस आदमी को आया होगा कि सारे अखबारों में फोटों हैं। सारे अखबारों में नाम हैं। मरते हुए आदमी को भी, जीते हुए आदमी का भी रस क्या है? जीते हुए आदमी का भी एक ही रस है, उसके नाम पर हीरे जड़ जायें, उसके नाम पर फूल पड़ जाएं। और नाम जो बिल्कुल बेमानी है। जो बिल्कुल मीनिंगलेस है। यह एक पर्त है, और ऐसी बहुत सी पर्तें हैं, कोई जैन है, कोई हिंदू है, कोई मुसलमान है। है क्या कोई जैन, कोई हिंदू, कोई मुसलमान? आदमी आदमी जैसा पैदा होता है, और पच्चीस नासमझियां उसे सिखा दी जाती हैं। जड़ की तरह हमारे माइंड को कंडीशन कर देती हैं। मैं हिंदू हूं, आप मुसलमान हैं, कोई ईसाई है, कोई जैन है, कोई बौद्ध है, कोई पारसी है, कोई सिख है, कोई कुछ और है; हजार तरह के पागलपन हैं। पागलपन इसलिए कहता हूं कि जो चीज भी मनुष्य को मनुष्य से तोड़ती है, वह पागलपन है। जो चीज भी मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है, वह स्वस्थ्य चित्त की दशा है। किसने मनुष्य जाति को खंडित किया, छोटी-छोटी सीमाएं छोटी-छोटी सीमाएं, दो आदमियों के बीच दीवाल बन कर खड़ी हो जाती हैं। और ऐसी दीवाल जिसके आर-पार हाथ फैलाने असंभव हैं। और ऐसी दीवाल कि जब भी हाथ फैलाये जाते हैं तो एक-दूसरे की गर्दन पक ड़ने को फैलाये जाते हैं, और कोई दूसरे काम के लिए कभी नहीं फैलाये जाते। जब कभी हिंदू मस्जिद में जाता है तो मस्जिद जलाने को जाता है, जब कभी मुसलमान मंदिर में आता है तो मूर्ति तोड़ने को आता है; दूसरा कोई रास्ता नहीं है। एक आदमी दूसरे आदमी के बीच यह कैसा पागलपन है? क्या कोई आदमी हिन्दू और जैन, और मुसलमान पैदा होता है? आदमी सिर्फ आदमी की तरह पैदा होता है। और एक हिन्दू घर के बच्चे को मुसलमान के घर में रख दिया जाये तो वह मुसलमान की तरह बड़ा होगा, और एक जैन के बच्चे को ईसाई के घर रख दिया जाये तो वह ईसाई की तरह बड़ा होगा। तो ईसाईयत सिखावट है, जन्म का हिस्सा नहीं। यह हमारे स्वभाव या स्वरूप का हिस्सा नहीं। यह जाति सारी सिखावट है। लेकिन इस जाति के नाम पर क्या नहीं हो सकता? इस जाति के नाम पर हजारों लोगों की हत्याएं हो सकती हैं, इस जाति के नाम पर हजारों लोग कुर्बान हो सकते हैं, इस जाति के नाम पर कोई मर सकता है, कोई मार सकता है। यह होता रहा है, इसकी कोई कथा बताने की मुझे जरूरत नहीं है। तीन हजार साल की कहानी और क्या है? तीन हजार साल की कहानी यह है मनुष्य जाति की कि कोई भी छोटा-मोटा नारा लगाओ और दूसरे आदमी की हत्या करने का उपाय खोज लो। कितने लोग धर्म के नाम पर काटे और मारे गये हैं, इसका पता है? अगर हिसाब लगाएंगे तो घबड़ा जाएंगे, अधर्म के नाम पर एक आदमी नहीं मारा गया। किसी अधार्मिक लोगों ने मिल कर एक मकान में आग नहीं लगाई, आज तक। अधार्मिक लोगों के किसी संगठन ने कोई बड़े पैमाने पर हत्याकांड नहीं किये, कोई हजारों लोगों को, लाखों लोगों को बे-घरबार नहीं किया। स्त्रियों की इज्जत नहीं छीनी, बच्चों की छाती में छुरे नहीं घोंपे। किसने किया यह? यह उन लोगों ने किया जिन्हें यह वहम है कि मैं हिन्दू हूं, मैं मुसलमान हूं, मैं जैन हूं, मैं ईसाई हूं, उन लोगों ने किया। और यह वहम है। और इस वहम के पीछे एक जिंदा आदमी की छाती में छुरा घोंपा जा सकता है। जिंदा आदमी की छाती में, एक वहम के पीछे कि मैं हिंदू हूं। और आपका हिन्दू होना क्या है? या मेरा मुसलमान होना क्या है? एक सिखावट, एक कंडीशनिंग जो बचपन से मेरे दिमाग में डाल दी गई कि तुम हिंदू हो, हिंदू धर्म तुम्हारा है; हिंदू धर्म के लिए जीना और हिन्दू धर्म के लिए मरना। अगर मैं दूसरे घर में होता तो मुझे सिखाया जाता तुम मुसलमान हो, मुसलमान धर्म के लिए जीना और मुसलमान धर्म के लिए मरना। मैं जहां होता, मुझे वही बेवकूफी सिखा दी जाती, मैं उसी बेवकूफी में जीता और मरता। यह क्या है? यहां जो मैं कह रहा हूं उसे आप खोजेंगे तो सच्चा नहीं पाएंगे। क्या अपने

दिमाग में तलाशेंगे तो नहीं पाएंगे कि आप क्या हैं? किसने आपसे कहा कि आप हिन्दू हैं या मुसलमान हैं? किसने आपको सिखाया? जिस घर में आप पैदा हुए हैं उस घर की धारा ने आपको सिखाया। यह दुनिया बहुत अच्छी नहीं होगी, जहां इस तरह की बातें सिखाई जाती हैं। एक वक्त अगर दुनिया में मनुष्य के इतिहास में अच्छा वक्त वही होगा, जब हम आदमी को सबसे पहले आदमी होना सिखाएं, और ऐसी कोई बात न सिखाएं जो उसकी आदमियत से ऊपर बैठ जाए। लेकिन हम सब आदमी पीछे हैं, हिंदू पहले हैं, अगर आदमी पर कोई संकट हो हमें कोई परेशानी नहीं होती, लेकिन हिंदू धर्म पर संकट हो तो हमारे प्राण संकट में पड़ जाते हैं। और ऐसी और पर्त पर पर्तें हैं--राष्ट्रीयता की पर्त है कि कोई भारतीय है कोई पाकिस्तानी है। कोई चीनी है, कोई जर्मन है। जमीन पर कोई कहीं कोई रेखा नहीं है, सिवाय राजनीतिज्ञों ने जो नक्शे बनाएं हैं उनके अलावा। जमीन अखंड और अविभाजित है। कहीं कोई सीमा नहीं है जहां एक देश समाप्त होता हो और दूसरा शुरु होता हो। लेकिन राजनैतिक की बुद्धि ने हर जगह सीमा बना रखी है। क्योंकि बिना सीमा के राजनीतिज्ञ नहीं हो सकता। सीमा है तो राजनीति है, सीमा नहीं तो राजनीति नहीं हो सकती है। और बड़े मजे की बात है, जहां सीमा है वहां युद्ध है, वहां हिंसा है। युद्ध को ही हम संग्राम कहने लगे हैं। संग्राम का मतलब होता है दो गांवों की सीमा। ग्राम का मतलब तो गांव होता ही है, संग्राम का मतलब होता है दो गांव की सीमा। जहां दो गांव की सीमा है वहीं लड़ाई है, वहीं युद्ध है, इसलिए हम उसको संग्राम कहते हैं। जहां दो गांव मिलते हैं वहीं लड़ते हैं। जहां दो देश मिलते हैं वहीं लड़ते हैं। जहां दो आदमी मिलते हैं वहीं लड़ाई शुरु।
ये सीमाएं कि मैं भारतीय हूं, यह भी वैसा ही वहम है जैसा कि मैं हिन्दू हूं या जैन हूं, या मुसलमान हूं। इस दूसरी राष्ट्रीयता के वहम ने, इस राष्ट्रीयता की पर्त ने, इस आइडेंटिटी ने कि मैं भारतीय, मैं चीनी, मैं ईसाई कि मैं फलां, मैं ढिकां; इसने भी मनुष्य-जाति को बहुत कष्ट दिए हैं, वह भी हमारे प्राणों पर भार बनकर बैठी है। सारी दुनिया के युद्ध किसलिए होते रहे हैं। अभी सारे राजनीतिज्ञ कहते हैं हम शांति चाहते हैं, युद्ध नहीं चाहते, लेकिन उन पागलों से कोई कहे कि जब तक तुम देश चाहते हो, तब तक शांति और युद्ध? शांति कैसे हो सकती है, युद्ध कैसे बच सकता है? जब तक हम सीमा चाहते हैं; तब तक युद्ध होगा। जब तक हम भेद चाहते हैं किसी तरह का, तब तक हिंसा होगी। और यह हमारे प्राणों पर, हमारी छाती पर बैठ जायेगी भार बनकर। दो महायुद्ध लड़े गये, दस करोड़ आदमियों की हत्या हुई। मां-बाप कैसे पागल हैं, अपने बच्चों को लड़ाई में भेजते हैं इसलिए कि तुम भारतीय हो, तुम पाकिस्तानी हो? अगर दुनिया में मां-बाप अपने बच्चों को प्रेम करते हों, दुनिया में युद्ध बंद हो जायेंगे। क्योंकि कोई भी बाप कह देगा बच्चा पहले है, आदमी पहले है देश, वक्त सब बकवास है, कोई बच्चा नहीं जा सकता लड़ने के लिए। हिंदुस्तान में भी बच्चा लड़ता है तो मां का बच्चा मरता है, पाकिस्तान का बच्चा लड़ता है तो पाकिस्तान की मां का बच्चा मरता है, लेकिन दोनों मांओं को यह ख्याल नहीं आता कि हमारे बच्चे लड़ते हैं और मरते हैं, किसलिए? इसलिए कि राजनीतिज्ञ कुछ सीमाएं खींचे हुए हैं। और उन्होंने विभाजन कर दिया है कि तुम भारतीय हो और तुम पाकिस्तानी हो। अगर दुनिया में मां-बाप का प्रेम सच्चा हो तो दुनिया में कोई युद्ध नहीं हो सकता क्योंकि मां-बाप कहेंगे, बच्चे हैं, न कोई भारतीय है और न कोई पाकिस्तानी है। इसलिए बच्चे लड़ने से इनकार करते हैं।
ऐसी पर्त पर पर्त हमारे दिमाग में है। अमीर होने का, गरीब होने का ख्याल है। किस वजह से आप अमीर हैं, इसलिए कि आपके खींसे में कुछ ज्यादा पैसे हैं? इसलिए आप अमीर हैं। किसी के खींसे में कम पैसे हैं, इसलिए गरीब है? दोनों के अमीरी और गरीबी अलग करके दोनों को खड़ा करें, दोनों में क्या फर्क है? दोनों की कमीजें छीन लें और खड़ा करें, दोनों में क्या फर्क है? जो अमीर है उसके चार पैसे छिन जाते हैं गरीब हो जाता है, जो गरीब है उसको चार पैसे मिल जाते हैं, अमीर हो जाता है। आप कहां अमीर और गरीब हैं। आप तो दोनों से कुछ अलग हैं क्योंकि अमीर गरीब हो सकता है, गरीब अमीर हो सकता है,

तो आप कहां अमीर और गरीब हैं। लेकिन नहीं, अमीर सोचता है मैं अमीर हूं, और गरीब, गरीब को मेरे पास बैठने का भी कोई हक नहीं है।
पद और प्रतिष्ठाएं खड़ी की हैं हमने। जो आदमी जरा ऊं चाई पर बैठ जाता
है वह उनसे बड़ा हो जाता है, जो नीचे बैठे हैं। यह सारा का सारा सोचें- विचारें, हमारे मन पर यह क्या भार है? कितने पत्थर की तरह ये सारी अहमता की पर्ते हम पर बैठी हैं। इनमें से एक-एक पर्त को जो अलग करता है वह मनुष्य धीरे-धीरे निर्भार होकर, धार्मिक हो जाता है। धार्मिक मनुष्य को दुनिया में पैदा होने की जरूरत है, लेकिन यह अहंकार की कोई भी पर्त धार्मिक नहीं होने देती। आप सोचते होंगे कि हम मंदिर हो आये तो धार्मिक हो गये, इतना सस्ता मामला नहीं है। या आप सोचते होंगे कि हमने कुरान पढ़ लिया, गीता पढ़ ली, तो हम धार्मिक हो गये; मामला इतना आसान नहीं है। धार्मिक होने के लिए सारे प्राणों का परिवर्तन जरूरी है। और प्राणों का परिवर्तन निश्चित ही कष्ट साध्य है। क्योंकि ये सब हमारे मोह हो गये हैं, इनमें से कुछ भी छीनने पर हमे घबड़ाहट लगती है। जो डरेगा और इन्हें पकड़ेगा वह कभी निर्भार नहीं हो सकता, पत्थर उसके सिर पर बैठे रहेंगे। धार्मिक आदमी का न कोई देश है, धार्मिक आदमी की न कोई जाति है, धार्मिक आदमी का न कोई नाम है, धार्मिक आदमी का न कोई पद है, धार्मिक आदमी की यह सारी कोई भी बातें नहीं हैं। तब चित्त निर्भार होता है। तब चित्त वेटलैसनैस को उपलब्ध होता है। तब चित्त अभेद को, अखंडता को उपलब्ध होता है। यही तो सारी खड्ढ थे, यही तो सारी बाधाएं थीं, यही तो सारी रुकावटें थी, परमात्मा से मिलता चाहते हैं, बगल के आदमी से मिल नहीं पाते। दूर पहुंचने की कल्पना है, जो निकट है उससे कोई संबंध नहीं है। पड़ोसी से कोई प्रेम नहीं है, परमात्मा की खोज है। कैसे यह होगा, यह एप्सर्ड है? यह बिल्कुल असंगत, नासमझी की बात है। जो पड़ोसी से मिल सकता है वह एक दिन जरूर परमात्मा से मिल जायेगा क्योंकि पड़ोसी परमात्मा की शुरुआत है। वहां से परमात्मा शुरू हो रहा है। लेकिन पड़ोसी से मिलना असंभव है क्योंकि पड़ोसी है गरीब, मैं हूं अमीर। पड़ोसी से मिलना असंभव है, वह है मुसलमान, मैं हूं हिन्दू। पड़ोसी से मिलना इसलिए असंभव है कि वह एक मकान में जाता है पूजा करने जिसका नाम चर्च है और मैं एक मकान में पूजा करने जाता जिसका नाम मंदिर है। कैसी मूर्खताएं हैं, कैसी नासमझियां हैं?
आज दोपहर को ही मैं कहता था। एक साधु मेरे पास मेहमान हुए। उन्होंने
सुबह उठ कर ही मुझसे कहा कि मुझे जैन मंदिर जाना है। मैं कुछ हैरान हुआ, मैंने कहा कि जैन मंदिर में जाकर क्या करियेगा? क्या काम अटक गया है, क्या सुबह से ही परेशानी आपको हो गई? उन्होंने कहा कि आप इतना भी नहीं समझते? वहां मैं एकांत में ध्यान करूंगा, आत्मचिंतन करूंगा, सामायिक करूंगा इसलिए जाना चाह रहा हूं, मैंने कहा आप सच बोल रहे हैं कि इसी के लिए जाना चाहते हैं या कि कोई और मामला है? उन्होंने कहा, नहीं, नहीं इसी के लिए जाना चाहता हूं, और तो क्या मामला हो सकता है। साधु आदमी हूं, मेरा और क्या मामला होगा? मैंने कहा फिर मैं आपको सलाह दूंगस कि मेरे पास में, बगल में एक चर्च है, यहां का जो जैन मंदिर है वह तो बाजार में है, वहां तो बड़ा शोरगुल है, वहां तो बड़ी भीड़-भाड़ है, वहां क्या करियेगा? और कैसे करियेगा? उससे तो बेहतर जहां आप मेरे पास ठहरे हैं, यहीं सन्नाटा और एकांत है, तो ध्यान यहीं कर लीजिए। और अगर आदमी का मकान नापसंद है, भगवान का ही मकान पसंद है तो मेरे बगल में चर्च है। चर्च में सन्नाटा है, क्योंकि ईसाईयों का धर्म रविवार को समाप्त हो जाता है, आज रविवार नहीं है। तो आप चलिए वहां एकदम सन्नाटा है, वहां न कोई आदमी है, न कोई है, कोई भी नहीं है वहां। सांझ का वक्त है, पुरोहित भी सिनेमा गया होगा। चपरासी कहीं जुआ खेलता होगा, कुछ और करता होगा, आप चलें। वह कहने लगे, चर्च? मैं कैसे चर्च जा सकता हूं? आप समझे नहीं, मैं आपसे जैन मंदिर का पता पूछता हूं, आप वह ही मुझे बता दें। तो मैंने उनसे कहा तब न आपको ध्यान करना है, न आपको स्मरण करना है, न आपको शांति चाहिए, आपको जैन मंदिर जाना है। क्यों जैन मंदिर जाना है? एक वहम पैदा किया बचपन से कि तुम जैन हो इसलिए। और कितना आश्चर्य है गृहस्थ तो गृहस्थ जिसको हम साधु कहते हैं वह भी इसी चक्कर में है, वह भी कहता है मैं जैन साधु, मैं हिंदू साधु, मैं मुसलमान साधु, मैं ईसाई साधु।

समाज छोड़ दी लेकिन समाज की बेवकूफी नहीं छोड़ी। समाज ने जो सिखाया था, उसको पकड़े हुए हैं, समाज ने जो बताया था वह उसकी पट्टी बांधे हुए हैं, वो सिर पर तिलक लगाये हुए हैं और उसका जनेऊ पहने हुए हैं। समाज ने जो सिखाया था, उसे पकड़े हैं। और इस ख्याल में है कि हमने समाज छोड़ दिया, रिननसियेशन ले लिया, सन्यासी हो गये हैं। सन्यासी वह है जो समाज की सिखाई हुई सारी नासमझियों को त्याग कर देता है। वह नहीं जो घर छोड़कर भाग जाता है। घर कोई नासमझी है? घर तो मिट्टी का है, उसको छोड़कर भाग जाना बहुत आसान है, सवाल है मन के भीतर जो दीवारें हैं विचार की, वह जो मन के घर हैं, उनको तोड़ने का सवाल है। उनका भार है मनुष्य के ऊ पर।
आपको किसी दिन अगर ऐसा कोई संन्यासी मिल जाये, जिसका कोई धर्म न हो, तो समझना कि यह संन्यासी है। जब तक किसी संन्यासी का कोई धर्म है, उसका कोई घर है, उसकी कोई गृहस्थी है, वह किसी समाज का हिस्सा है, उसे उसके समाज ने जो सिखाया था, उसके मन पर बैठा हुआ है। अगर उसके धर्म पर हमला आ जाये तो वह सन्यासी भी बातें करने लगता है तलवार की। वह भी कहता है कि अब अहिंसा की रक्षा के लिए हिंसा की जरूरत है। वह भी कहता है। वह सब संन्यास-विन्यास उसका विलीन हो जाता है। वह भी कहता है धर्म खतरे में है, भाइयों इकट्ठे हो जाओ। वह भी उसी समाज का हिस्सा है, उसी ऑर्गनाइजेशन का। उसी संगठन का। नहीं ये सारी पर्तें हमारी जो हमें सिखाई जा रही हैं, निरंतर, छोटे से बच्चों के साथ जो अपराध हुआ है दुनिया में उससे बड़ा अपराध किसी के खिलाफ कभी नहीं होता। मां-बाप अपनी सभी शत्रुताओं को, मां-बाप अपनी सभी घृणाओं को मां-बाप अपने सब द्वेष और मत्सर को, मां-बाप अपनी सब सीमाओं को छोटे और नन्हें बच्चों के सिर पर लाद जाते हैं। अगर आप धार्मिक आदमी हैं तो आप अपने मन से तो इन सीमाओं को तोड़ें ही, कृपा करें जो नये बच्चे पैदा हो रहे हों, उन पर इन सीमाओं को न लादें, तो एक नई दुनिया बन सकती है, जो धार्मिक हो। एक ऐसी दुनिया बन सकती है, जहां परमात्मा के मंदिर हों, जैन-हिंदू- बौद्ध-ईसाई के नहीं। और एक ऐसा समय आ सकता है, जब लोगों के बीच दीवालें न हों, और जिन चित्तों में दीवालें न होंगी, वे चित्त निर्भार हो जाते हैं। मुक्त हो जाते हैं, बंधन से टूट जाते हैं उनके, उनकी काराएं गिर जाती हैं। मन से यह सारा परिवर्तन, सारी तोड़-फोड़ करनी जरूरी है, बहुत कुछ नष्ट करना होगा मन के भीतर, क्योंकि बहुत कुछ गलत है, जो हमारे भीतर बैठा हुआ है। यह सब हमारे अहंकार का हिस्सा है इसीलिए तो हम खुश होते हैं, अगर आप जैन हैं और मैं कह दूं कि जैन धर्म बहुत महान धर्म है, आप ताली बजायेंगे; क्यों? आपके अहंकार को तृप्ति हुई, क्योंकि वही धर्म महान है जो आप मानते हैं। आपका अहंकार तृप्त हुआ, जब कोई कह देता है कि भारतीय संस्कृति महान है, और भारत सारी दुनिया का गुरु है; तो सभी नासमझ बड़े प्रसन्न हो जाते हैं क्योंकि उनके अहंकार की तृप्ति हो रही है, क्योंकि मैं भारतीय हूं। और जब भारतीय संस्कृति महान होती है तो उसके साथ मैं भी महान हो जाता हूं। अगर कोई गाली दे दे कि भारतीय संस्कृति तुच्छ है और कु छ नहीं, तो उस पर मुकदमा चलाइये, पकड़िये, हत्या करिये उसकी कि इसने बहुत गड़बड़ काम किया। क्यों? आपके अहंकार को चोट पहुंचा दी। इसीलिए तो आप धर्म की प्रशंसा के लिए पंडितों को इकट्ठा करते हैं कि वे आपके धर्म की प्रशंसा करें। क्यों? धर्म की प्रशंसा आपकी प्रशंसा है, इनडायरेक्ट, अपरोक्ष खुशामद है। पीछे के रास्ते से आपके अहंकार को फुसलाया जा रहा है, खुशामद की जा रही है। आप प्रसन्न हो रहे हैं। साधु, पंडित, सन्यासी यही कर रहे हैं आपके धर्म की खुशामद करते हैं, बदले में आप उनका पैर छूते हैं। वे आपके अहंकार को फुसलाते हैं, आप उनके अहंकार को तृप्त करते हैं। और यह म्युचुअल, यह पारस्परिक खेल चल रहा है, सैकड़ों वर्षों से। और उसके दुष्परिणाम पूरी मनुष्य-जाति भोग रही है। यह तोड़ना होगा, इसे जड़ से तोड़ना होगा। अगर धार्मिक होने का ही खयाल है तो एक क्रांति से गुजरे बिना कोई आदमी धार्मिक नहीं होता। धर्म से बड़ी कोई रेवोल्यूशन नहीं है, धर्म से बड़ा कोई इंकलाब नहीं है। उससे बड़ी कोई क्रांति, उससे बड़ा कोई विद्रोह, उससे बड़ा रिबेलियन नहीं है। क्योंकि सारे चित्त को बदलना होता है। सारे चित्त की सारी पर्तें तोड़ देनी होती हैं और एक नये चित्त के आगमन के लिए द्वार देना होता

है। नाम, जाति, देश या और किसी तरह की सीमा भार है। ऐसा भारी मन यात्रा नहीं कर सकता। ऐसा बंधा हुआ मन यात्रा नहीं कर सकता। कैसे करेगा? यात्रा के लिए तो खुलापन चाहिए, मुक्ति चाहिए, अनकंडीशंड चाहिए। ये सब संस्कारिक चित्त जो है कभी यात्रा नहीं कर सकता। कैसे यात्रा करेगा? संस्कारिक चित्त जो है वह बंधा हुआ चित्त है, गुलाम है।
एक छोटी सी कहानी कहूं, मुझे बहुत प्रीतिकर है, बहुत जगह कही है, रोज-रोज कहता हूं।
एक रात कुछ मित्रों ने शराब पी ली। फिर गये, नदी पर गये। चांद था खूब, चांदनी थी, नांव में बैठे थे और यात्रा किए। पतवारें उठाईं, खूब पतवारें चलाईं, सुबह-सुबह जब ठंडी हवाएं चलने लगीं, तो उनका नशा टूटा। रात भर हो गई थी, आधी रात हो गई थी चलते-चलते, यात्रा करते-करते नाव में। सोचा ना मालूम कहां निकल आये, ना मालूम किस दिशा में? एक मित्र को कहा नीचे उतर कर देखो कहां चले आयें हैं? किस दिशा में? क्योंकि जो नशे में है उसे दिशा का पता होगा? जो नशे में है उसे यह भी पता नहीं किस तरफ चले, कहां चले? एक ने उतर कर नीचे देखा वह हंसने लगा, वो बोला मत घबड़ाओ, सब नीचे उतर आओ, हम वहीं खड़े हैं, जहां हम रात खड़े थे। वे बहुत हैरान हो गये कि बात क्या हुई, इतनी मेहनत बेकार गई? वे नांव की जंजीर खोलना भूल गये, जो खूंटे से बंधी थी।
और यह अधिक धार्मिक लोग सांप्रदायिक, सिखाये हुए नशे के कारण बहुत उपवास करते हैं, बहुत पूजा-पाठ करते हैं, बहुत मंदिर जाते हैं, बहुत पतवार चलाते हैं। लेकिन जब मौत की ठंडी हवाएं लगेंगी तब ये उतर कर नीचे देखेंगे कि नांव कुछ आगे बढ़ी की नहीं, और नीचे उतर कर पायेंगे कि नांव तो खूंटे से बंधी है, जिंदगी बेकार हो गई। करो लाख उपवास, करो लाख मंदिर जाना, करो कपड़े इस तरह बदलो, उस तरह बदलो, हजार ढोंग करो, लेकिन तब तक चित्त तुम्हारा गुलाम है, जब तक चित्त परतंत्र है, तब तक परमात्मा का कोई द्वार न कभी रहा है, न हो सकता है। परतंत्र चित्त परमात्मा को नहीं पा सकता। परमात्मा के पाने के लिए परिपूर्ण स्वतंत्र चित्त चाहिए। मतलब यह है कि परमात्मा जो कि परिपूर्ण स्वतंत्रता है, उसे पाने के लिए तुम्हें भी तो स्वतंत्रता की भूमिका चाहिए। परमात्मा जो कि मोक्ष है, तो उसे पाने के लिए तुम्हें भी तो पहले मुक्ति की भूमिका चाहिए। एक गुलाम एक बादशाह से कैसे मिलेगा? एक बादशाह से मिलने के लिए बादशाहत चाहिए। गिड़गिड़ा कर नहीं मिलता मोक्ष, पैर पड़ कर नहीं मिलता मोक्ष, भीख में नहीं मिलता, पात्रता पैदा करनी होती है। और पात्रता की पहली शुरुआत है स्वतंत्र चित्त। फ्रीडम। फ्रीडम का यह मतलब नहीं कि सफेद चमड़ी के लोग बैठे तो उनकी जगह काली चमड़ी के लोग बैठ गये तो फ्रीडम हो गई।
स्वतंत्रता का यह मतलब है कि तुम व्यक्ति बन जाओ, व्यक्ति। इंडिविजुअल। कौन है इंडिविजुअल, किसको हम व्यक्ति कहें? उसको व्यक्ति कहा जाता है, जो समाज के सारे प्रभावों से अपने चित्त को मुक्त कर लेता है, वह व्यक्ति हो जाता है। और बाकी लोग... ? बाकी लोग भीड़ के हिस्से हैं, क्राउड के हिस्से हैं। व्यक्ति नहीं हैं। एक भीड़ है, उसके हिस्से हैं। भीड़ चिल्लाती है धर्म संकट में है, वे भी चिल्लाते हैं। भीड़ कहती है मंदिर चलो, वे भी जाते हैं, भीड़ कहती है तिलक लगाओ, वे भी लगाते हैं, व्यक्ति नहीं हैं वे। व्यक्ति वह है जो समाज के द्वारा दिये गये संस्कारों को काट कर और स्वयं के चिंतन को उपलब्ध होता है। जो खुद की आंखों से देखता है, जो खुद के कानों से सुनता है। खुद की बुद्धि से विचारता और परखता है। आप परखते हैं, खुद की आंख से? या कि तीन हजार साल पहले कोई मनु हो गये, या कोई महावीर हो गये, या कोई बुद्ध हो गये, या कोई मार्क्स हो गये उनकी आंख से देखते हैं दुनिया को या कि अपनी आंख से देखते हैं? उनके कान से सुनते हैं, या कि अपने कान से सुनते हैं? हजारों साल का प्रभाव है, उस प्रभाव के द्वारा आप देखते ही जीते हैं या व्यक्ति की तरह जीते हैं? जो व्यक्ति जितना परंपरागत है उतना ही सत्य से दूर होता है। जो व्यक्ति जितना ट्रेडिशन में बंधा है उतनी उसकी यात्रा नहीं होती, नहीं हो सकती है। यही तो कारण है कि दुनिया में इतना धर्म, इतनी चर्चा, इतने उपदेश, इतने ग्रंथ, इतना सब प्रचार है लेकिन दुनिया में धर्म कहीं दिखाई नहीं पड़ता। दिखाई हो ही नहीं सकता।

धर्म है परंपरा विरोधी, और जिस धर्म को हम जानते हैं वह है परम्परा का पुत्र। यह धर्म झूठा है। जो धर्म ट्रेडीशन से बंधा है, वह सच्चा नहीं हो सकता। टेडीशन है समाज की सुविधा। इसे समझें। ट्रेडीशन साधना नहीं है, परंपरा साधना नहीं है, वह है समाज की सुविधा। समाज अपनी सुविधाअ के लिए बहुत सी व्यवस्थाएं किये हुए है। उन्हीं व्यवस्थाओं में आप बंधे रहें, समाज विद्रोह से बचने के लिए बहुत से संस्कार बच्चों में डालता है। बच्चे विद्रोही न हो जायें, बाप की दुनिया से बिल्कुल न टूट जाएं, इसलिए उनके मन को कसता है और यंत्र चालित करता है। ये समाज की जरूरतें हैं, लेकिन समाज की जरूरत और आत्मा की जरूरत में भेद है। जो व्यक्ति दूसरों को बहुत ज्यादा स्वीकार करता है, उसका क्या अर्थ है? जो व्यक्ति दूसरों पर श्रद्धा करता है, क्या अर्थ ह ै? जो व्यक्ति अपने पर नहीं मुझ पर श्रद्धा करता है, या मैं किसी और पर श्रद्धा करता हूं इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है आत्म अविश्वास। इसका अर्थ है, अपने पर श्रद्धा नहीं। जब भी कोई दूसरे पर श्रद्धा करता है, तो समझना कि उसमें खुद पर कोई श्रद्धा नहीं है। वह कहां जायेगा, कैसे चलेगा, क्या करेगा? और दूसरे इस दुनिया में तो साथ भी दे सकते हैं लेकिन मोक्ष के मार्ग पर परमात्मा के रास्ते में, आत्मा के रास्ते में तो अकेले जाना है, वहां कोई दूसरा साथ नहीं दे सकता। जिस व्यक्ति की दूसरों पर श्रद्धा है वह कभी वहां नहीं पहुंच सकता, जहां अकेले पहुंचने के सिवाय कोई रास्ता नहीं।
क्या कभी दो आदमी एक साथ परमात्मा के पास पहुंचे हैं ऐसा सुना है? आज
तक कभी ख्याल में आया है यह कि दो आदमी इकट्ठे परमात्मा के पास पहुंच गए हों? कभी इसकी खबर सुनी कि दो आदमी इकट्ठे मोक्ष में पहुंच गए हों? कभी ऐसा सुना कि भीड़ दरवाजा खोल कर भगवान के घर में प्रविष्ट हो गई हो। इंडिविजुअल्स, एक-एक आदमी, अकेला-अकेला। दूसरे को साथ ले जाने का कोई उपाय नहीं। सच तो यह है कि जहां दूसरे साथ हैं, उसका नाम संसार है; और जहां आप बिल्कुल अकेले हैं उसका नाम आत्मा है। तो रास्ता बिल्कुल अलग होगा। किसी पर श्रद्धा, किसी पर विश्वास, परंपरा के ऊ पर जकड़ साथ नहीं दे सकती। परंपरा है, श्रद्धा है, विश्वास है, शास्त्र हैं, सदगुरु हैं, ये सब भार की तरह ऊ पर बैठे हैं। क्योंकि ये आपको नहीं उठने देंगे। वो आपके ऊ पर नहीं बैठे हैं, आप उनको बिठाये हुए हैं, उनकी कल्पनाओं को।
महावीर किसको बांधे हुए हैं और कब महावीर ने कहा कि तुम मुझसे बंध जाना। लेकिन हम उनको बांधे हुए हैं, हम उनसे अपने को बांधे हुए हैं। महावीर के जीवन में एक घटना है, बड़ी अदभुत है। उनका शिष्य गौतम, वर्षों तक महावीर के पास था, लेकिन उसे ज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ। सबसे ज्यादा ज्ञानी वही था, सबसे बड़ा पंडित वही था। उनके पास जो भी लोग थे सबसे ज्यादा होशियार, सबसे ज्यादा बुद्धिमान, सबसे ज्यादा स्मृतिधर वही था। लेकिन उसे ज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ था। और यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, पंडितों को कब ज्ञान उत्पन्न हुआ है? ज्ञानी बात और है। ज्ञानी का अर्थ है जिसने जाना, पंडित का अर्थ है, जिसने पढ़ा। और जानने और पढ़ने में जमीन-आसमान का अंतर है। एक आदमी प्रेम के संबंध में किताबें पढ़ ले, एक आदमी प्रेम करे और जाने इसमें अंतर होगा कि नहीं? हां प्रेम पर व्याख्यान दिलवाना हो तो पंडित जीत जाये। एक आदमी नदी में तैरे, तैरना जानता हो, और एक आदमी तैरने के संबंध में जितने शास्त्र हैं सब पढ़ ले; हां तो यह तो जरूर सच है कि अगर व्याख्यान दिलाना हो तो वह जिसने शास्त्र पढ़े हैं, वह जीत जाये लेकिन अगर नदी में नांव डूब रही हो, तब पता चले कि शास्त्र काम देते हैं कि तैरना काम देता है।
ऐसा एक बार हुआ था, वह भी मैं बताऊं फिर महावीर की बात आपको बताऊं गा।
एक मल्लाह और एक पंडित नदी में यात्रा कर रहे थे। उस पंडित ने रास्ते में पूछा कि वेद-शास्त्र पढ़े हैं? उस मल्लाह ने कहा कि नहीं महाराज! मैं दरिद्र आदमी, मैं क्या वेद-शास्त्र... मैं तो कुछ पढ़ना ही नहीं जानता। पंडित ने कहाः तेरी आठ आना जिंदगी बेकार गई। और तभी जोर की हवाएं चलने लगीं और नांव डगमग होने लगी, मल्लाह ने पूछा, महाराज तैरना आता है, महाराज

ने कहा, नहीं। उसने कहाः आपकी सोलह आना जिंदगी गई। अब मैं तो जाता हूं, आप अपने वेद-शास्त्र सम्हालें।
पंडित और ज्ञानी में फर्क है। पंडित तो बड़ा था गौतम, लेकिन ज्ञान उसने नहीं मिला था। महावीर से उसने कहा, मेरे पीछे जो आये, देखता हूं आनंद से भर गये। मेरे पीछे जो आये, देखता हूं उनकी चेतना में फूल लग गये, मेरे पीछे जो आये उनकी सुगंध दूर-दूर तक फैल रही है, लेकिन मैं--? यह मुझे क्या गड़बड़ हो रही है कि मैं नहीं उपलब्ध हो पा रहा हूं, आखिर मुझे कब मुक्ति का अनुभव होगा? महावीर ने कहाः थोड़ी सी तेरे जीवन में बाधा पड़ गई है। क्या बाधा? अदभुत बात महावीर ने कही, महावीर ने कहा, तू सब तो छोड़ कर आ गया, लेकिन तूने आकर मुझे पकड़ लिया। तेरी जो मुट्ठी थी वह, जिन चीजों पर थी, धन पर थी, बच्चों पर, स्त्री पर किसी पर भी होगी, जो भी था; जिस पर तेरी मुट्ठी बंधी थी वो तूने खोली और जल्दी से फिर बंद कर ली; अब महावीर स्वामी पर मुट्ठी बांध ली। लेकिन मुट्ठी अब भी बंद है और खुली मुट्ठी चाहिए। तब तो सत्य मिल सकता है, बंधी मुट्ठी को कैसे मिलेगा। हाथ तो खुला हो। तो मुझको भी छोड़ दे। लेकिन गौतम के तो आंसू आ गये, पत्नी को तो छोड़ना बहुत आसान है, महावीर को छोड़ना बहुत कठिन। पत्नियां तो बहुत से लोग छोड़ देते हैं, लेकिन महावीर को छोड़ने की कितने लोग हिम्मत करते हैं? पत्नी बेचारी को छोड़ देना एकदम आसान बात है, गरीब औरत उसे छोड़कर भाग जाने में कोई कठिनाई है? बल्कि हो सकता है साथ में रहने में कठिनाई हो रही हो। बच्चों को छोड़ कर भाग जाना कितनी सरल बात है, कौन सी कठिनाई है? साथ रहने में भार और जिम्मेवारी है। इसलिए जितने गैर जिम्मेवार और निकम्मे लोग हैं, उन सबके लिए संन्यास का द्वार खुला है। लेकिन महावीर को, बुद्ध को, राम को, कृष्ण को छोड़ना बहुत कठिन है। क्योंकि उनके साथ सारी सिक्योरिटी जुड़ी है कि अगर महावीर को छोड़ दिया तो फिर कौन सहारा है? फिर कौन हाथ पकड़ कर बैकुंठ ले जाए, मोक्ष ले जाए? फिर कौन दीया दिखाये, अंधेरे में। सारी सुरक्षा उनके साथ जुड़ी है। वही अवतार हैं, वही कल्याणकारी हैं, उनके पैर पड़ो, वे ही आगे लगाएंगे पार। उनके साथ तो सारी कमजोरी, अकेलापन उन्हीं में सुरक्षा है, उनको छोड़ने में दिक्कत है। वह नहीं छूटता था गौतम से महावीर का भाव। आखिर से महावीर से गौतम का भाव छूटे या न छूटे, महावीर दुनिया से एक दिन छूट ही गए। महावीर एक दिन चल बसे, गौतम तो पकड़े रहा, लेकिन महावीर हवा हो गये। देह तो पड़ी रह गई, वह गांव के बाहर गया। रास्ते में लौटता था, यात्रियों ने कहा कि तुम्हें पता है, महावीर का तो मोक्ष हो गया, निर्वाण हो गया। एकदम रोने लगा, रोज समझाता था लोगों को आत्मा अमर है, उस वक्त याद न रही। एकदम रोने लगा।
पंडित रोज समझाता है आत्मा अमर है, लेकिन जब मौत सामने आती है तो कंपने लगता है। वह तो किताब में पढ़ा था कि आत्मा अमर है, वह कोई तैरना थोड़ी जानता था, तैरने के बाबत शास्त्र जानता था, वह तो घबराने लगा, गौतम रोने लगा, महावीर छोड़ दिया तो मेरा क्या होगा? उस वक्त भी उसको महावीर की चिंता नहीं आई, मेरा क्या होगा? चिंता तो अपनी थी, वही महावीर सहारा थे, और वह रोने लगा और कहने लगा कि महावीर के रहते मैं मुक्त नहीं हो सका तो अब जब महावीर नहीं रहे, तो मैं तो डूब गया। मेरी जिंदगी तो मुश्किल हो गई। फिर उसने कुछ सम्हाला अपने को और पूछा यात्रियों से, क्या महावीर ने मेरे लिए कोई अंतिम संदेश छोड़ा है? निश्चित ही उन्होंने कहा, संदेश छोड़ा है। छोटा सा संदेश है हम तो समझ ही नहीं सके, उसका अर्थ क्या है? लेकिन सुना था वहां, तुम जाओ वहां और लोग भी बता देंगे एक छोटा सा संदेश सुना था कि गौतम के लिए वे कुछ कह गये हैं। वह एकदम बोला कि जल्दी कहो कि वह क्या कह गये हैं? उन यात्रियों ने कहा कि महावीर ने कहा है, गौतम से कह देना और यह बात दुनिया भर के गौतमों से कह देने योग्य है, जहां भी जो जिसको पकड़े हुए है, वह गौतम की स्थिति में है। महावीर ने कहा है, गौतम से कह देना, तू पूरी नदी तो पार कर गया लेकिन किनारे को पकड़कर क्यों रुक गया है, इसको भी छोड़ दे। एक आदमी पूरी नदी पार कर ले और फिर किनारे को पकड़ कर रुक जाये, तो भी नदी में ही रुका रहेगा। नदी को पार करना काफी नहीं है, किनारे को भी छोड़ना जरूरी है। वह सारे संसार को छोड़ कर आया था, महावीर को किनारा समझ कर उनके पास तैरता हुआ आया, सारी नदी को छोड़ दिया, लेकिन फिर किनारे को पकड़ कर वहीं रुक गया।

तो फिर भी वह नदी में पड़ा हुआ है। महावीर कह गये गौतम को कह देना, तू सारी नदी पार कर गया अब तू किनारे को भी छोड़ दे। यह भाव उसको जैसे ही स्मरण में आया, क्योंकि महावीर की मृत्यु हो गई थी; अब किनारा कहीं था भी नहीं, हवा थी। तत्क्षण जो काम महावीर की मौजूदगी में नहीं हो सका वह हो गया। जिस सुबह महावीर ने देह छोड़ी, उसी सांझ गौतम को ज्ञान उपलब्ध हो गया।
कठिन है, परंपरा को, शास्त्र को, गुरु को छोड़ना। क्यों कठिन है? भयग्रस्त मन है, छोड़ देंगे फिर पता नहीं क्या होगा? लेकिन जो नहीं छोड़ता, जो अभय को नहीं पाता, फीयरलेसनेस को नहीं लाता अपने भीतर, वह पकड़े रहे, पकड़े रहे, उसके पकड़े रहने से कोई फायदा नहीं है। उसकी पकड़न ही उसकी रुकावट हो जायेगी।
सारी दुनिया में धर्म का पतन हुआ है, धर्म का ह्नास हुआ है क्योंकि सभी लोगों ने धर्म को पकड़ लिया है, वह उनकी मुट्ठियों में बंद हो गया है, जबकि धार्मिक लोगों की मुट्ठियां खुली चाहिएं। खुली मुट्ठी, खुला मन, उन्मुक्त मन, ओपन माइंड, क्लोज्ड नहीं, बंद नहीं, तो पूछे अपने से कि क्या मेरा मन बंद है, अगर बंद है तो चोट करें उस पर, तोड़ें उसके ताले, दीवारें गिरा दें, दरवाजे मिटा दें। इतना साहस हो तो निश्चित मैं आपसे कहता हूं बहुत थोड़े ही समय में कोई भी व्यक्ति शांति को, सत्य को, परमात्मा को अनुभव कर सकता है लेकिन अगर इतना साहस न हो, जंजीरें आपके हाथ में हों, आपको कहा गया हो कि तोड़ना हो तोड़े दें, पत्थर आपके निकट हों, जिन पर जंजीरें पटकने से टूट जाएंगी, लेकिन आपको जंजीरों से प्रेम हो गया हो, बहुत दिन साथ रहने से और आप उनको संभाले रखें और फिर भी पूछते रहें कि स्वतंत्रता का रास्ता क्या है? परमात्मा का रास्ता क्या है? तो कोई भी क्या करेगा? कोई भी कुछ नहीं कर सकता है।
एक छोटी सी कहानी और मैं अपनी चर्चा को पूरा करूंगा।
एक यात्री एक पहाड़ी सराय में आकर ठहरा। पहाड़ी सराय थी, धर्मशाला थी। बड़े घने जंगल में थी, बड़े दुर्गम मार्ग पर थीं। यात्री अक्सर वहां से निकलते, शिकारी निकलते, वे वहां ठहरते। यह नया युवक भी... अपने घोड़े को सांझ उसने आकर बांधा, उस सराय में ठहरा। जैसे ही वह उस सराय में घुस रहा था, सराय के बाहर ही एक पिंजड़े में एक तोता लटका हुआ था। और वह तोता जोर-जोर से कह रहा थाः स्वतंत्रता, स्वतंत्रता, स्वतंत्रता। बड़ा हैरान हुआ। बड़ी उसकी आवाज में, बड़ी पीड़ा थी। हैरान हुआ, किसने इसे सिखाया? उसके मालिक ने, सराय के मालिक ने उसे सिखाया था। तो स्वतंत्रता, स्वतंत्रता वह दिन भर चिल्लाता था। यह युवक भी बड़ा विद्रोही, बड़ा स्वतंत्रता प्रेमी था, अभी-अभी वह जेल से छूटा था, अपने मुल्क की लड़ाई के लिए लड़ता था। गुलामी के खिलाफ लड़ता था, एक राजनैतिक विद्रोही था। उसको यह तोता बहुत पसंद आया। अंदर गया, उसने निर्णय किया कि रात इसका पिंजड़ा खोल देंगे, इतना परेशान हो रहा हैः स्वतंत्रता, स्वतंत्रता, स्वतंत्रता। रात जब सराय का मालिक सो गया, वह युवक गया, उसने पिंजड़ा खोला, स्वतंत्रता चिल्लाने वाले तोते को बाहर निकाला। वह चिल्लाता तो है स्वतंत्रता-स्वतंत्रता लेकिन उनके सीखचों को तोता पकड़े हुए है। वह युवक अंदर हाथ डालता है, वह तोता और अंदर सिकुड़ता है, सींखचे पकड़े हुए है और घबड़ाहट में जोर से चिल्लाता हैः स्वतंत्रता, स्वतंत्रता। युवक बहुत हैरान हुआ कि यह कैसा तोता है? लेकिन फिर भी मेहनत की, किसी तरह झपटा, बेचारा छोटा सा तोता था, किसी तरह निकाल लिया, निकाल कर उसको बाहर उड़ा दिया। सोचा कि बड़ी तृप्ति से रात वह सोया। लेकिन सुबह जब उसकी नींद खुली तो देखा कि तोता अपने पिंजड़े में वापस बैठा और चिल्ला रहा हैः स्वतंत्रता, स्वतंत्रता, स्वतंत्रता।
बस यही कहानी कहता हूं, इस पर विचार करना। इस कहानी को अपने मन में ले जाना और सोचना। चिल्ला रहे हैंः मोक्ष, मोक्ष, मोक्ष; आत्मा, आत्मा, आत्मा; ईश्वर, ईश्वर, ईश्वर। पकड़े हुए हैं पिंजरे को, मैं आपको खींच भी दूं अभी इस हाल के आप बाहर हुए कि वापस आप उसी पिंजरे में बैठे हुए हैं। मैं गाड़ी में बैठकर जाऊंगा मैं देखूंगा कि आप पिंजड़े में बैठे हुए हैं, चिल्ला रहे हैंः स्वतंत्रता, स्वतंत्रता। इसका कोई अर्थ नहीं है, मत चिल्लाइए, मत बकवास करिए, चुप हो जाइये; गुलामी में रहना है, गुलाम रहिए, चिल्लाहट क्यों मचा

रहे हैं, क्यों मंदिर जा रहे हैं, किसलिए? क्यों खोज रहे हैं धर्म? छोड़िए, गुलामी पसंद है, गुलामी में रहिये। लेकिन अगर स्वतंत्रता का ख्याल आ गया है तो चिल्लाइये मत, गीता के श्लोक मत बकिये। मत राम-राम की रट लगाइये, मत मोक्ष-मोक्ष की बातें करिये, देखिये कहां-कहां गुलामी है, तोड़िये। जहां- जहां सींखचा मिले छोड़िए, आ जाइये बाहर, कौन किसको बंद किये हुए है। हम बंद हैं इसलिए बंद हैं। हम अपनी इच्छा से बंद हैं। कौन किसे परमात्मा से दूर किये है? हम अपने हाथ से दीवारें खड़ी किए हुए हैं। अगर सच में किसी मनुष्य के मन में अभीप्सा पैदा होती है, प्यास पैदा होती है, जानना है सत्य को, जानना है ईश्वर को, कोई रुकावट नहीं है। कभी कोई रुकावट नहीं रही है। तोड़ डालिये थोड़े-मोड़े बंधन हैं, मिटा डालिए। और उठिए स्वतंत्र होकर। जब आप स्वतंत्र होंगे, सत्य आपके पीछे आ जायेगा। जब आप सब भांति मुक्त होंगे चित्त की काराओं से आप पायेंगे मोक्ष आपके भीतर विराजमान है। कहीं कुछ दूर नहीं है, थोड़े से सींखचे हैं, सारी रुकावट उनकी है, चित्त की कुछ दीवारें, कुछ जंजीरें हैं, इन्हें तोड़ना जरूरी है। जो मनुष्य स्वतंत्र होता है, वह मनुष्य परमात्मा को पाने का अधिकार पा जाता है।
ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं, जरूर आपके पिंजड़े को थोड़ा-बहुत हिला दिया हो, कोई कष्ट हुआ हो, कोई तकलीफ हुई हो, तो मुझे क्षमा करना। वैसे मेरा तो इरादा पिंजड़ा तोड़ ही देने का है, हिलाने का नहीं है। भगवान इतनी ताकत दे कि अपने-अपने पिंजड़े के हम बाहर हो सकें। स्वतंत्रता चिल्लाएं नहीं, बल्कि स्वतंत्र हो सकें इसकी कामना करता हूं। वे ही लोग धार्मिक हैं जो स्वतंत्र हैं। वे ही लोग धार्मिक हैं जो अपनी सारी परतंत्रता को तोड़ डालते हैं। वे ही लोग धार्मिक हैं जो व्यक्ति हैं। उनके ही भीतर ही आत्मा का बोध हो सकता है।

इन बातों को इतने प्रेम से शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

स्वयं की सत्ता
सातवां प्रवचन

पूछें--मैं कौन हूं?

मैं किस संबंध में आपसे बात करूं? मैं कोई उपदेशक नहीं हूं, और न किसी धर्म के प्रचार की मेरे मन में कोई संभावना है। न ही आप अपने जीवन को कैसा निर्मित करें, इस संबंध में कोई सलाह मैं आपको दूंगा। न ही यह बताना चाहता हूं कि किसी मनुष्य को किन आदर्शों के अनुकूल जीना चाहिए। क्योंकि मेरी दृष्टि में मनुष्य की आज तक की पूरी संस्कृति एक ही बात से अभिशप्त रही है, और वह यह है कि हमने हमेशा मनुष्य के जीवन के लिए एक ढांचा और एक आदर्श देने की कोशिश की है। उसका परिणाम यह हुआ है कि मनुष्य का विवेक उसकी आत्मा निरंतर परतंत्र से परतंत्र होती गई है। और जो विवेक स्वतंत्र नहीं है, उसका आचरण चाहे कितना ही ऊ पर से शुद्ध हो, उसका व्यवहार चाहे ऊ पर से कितना ही नीतियुक्त हो, उसके जीवन में चाहे कितनी ही सभ्यता और संस्कृति का प्रदर्शन हो, उसकी आत्मा विकृति के, पाप के, पीड़ा के ऊपर नहीं उठ सकती है। मनुष्य का विवेक स्वतंत्र न हो तो उसके ठीक आचरण का कोई भी मूल्य नहीं है। क्योंकि वैसा आचरण उसके जीवन में कोई आनंद की सुगंध नहीं ला सकेगा। लेकिन निरंतर हमें यह सिखाया गया है और हम इस ढांचे के भीतर पले हैं और बड़े हुए हैं, और यह कोई एक-दो दिन की बात नहीं, हजारों वर्ष से मनुष्य के ऊपर ढांचे और आदर्श थोपे गए हैं। उसे बताया गया है उसे कैसा होना चाहिए, उसे बताया गया है उसे क्या खाना चाहिए, क्या पहनना चाहिए, कैसे उठना चाहिए, कैसे बोलना चाहिए, उसे करीब-करीब सारी बातें बता दी गई हैं और उसके सामने एक ही विकल्प है, या तो उन बातों के अनुसार चले, सज्जन हो जाए या उन बातों के विरोध में चले और दुर्जन हो जाये। या तो उन बातों को स्वीकार कर ले और अपने को उनके अनुसार ढाल ले, और अच्छा आदमी, नीति युक्त आदमी समझा जाये। या उनके विरोध में खड़ा हो जाये, उनके विपरीत चला जाए और अनीतियुक्त हो जाए। मेरी दृष्टि में ये दोनों विकल्प घातक हैं, मनुष्य के लिए यह महत्वपूर्ण नहीं है कि वह किसी ढांचे को स्वीकार करे या अस्वीकार करे; सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि वह अपने उस विवेक को जागृत करे, जिसके विवेक के साथ अपने आप ही उसके निज का आदर्श स्पष्ट होना शुरू होता है। जब तक मैं दूसरों के द्वारा निर्णियत, दूसरों के द्वारा उपदेशित आदर्शों को स्वीकार करता हूं, तब तक मैं अपनी आत्मा को स्वीकार करने को राजी नहीं हुआ हूं। इसका जो दुष्परिणाम हुआ है वह आश्चर्यजनक है। इसका दुष्परिणाम हुआ है या तो थोथे आचरणवान लोग हैं, थोथे इसलिए कि उनके प्राणों में उनके आचरण की कोई जड़ें नहीं हैं, आचरण उनका अत्यंत ऊपरी और बाह्य है। जैसे हम वस्त्रों को पहन कर नग्नता को छिपाये हुए हैं, ऐसे ही वे भी अच्छे आचरण को ओढ़ कर अपने भीतर के पशु को छिपाये हुए हैं। या फिर दूसरी तरफ वे लोग हैं, जो इसकी प्रतिक्रिया में अपने भीतर की समस्त वासनाओं को स्वच्छंदता दे दिये हैं, और ये दो ही तरह के लोग हैं। या तो नीति युक्त लोग हैं, या नीति विरोधी लोग हैं। लेकिन धार्मिक मनुष्य जमीन पर कहीं भी नहीं हैं।
धार्मिक मनुष्य मैं उस व्यक्ति को कहता हूं जो अपने स्वयं के विवेक में अपने जीवन के आदर्श को अपने भीतर ही खोज लेता है। जो अपने से बाहर कभी भी आदर्श को खोजेगा, वह दास, और गुलाम और एक गहरी इस्लेवरी में पड़ जायेगा। वह उस गुलामी के ऊपर नहीं उठ सकता है। और जिसका चित्त गुलाम है, वह और कुछ भी जान ले, वह सत्य को कभी भी नहीं जान सकता है, वह प्रेम को कभी भी नहीं जान सकता है। वह आनंद से कभी भी परिचित नहीं हो सकता है। दुनिया से प्रेम, सत्य और आनंद इसीलिए तिरोहित हो गए हैं कि आप में से कोई भी अपने को स्वीकार नहीं करता है, आप सब अपने दुश्मन बने बैठें हैं। और या तो आप अपनी वासनाओं को स्वीकार करते हैं, वे आपको पशुओं की तरफ ले जाती हैं, या फिर समाज के द्वारा सिखाए गए आदर्शों को स्वीकार करते हैं, वे आपको पाखंड की और ले जाते हैं। और मनुष्य इन दो घातक विकल्पों के बीच इस बुरी भांति फंस गया है कि उसे इन दो के अतिरिक्त कोई तीसरा मार्ग भी दिखाई नहीं पड़ता। या तो

वासनाओं को खुली छूट दे देने का मार्ग है, या फिर वासनाओं के साथ लड़ने और दमन करने का मार्ग है।
मैं आपसे आज की सुबह यह निवेदन करना चाहूंगा, इन दोनों मार्गों ने दुनिया में दो तरह की संस्कृतियां पैदा की हैं, जो आदर्श को आचरण को मानने वाली संस्कृति है वह पूरब के मुल्कों में पैदा हुई है, जो वासना की स्वच्छंदता को स्वीकार करने वाली संस्कृति है वह पश्चिम के मुल्कों में पैदा हुई है। ये दोनों संस्कृतियां घातक हैं। इन दोनों संस्कृतियों में कोई भी चुनने योग्य नहीं है। अभी ठीक-ठीक मनुष्य की संस्कृति पैदा नहीं हो सकी है, वह संस्कृति जिसमें विवेक जागृत हो और अनुशासन ऊपर से न थोपा जाए, अंतस से स्फुटित हो, अंतस से विकसित हो। अभी मनुष्य की संस्कृति विकसित नहीं सक ी है।
हम दो तरह की अधूरी और खंडित संस्कृतियों के प्रभाव में परेशान रहे
हैं। एक संस्कृति जो कि वासनाओं के दमन पर जोर देती है--पूरब की संस्कृति, हमारे मुल्कों की संस्कृति। जिस जमीन के हिस्से पर हम पैदा हुए हैं, वहां की संस्कृति। उसका परिणाम हुआ है अत्यंत दमन के कारण, अत्यंत रुग्ण, दमित, कुण्ठित व्यक्तित्व पैदा हुए हैं; दीन-हीन व्यक्तित्व पैदा हुए हैं, दरिद्रता से भरे हुए समाज पैदा हुए हैं, दासता और गुलामी से भरे समाज पैदा हुए हैं। सोच-विचार से हीन, पुनरुक्ति करने वाले लोग पैदा हुए हैं और एक अदभुत आश्चर्यजनक रूप से हीनता का, दीनता का वातावरण व्यापक हो गया है। दूसरी तरफ पश्चिम के लोग हैं, उन्होंने स्वच्छंदता के रास्ते को पकड़ा है, वह भी इसकी प्रतिक्रिया है, दमन की प्रतिक्रिया है। स्वच्छंदता के मार्ग पर वासनाएं पागल होकर दौड़ रही हैं। समृद्धि बढ़ती जाती है और शांति क्षीण होती चली जाती है। बाह्य प्रभुता बढ़ती जाती है, आंतरिक नियंत्रण विलीन होता चला जाता है। उनकी अपनी पीड़ा है, उनका अपना दुख है। उनकी अपनी चिंता और एंग्जाइटी है।
एक छोटी सी कहानी कहूं उससे इन दो संस्कृतियों के खंडित रूप आपको स्पष्ट हो सकेंगे। और फिर मैं अपनी चर्चा में ठीक से प्रवेश कर सकूंगा। रोम में एक बहुत पुराने समय में एक बादशाह बीमार पड़ा। उसकी बीमारी धीरे- धीरे घातक से घातक होती चली गई। अंततः चिकित्सकों ने इनकार कर दिया, उसके स्वस्थ्य होने का कोई मार्ग शेष नहीं बचा था। और उन्होंने कहा कि दो-चार दिन जितने देर भी जी जाए, जी जाए, लेकिन अब जीने की कोई संभावना नहीं है। लेकिन मरने की तो किसी की भी तैयारी नहीं होती उस बादशाह की भी नहीं थी। वह घबड़ाया उसने अपने वजीरों को कहा, किसी साधु को, किसी फकीर को, किसी संन्यासी को खोजो, अगर चिकित्सक हार गए हैं तो किसी चमत्कार का सहारा लो; और आखिर वे एक फकीर को खोज कर ले आए, जिसके बाबत यह कहा जाता था कि वह अगर बीमार को छू दे तो बीमारी ठीक हो जाये और जिसके बाबत खबरें थी कि उसने मुर्दों को भी जिंदा किया है। वह फकीर राजमहल आया, उसने आते ही बादशाह को कहा कि तुम्हें तो कोई विशेष बीमारी नहीं है, उठ कर बैठ जाओ, एक छोटा सा इलाज है तुम्हारी इस छोटी सी बीमारी का--उसका इंतजाम कर लो, इंतजाम होते ही बीमारी दूर हो जायेगी। मरने का कोई कारण नहीं है। राजा ने पूछा कौन सा इलाज है? उसके वजीर भी आशा से भरे और आदमी ने जो इलाज बताया बहुत सरल था, इतना सरल था जिसका कोई हिसाब नहीं बहुत शीघ्र कुछ ही पलों में वह इलाज हो सकता था। उसने यह कहा कि तुम्हारी इस राजधानी में इस बड़े रोम में किसी एक ऐसे आदमी के कपड़े मिल सकेंगे क्या, जो कि सुखी हो, शांत हो; जो कि समृद्ध हो और आनंदित हो। उन्होंने कहा इसकी क्या कमी है? उन कपड़ों का क्या होगा? उन्होंने कहा वे कपड़े लाकर इस बादशाह को पहना दिये जायें, यह बादशाह कपड़े पहनते ही स्वस्थ हो जायेगा।
वजीर बोले यह तो एकदम सरल बात है। वे भागे उनकी राजधानी समृद्ध लोगों
से भरी थी। सुखी लोगों से भरी थी। वे बड़े से बड़े लोगों के घर में गए, लेकिन हर जगह से उन्हें निराश लौटना पड़ा। जिससे भी उन्होंने कहा कि हमारे बादशाह बीमार हैं, और एक सुखी और शांत व्यक्ति के कपड़े चाहिए, क्या आपके कपड़े हमें मिल सकेंगे? उसी आदमी ने कहा, राजा के प्राण बचाने को मैं अपने प्राण दे सकता हूं, लेकिन मेरे कपड़े काम नहीं आ सकेंगे, समृद्ध तो मैं हूं

लेकिन शांत मैं नहीं हूं। एक, दो, तीन... सुबह से सांझ हो गई, उस नगर के सारे बड़े लोगों से मिलना हो गया और तब उन्हें पता चला कि इलाज तो कठिन मालूम होता है। समृद्ध लोग थे लेकिन शांत नहीं थे। तब किस मुंह से राजा के सामने लौटें, क्या कहें, क्या न कहें? बहुत चिंतित उसके वजीर हुए। और उन्होंने अंतिम प्रयास किया गांव के बाहर दरिद्रों की बस्ती में खोजबीन की कि शायद वहां कोई मिल जाए। नदी के किनारे जब सूरज डूब गया और रात हो गई थी, तो वे उदास गांव की तरफ वापस लौट रहे थे, कोई उन्हें नहीं मिला। लेकिन नदी के किनारे एक पत्थर के पास उन्होंने एक आदमी को बांसुरी बजाते हुए देखा। उसकी बांसुरी में कुछ ऐसे आनंद की ध्वनि थी, कुछ ऐसी शांति की खबर थी कि वे ठहर गये, कुछ ऐसी मोहक हवा थी कि वे रुक गये; उसके पास गये और उन्होंने कहा हो न हो यह आदमी जरूर शांत और आनंदित होगा। उन्होंने जाकर उस आदमी से निवेदन किया कि मित्र! देश का बादशाह बीमार है, उसके बचाने की बड़ी जरूरत है, और बताया गया है कि जो व्यक्ति शांत हो, समृद्ध हो उसके कपड़े ले आओ। क्या तुम शांत हो? क्योंकि हम दिन भर से खोज रहे हैं, समृद्ध लोग तो मिले लेकिन शांत व्यक्ति नहीं मिला। लेकिन तुम्हारे संगीत की लहरों से ऐसी झलक आती है कि तुम्हारे प्राणों में जरूर कोई शांति का स्रोत फूटा है। उस व्यक्ति ने कहा कि मैं तो अपने प्राण बादशाह के लिए देने को तैयार हूं, और निश्चित ही मैं शांत हूं, लेकिन क्षमा करें, अंधेरे में आपको दिखाई नहीं पड़ रहा, मैं नंगा बैठा हूं, मेरे पास वस्त्र नहीं हैं। वह राजा उसी रात मर गया, क्योंकि उस बड़े रोम में एक भी आदमी नहीं मिल सका जो शांत और समृद्ध एक ही साथ हो।
मनुष्य की संस्कृति भी इस तरह के दो विकल्पों से पीड़ित रही है। अब तक ठीक और अखंडित और इंटिग्रेटिड मनुष्य पैदा नहीं हो सका। अखंडित संस्कृति पैदा नहीं हो सकी। ऐसी संस्कृति पैदा नहीं हो सकी जो इन दो विरोधी विकल्पों के बीच में संयम की संस्कृति हो। वह संस्कृति कैसे विकसित होगी? एक तो वासना का मार्ग है, समृद्धि का मार्ग है, धन का मार्ग है, पद, प्रतिष्ठा और शक्ति का मार्ग है, और एक मार्ग दमन का है, सदाचरण का है, दरिद्रता का है, त्याग का है। लेकिन ये दोनों मार्ग एक-दूसरे की प्रतिक्रियाएं हैं। इन दोनों मार्गों में कोई भी मार्ग विवेक का मार्ग नहीं है। विवेक क्या है और कैसे मुक्त हो सकता है? इस संबंध में ही थोड़ी सी आपसे बात करनी हैं। और यदि विवेक मुक्त हो जाये, यदि आपके भीतर की विवेक की शक्ति सारे बंधनों को गिराकर मुक्त हो जाए, तो आपके जीवन में एक डिसिप्लिन, एक अनुशासन अपने आप उत्पन्न होना शुरु होगा, जिसे आप थोपते नहीं हैं, जिसे आप ओढ़ते नहीं हैं, लेकिन जो विवेक की छाया की भांति अपने आप पीछे आता है। जैसे बैलगाड़ी चलती है, तो उसके चाक के निशान उसके पीछे अपने आप बनते चले आते हैं, उन्हें बनाना नहीं पड़ता, वैसे ही जहां विवेक जागृत होता है, वहां आचरण गाड़ी के चाक के निशानों की भांति अपने आप पीछे आता है, उसे निर्मित नहीं करना पड़ता। जो आचरण निर्मित किया जाता है, वह झूठा होता है। जो आचरण कल्टिवेट किया जाता है, वह मिथ्या होता है। जिस बात को हम सीखकर विचार कर आरोपित करके करते हैं उस बात में सत्यता नहीं होती, और न ही प्राण होते हैं। जैसे मैं चाहूं तो प्रेम सीख सकता हूं, लेकिन क्या सीखा हुआ प्रेम सत्य होगा? मैं चाहूं तो प्रेम की सीखी हुई बातें कर सकता हूं। लेकिन क्या प्रेम की सीखी हुई बातें मिथ्या नहीं होंगी? क्या ऐसा प्रेम अभिनय और एक्टिंग से ज्यादा नहीं होगा? निश्चित ही इससे ज्यादा नहीं हो सकता है। क्योंकि जो सीखकर किया जाता है, उसकी जड़ें, बुद्धि और विचार से गहरी नहीं जाती। जो विचार मात्र के कारण किया जाता है, वह अभिनय है। जड़ें जब आत्मा तक होती हैं, तो जो आता है वह सीखा हुआ नहीं होता। वह खिला हुआ होता है।
एक फूल है कागज का उसे हम घर में खोंस कर लगा देते हैं, वह ऊ पर से लगाया जाता है। और एक फूल है पौधे का, वह पौधे के प्राणों से उसकी पूरी आत्मा से प्रकट होता है, फूलता है, इन दोनों फूलों में क्या भेद है? एक फूल बाहर से लाया गया है, बनाया गया है, लगाया गया है। एक फूल लाया नहीं गया, आया है; बनाया नहीं गया, विकसित हुआ है। और इन दो फूलों में जो अंतर है वही

अंतर वास्तविक और मिथ्या आचरण में होता है। जहां-जहां मिथ्या आचरण बहुत ज्यादा प्रभावी हो गया है, वहां-वहां मनुष्य अत्यधिक पीड़ित और दुखी है, यह बिल्कुल स्वाभाविक है। यह बिल्कुल ही स्वाभाविक है। हम सारे लोग दुखी और पीड़ित हैं, क्यों? हम सारे लोग इसलिए दुखी और पीड़ित हैं कि जो भी आनंद के स्रोत हमारे भीतर हो सकते हैं, वे बाहर से नहीं लाये जा सकते। और जब भी उन्हें हम बाहर से लाने की कोशिश करते हैं तो भीतर के स्रोत दबे रह जाते हैं, और बाहर से लाई हुई चीजों में हम इतने दब जाते हैं, कि उस दबने के कारण भीतर के फूल आने मुश्किल हैं। यह करीब-करीब ऐसा ही है कि अगर किसी फूल के पौधे की कली में हम बहुत से कागज के फूल ऊपर से बांध दें तो कागज के फूल तो झूठे होंगे ही, कागज के फूल उस कली के ऊ पर घिर कर उस कली के भी प्राण ले लेंगे। उस कली को भी फिर सूरज की रोशनी नहीं पहुंच सकेगी, उस कली को भी फिर हवाएं नहीं पहुंच सकेंगी; वह कली भी फिर मुरझायेगी और मर जायेगी। जब भी कोई व्यक्ति बाहर की दुनिया से कुछ लाकर अपने को सजाता है, और हम सब भांति जब भी कुछ लाते हैं बाहर की दुनिया से लाते हैं और अपने को सजाते हैं, इसे थोड़ा हम समझें। साधु हैं, सन्यासी हैं, धर्म के विचार करने वाले लोग हैं, वे भी आपसे कहेंगे कि बाहर की चीजों को मत लाइये, बाहर की चीजों से आत्मा का क्या संबंध? लेकिन वे यह कहेंगे कि धन बाहर है, उसको मत लाइए, मकान बाहर है उसकी चिंता मत करिये, परिवार बाहर है उसके विचार मत करिये, लेकिन वे आपसे कहेंगे कि गुरु की शरण में जाइए, जैसे कि गुरु भीतर हो। वे आपसे कहेंगे कि महावीर, बुद्ध, कृष्ण, क्राइस्ट को मानिए, जैसे कि महावीर, बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट भीतर हों। वे आपसे कहेंगे कि शास्त्रों को स्वीकार करिए, जैसे कि शास्त्र भीतर हों। धन बाहर है, शास्त्र भी बाहर हैं, परिवार की पत्नी और पति बाहर हैं, तो गुरु, तीर्थंकर और ईश्वर के अवतार भी बाहर हैं। वह अधूरी बात है।
जो धन को इसलिए बुरा कहती है कि वह बाहर है और गुरु को स्वीकार करती है, शास्त्र को स्वीकार करती है, परम्परा को स्वीकार करती है, दूसरों के दिये गये उपदेशों और सत्यों को स्वीकार करती है वह बात गलत है, बाहर की दृष्टि वह अधूरी है। अगर धन बाहर है, तो जिसको हम धर्म कहते हैं वह भी बाहर है। अगर जिस मकान में मैं रहता हूं वह बाहर है, तो जिस मकान में तथाकथित भगवान ठहरे हुए हैं और रहते हैं, वह मंदिर भी बाहर है। बाहर होने को समझना होगा। और जो भी बाहर है, अगर मैं उसे अपने ऊ पर थोपता हूं, तो मैं अपने विवेक को और अपनी आत्मा को दबाता हूं, मेरा विवेक और मेरी आत्मा जिस मात्रा में दमित हो जायेगी, उसी मात्रा में मैं कुरुप हो जाऊंगा, क्रिपिल्ड हो जाऊंगा, विकलांग हो जाऊंगा; मेरा जीवन कुम्हला जायेगा। क्योंकि मेरा जीवन वहां है, जहां मेरी निज आत्मा है। मेरे जीवन के सारे स्रोत वहां हैं, जहां मेरा निज विवेक है। लेकिन इधर पांच हजार वर्षों से मनुष्य के विवेक के विरोध में बहुत बड़ा षडयंत्र चला है, बहुत बड़ी कांस्पेरेंसी है। हजारों साल से कुछ निहित स्वार्थों ने मुनष्य के विवेक को मुक्त होने में बाधा डाली है। समाज मनुष्य के विवेक के विरोध में है। राज्य मनुष्य के विवेक के विरोध में हैं। मां-बाप बच्चे के विवेक के विरोध में हैं। स्कूल, शिक्षा, शिक्षक विद्यार्थी के विवेक के विरोध में हैं। दुनिया में जिनके हाथ में भी ताकत है, वे कभी विवेक के पक्ष में नहीं हो सकते, क्योंकि विवेक में विद्रोह के अणु होते हैं। विवेक में रिबेलियन हो सकता है। अगर बच्चे विवेकपूर्ण हैं तो बाप को भय हो सकता है क्योंकि विवेकपूर्ण बच्चे किसी बात को इसलिए स्वीकार नहीं करेंगे कि वह उनके पिता ने कही है। विवेकपूर्ण बच्चे किसी बात को इसलिए स्वीकार नहीं करेंगे कि वह गीता में लिखी है या बाइबिल में लिखी है या कुरान में लिखी है। जो विवेकशील है वह किसी बात को इसलिए स्वीकार नहीं करेगा कि वह महावीर ने कही है, गांधी ने कही है या विनोबा ने कही या और किसी माहत्मा ने कही है। विवेक सिवाय अपने और किसी को कभी स्वीकार नहीं करता है। विवेक सिवाय विवेक युक्तता के और किसी शास्त्र को नहीं मानता है। विवेक सिवाय विवेकशीलता के और किसी चरण में सिर नहीं रखता है। इसलिए विवेक तो खतरनाक है, समाज के लिए, अधिकारियों के लिए, राज्य के लिए, राजनीतिज्ञों के लिए,

साधु-संन्यासियों के लिए, मठाधीशों के लिए, पुरोहितों के लिए सबके लिए खतरनाक है। इसलिए एक षडयंत्र है हजारों साल से मनुष्य के विवेक को विक सित मत होने देना। और इसको किस-किस तरकीब से विकसित किया गया है, वह समझने जैसा है। दुनिया के सारे धर्म, दुनिया के सारे शास्त्र, दुनिया की सारी ट्रेडिशंस, सारी परंपराएं आपस में बहुत से मामलों में विरोधी हैं। ईसाई कहते हैं, पुनर्जन्म नहीं है, मुसलमान कहते हैं पुनर्जन्म नहीं है, हिंदू- जैन कहते हैं पुनर्जन्म है। हिंदू कहते हैं ईश्वर है, जैन कहते हैं कोई स्रष्टा ईश्वर नहीं है। हिंदू और जैन कहते हैं आत्मा शाश्वत है, आत्मा ईकाई है, आत्मा मौलिक तत्व है, बौद्ध कहते हैं आत्मा न तो शाश्वत है, न ईकाई है, न मौलिक तत्व है। जैन कहते हैं, मोक्ष है, वहां आत्मा परम आनंद में विराजमान होगी, बौद्ध कहते हैं कोई मोक्ष नहीं है। क्योंकि जैसे ही व्यक्ति की वासनाएं विलीन होती हैं, उसकी आत्मा भी उसी भांति विलीन हो जाती है, जैसे दीये की लौ बुझ कर विलीन हो जाती है।
दुनिया के ये सारे धर्म हजार बातों में एक-दूसरे के विरोधी हैं, लेकिन
एक बुनियादी बात में किसी का विरोध नहीं है। वे सब विवेक के विरोधी हैं और श्रद्धा के पक्षपाती हैं। वे सब इस बात का कहेंगे कि विवेक, विवेक खतरनाक है, श्रद्धा, स्वीकृति, विश्वास और वे सब इस बात का प्रचार करते रहे हैं कि जो विश्वास करता है, वह बचा लिया जायेगा। जो विश्वासी होगा वह बच जायेगा और जो विवेकशील है वह भटक जायेगा। इससे खतरनाक कोई टीचिंग मनुष्य को कभी नहीं दी गई। अगर विवेक भटकायेगा, तो फिर बचायेगा कौन? और अगर विश्वास बचायेगा तो इसका मतलब हुआ कि अंधी आंखें चलायेंगी, और आंखें चला नहीं सकती। विश्वास का क्या अर्थ? बिलीफ का क्या अर्थ? विश्वास का अर्थ है, जो तुम्हें तुम्हारी बुद्धि को, तुम्हारी आंखों को बिल्कुल ठीक भी न मालूम पड़ता हो, उसे भी तुम इसलिए स्वीकार कर लेना कि कोई कहता है कि वह ठीक है। जो तुम्हारे ज्ञान में न आता हो, उसे भी तुम मान लेना कि वह है। ईश्वर पर विश्वास कर लेना कि वह है, आत्मा पर विश्वास कर लेना कि वह है। कर्म पर विश्वास कर लेना कि वह है।
विश्वास करने की वृत्ति पांच-छह हजार वर्षों से निरंतर पोषित की गई है। उस विश्वास की वृत्ति ने मनुष्य के विवेक को नष्ट कर दिया। उस विश्वास की वृत्ति ने मनुष्य के विवेक को परतंत्र कर दिया। वह विश्वास की वृत्ति पहले मनुष्य की वासनाओं में होती है, क्रोध में होती है, लोभ में होती है, वह भी विश्वास है। जब आपके भीतर क्रोध उठता है, तो आप विवेक करते हैं। आप सोचते हैं कि यह क्रोध उचित है या अनुचित? यह अर्थपूर्ण है या अनर्थपूर्ण? यह क्रोध क्यों है मेरे भीतर और क्यों मैं इसे अंगीकार करूं? आप विवेक करते हैं? कोई विवेक नहीं करता। जब क्रोध उठता है, तो आप क्रोध करते हैं, क्रोध पर विश्वास करते हैं। जब सैक्स उठता है तो सेक्स पर आप विचार करते हैं, कि कौन सा अर्थ है इसमें, कौन सा रस है इसमें? नहीं। उस पर भी आप विश्वास करते हैं। एक तरफ वे मनुष्य हैं जो वासनाओं पर विश्वास करते हैं, दूसरी तरफ वे मनुष्य हैं जो महात्माओं पर, शास्त्रों पर और ग्रंथों पर विश्वास करते हैं। लेकिन दोनों तरफ विश्वास काम कर रहा है। और जहां विश्वास है, वहां अंधापन है। एक कुएं से छूटते हैं, खाई में गिर जाते हैं। न तो वासनाओं पर विश्वास करने की जरूरत है और न महात्माओं पर विश्वास करने की जरूरत है। जरूरत है विवेक करने की और समग्र जीवन में विवेक करने की। वासना में भी, शास्त्र में भी, महात्मा में भी, परंपरा के संबंध में भी विवेक की जरूरत है। विवेक का रास्ता विश्वास के रास्ते से बिल्कुल अलग है, निश्चित ही आंख वाले के चलने का ढंग और अंधे के चलने के ढंग में फर्क होता है। अंधा टटोलता है, अंधा पूछता है, अंधा स्वीकार करता है और चलता है। आंख वाला देखता है, खोजता है, न टटोलता है, देखने से उसके चलने की गति आती है, देखने से उसकी दिशा आती है। विश्वास ने सारी मनुष्यजाति को अंधा कर दिया है। और जब भी कभी इसमें कोई आंख वाला पैदा हो जाता है, तो बाकी अंधे मिलकर उसके दुश्मन हो जाते हैं। स्वाभाविक है, अंधों को बहुत दुख होता है आंख वालों से। इसलिए तो सुकरात को जहर पिला देते हैं, इसीलिए तो क्राइस्ट को सूली पर लटका देते हैं, इसीलिए तो महावीर को पत्थर मारते हैं और परेशान

करते हैं। और क्या कारण है, जब भी आंख वाला आपके बीच खड़ा होगा, अंधे परेशान हो जाएंगे, क्यों? क्योंकि आंख वाला आदमी अंधों का अपमान बन जाता है। आंख वाला आदमी अंधों का अपमान बन जाता है। कभी आंख वाले आदमी को इस समाज ने बरदाश्त नहीं किया। लेकिन बहुत दिन बाद जब वह आदमी मर जाता है तो यह समाज उसे स्वीकार कर लेती है। क्यों? क्योंकि स्वीकृति में अंधेपन को कोई बाधा नहीं है। महावीर जिंदा आपके बीच खड़े हो जाएं तो खुद जैन उनको इनकार कर देंगे। कृष्ण लौट कर आ जाएं खुद हिंदू उनको इनकार कर देगा। एक छोटी सी घटना कहूं उससे मेरी बात ख्याल में आये। महावीर को विश्वास कर लेना एक बात है, महावीर को सहना और झेलना बिल्कुल दूसरी बात है। आंख वाले आदमी को अंधों का समाज कभी नहीं झेल सका।
क्राइस्ट के बाबत एक मीठी कथा दोस्तोवस्की ने लिखी। उसने अपने एक उपन्यास में एक बड़ी काल्पनिक बात लिखी। बड़ी अर्थपूर्ण। उसने लिखा कि अट्ठारह सौ साल के बाद क्राइस्ट को यह खयाल आया कि अब तो लाखों लोग मुझे मानने वाले हैं। वह बात और थी जब मैं अट्ठारह सौ वर्ष पहले जेरुसलम में प्रकट हुआ। वह बात और थी, उस वक्त नासमझ थे लोग। पुरोहित दुश्मन थे, पंडित विरोधी थे, समाज का निर्माण मेरे ढांचे के अनुकूल न था। इसलिए लोगों ने मुझे सताया, मुझे परेशान किया, मुझे कांटों का ताज पहनाया और मुझे सूली पर लटका दिया। वह ठीक भी था। क्योंकि उस वक्त लोगों में कुछ समझ न थी। लेकिन अब तो जमीन पर लाखों ईसाई हैं, अब तो लाखों वे लोग हैं जो मेरे क्रॉस को लटकाए हुए हैं। लाखों वे लोग हैं जो सुबह और शाम मेरा नाम लेते हैं। लाखों मेरे मंदिर, मेरे चर्च हैं, लाखों मेरे सन्यासी हैं, मेरे पुरोहित हैं; मेरी साध्वियां हैं, साधु हैं, अब तो दुनिया बिल्कुल दूसरी होगी। क्राइस्ट अट्ठारह सौ वर्ष के बाद वापस जेरुसलम में सुबह-सुबह उतरे। यह देखने के लिए कि अब स्थिति क्या है?
जेरुसलम में एक झाड़ के नीचे वे आकर खड़े हुए, रविवार का दिन है लोग चर्च
से वापस लौट रहे हैं। उन्होंने चिल्ला कर कहा कि मित्रों! पहचाने? मुझे पहचाना? चर्च के सामने ही बड़ा दरख्त है, उसके नीचे ही क्राइस्ट खड़े हैं। लोग हंसने लगे और कहा कि यह कौन आदमी है जो क्राइस्ट का रूप रंग लिए खड़ा है? यह कौन बहरूपिया है? यह कौन अभिनेता मालूम होता है। वे सारे लोग उनके पास आ गये और हंसने लगे कि मित्र जल्दी इस वेश को बदलो पुरोहित बाहर निकलने वाला है, मुसीबत में पड़ जाओगे। क्योंकि पुरोहित कहता है कि क्राइस्ट एक बार हुए, वे बार-बार थोड़ी होते हैं। और तुम तो निश्चित मुसीबत में पड़ जाओगे, तुम तो बिल्कुल क्राइस्ट जैसे ही मालूम हो रहे हो। लेकिन क्राइस्ट ने कहा, मेरा ही पुरोहित है, मेरा ही पुरोहित है; क्या मुझे नहीं पहचानेगा? लेकिन लोग हंसने लगे, उन्होंने कहा, पागलपन छोड़ो, यह पागलपन छोड़ो! ईश्वर का पुत्र अपने को कह रहे हो, थोड़ा सोचो तो, विचारो तो। इस अट्ठारहवीं सदी में कोई तुम्हें ईश्वर का पुत्र मानेगा? इतने में ही बड़ा पादरी वह आर्चबिशप वहां से निकला, भीड़ लगी देखी वह अंदर आया, उसने कहा यह कौन बदमाश है, इसे नीचे उतारो। क्राइस्ट चिल्लाए क्या तुम मुझे नहीं पहचान रहे हो? उसे कहा मैं भली-भांति पहचानता हूं। नीचे उतरो, यह ढोंग करने की क्या जरूरत है? चार आदमियों ने क्राइस्ट को नीचे पकड़कर उतार लिया, वे हैरान हुए अट्ठारह सौ साल पहले भी पुरोहित ने उनके साथ ऐसा ही व्यवहार किया था, लेकिन वह पुरोहित दूसरों का था, यह पुरोहित तो अपना ही था। उसके गले में चमकता हुआ सोने का पॉलिश किया हुआ क्रॉस लटका हुआ था। वह तो ईसा के नाम पर ही जीता था। लेकिन ईसा को खदेड़ कर रस्से बांध कर चर्च में ले जाया गया, वे तो हैरान हो गये। उन्होंने सोचा कि अट्ठारह सौ साल में क्या कोई फर्क नहीं आया है? क्या मेरे साथ फिर ये दुबारा वही करेंगे, फिर सूली लगायेंगे? जाकर उस पादरी ने उन्हें एक बड़े कमरे में बंद कर दिया और ताला लगवा दिया और कहा कि अपने दिमाग को ठीक कर लो सुबह तक तो छोड़ दिये जाओगे और अगर यह पागलपन तुम्हारे दिमाग में है कि तुम ईश्वर के पुत्र हो तो तुम्हारी सिवाय सजा के और कोई रास्ता नहीं है। सिवाय क्राइस्ट के कोई दूसरा ईश्वर का पुत्र नहीं है। और वह क्राइस्ट अट्ठारह सौ साल पहले हो चुका, अब तो वह परमात्मा के पास सिंहासन के निकट बैठा हुआ है। लेकिन रात को

दो बजे, वह महापुरोहित ताला खोला और कमरे में आया और क्राइस्ट के पैरों में गिर पड़ा। और बोला कि मैं तुम्हें पहचान गया था, लेकिन बाजार में तुमको नहीं पहचान सकता, भीड़ में तुमको नहीं पहचान सकता हूं। क्योंकि तुम बहुत पुराने डिस्टर्बर हो, तुम जब भी आते हो, तुम तभी गड़बड़ खड़ी कर देते हो। हम मुश्किल से किसी तरह धर्म को व्यवस्थित करते हैं, और जब भी कोई क्राइस्ट जैसा आदमी पैदा हो जाता है, सब गड़बड़ा जाता है, सब मामला खराब कर देता है। सारी व्यवस्था तोड़ देता है। तुम बहुत पुराने विघ्नकारक हो, तुम्हारे आने की कोई जरूरत नहीं है, हम पादरी, हम तुम्हारे पुरोहित, तुम्हारा नाम लेकर सब काम ठीक से चला रहे हैं, आप कृपा करें और वहीं ऊ पर मोक्ष में विराजमान रहें, आपको यहां नीचे लौट-लौट कर आने की जरूरत नहीं। मैं आपको पहचान गया कि आप वही हैं, लेकिन समाज में मैं आपको नहीं पहचान सकता हूं क्योंकि समाज में आपको पहचानने का मतलब है चर्च का मिट जाना। समाज में आपको पहचानने का मतलब है क्राइस्ट की स्वीकृति का और क्रिश्चियनिटी का मिट जाना। क्योंकि क्रिश्चिएनिटी क्या है? क्राइस्ट के खिलाफ, क्राइस्ट के नाम पर खड़ी हुई परम्परा। क्रिश्चियन लड़ सकता है, कैथोलिक एक प्रोटेस्टेन से लड़ सकता है। एक क्रिश्चियन एक प्रोटेस्टेन को मार सकता है, प्रोटेस्टेन कैथोलिक को जला सकता है। एक दूसरे का चर्च मिटा सकता है। और क्राइस्ट ने कहा था जो तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे तुम दूसरा गाल उसके सामने कर देना। और क्राइस्ट ने कहा थो जो तुमसे कहे कि मेरे साथ एक मील तक बोझढोकर चलो, तुम दो मील तक उसके साथ चले जाना।
और क्राइस्ट को जब सूली दी गई थी तो उन्होंने कहा था कि हे परमात्मा! इन्हें क्षमा कर देना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं? क्या ये ही क्राइस्ट और इस क्रिश्चियनिटी में कोई मेल है? कोई संबंध है? इस सूली पर चढ़े हुए आदमी में और उसके नाम पर खड़े हुए धर्म में कोई नाता है? महावीर नग्न थे, अपरिग्रही थे। क्या महावीर में और जैनों की समृद्धि में और परिग्रह में कोई संबंध है? किस भांति का संबंध है? किस भांति का नाता है? मैं तो देखता हूं तो हैरान हूं, जो जिसको मानने वाला है अगर विचार करेगा तो करीब-करीब उसका दुश्मन है। और ठीक उन्हीं उसूलों के खिलाफ खड़ा है, जिन उसूलों को मानने की वह दुहाई दे रहा है। यह हुआ है। जब भी आंख वाला पैदा होगा, तो हम एक ही व्यवहार उसके साथ कर सकते हैं, या तो वह राजी हो जाये आंखें फोड़ने को, और अंधा हो जाये, और या फिर एक रास्ता यह है कि हम उसको मिटा दें। हां जब वह मर जाये तो हम उसकी पूजा करें, उसका मंदिर बनायें क्योंकि उसमें कोई खतरा नहीं है। महावीर की पूजा में कोई खतरा नहीं है, लेकिन महावीर को जानने में बहुत खतरा है। क्योंकि महावीर को जानने में आपको अपने सारे प्राण परिवर्तित करने पड़ेंगे। महावीर की पूजा करना एकदम आसान है, पूजा करने में कुछ भी नहीं करना पड़ता। पूजा करने में कुछ भी नहीं करना पड़ता। वह बिल्कुल सरल है। इसलिए धर्म पूजा करते हैं, अंधे पूजा करते हैं, आंख वाले ही केवल चल सकते हैं।
श्रद्धा सिखाई गई, विश्वास सिखाया गया, इसका परिणाम यह हुआ है कि मनुष्य-जाति का विवेक कुंठित हो गया। और जब विवेक कुंठित हो जाएगा, और जब विश्वास गहरा हो जाएगा तो स्वाभाविक है फिर अंधा आदमी यह नहीं देखता, अंधा आदमी यह नहीं देखता कि विश्वास कहां गहरा है? अंधे आदमी को कोई भी विश्वास पकड़ाया जा सकता है। जो क्राइस्ट को मानता था, महावीर को, बुद्ध को मानता था अगर प्रचार ठीक से चले वही मार्क्स को मानने लगेगा, वही गांधी को मानने लगेगा। बीस करोड़ का मुल्क है सोवियत रूस, उन्नीस सौ सत्रह की क्रांति के पहले सारे लोग धार्मिक थे, सारे लोग चर्च में जाते थे, प्रार्थना करते थे, दीप जलाते थे। उन्नीस सौ सत्रह में वहां क्रांति हुई, नया धर्म वहां हुकू मत में आ गया, कम्युनिज्म वहां हुकूमत में आ गया, उसके अलग पुरोहित हैं, उसके अलग चर्च हैं, उसके अलग भगवान हैं। उसकी अलग शास्त्र है, गीता नहीं, कुरान नहीं, बाईबिल नहीं, कैपिटल उसका शास्त्र है। वह नया धर्म वहां हुकूमत में आया, उसने खूब प्रचार किया पंद्रह-बीस साल; आज रूस में धर्म को पूछने वाला, गिना-चुना मिलना मुश्किल है। आज वहां चर्च में दीपक जलाने

वाला खोजना मुश्किल है। आज वहां क्राइस्ट पर हंसने वाले मिल सकते हैं, मानने वाले नहीं मिल सकते।
विश्वास की पुरानी आदत थी तो हम क्राइस्ट को मनवाते थे, विश्वास जड़ था दिमाग में और हमेशा कहा गया था कि विश्वास करो, विश्वास करो, जब दूसरी हुकूमत आई, दूसरी ताकत के लोग आये और उन्होंने कहा कि विश्वास करो मार्क्स पर, विश्वास करो कैपिटल पर क्योंकि विश्वास मुक्तिदायी है। वह पुराना विश्वास क्राइस्ट को पकड़ता था, उसने कैपिटल को पकड़ लिया। वह महावीर को पकड़ता था, उसने मार्क्स को पकड़ लिया। वह पहले कुछ पकड़ता था, उसने नई बात कोई पकड़ ली। मनुष्य जब तक विश्वासी है, तब तक उसे कुछ भी पकड़ाया जा सकता है क्योंकि मनुष्य अंधा है। जो हवा आयेगी वह उसी को पकड़ लेगा। जो हवा आयेगी उसी को पकड़ लेगा। विश्वास खतरनाक है। विश्वास बहुत आत्मघाति है। विश्वास बहुत सुसाइडल है। क्या रास्ता है? अब रास्ता है कि विश्वास छोड़ें। विवेक को जगायें। शायद मेरी बात से ऐसा लगे कि मैं यह कह रहा हूं, अविश्वासी हो जायें। नहीं, क्योंकि अविश्वास भी विश्वास का एक रूपांतरण है, वह भी विश्वास का एक रूप है। एक आदमी कहता है कि मैं ईश्वर में विश्वास करता हूं, यह भी विश्वास है, एक आदमी कहता है, मैं ईश्वर में विश्वास नहीं करता, यह भी विश्वास है। ये दोनों में से कोई भी ईश्वर को जानता नहीं है। एक विश्वास करता है, एक अविश्वास करता है; एक का आस्तिक विश्वास है, एक का नास्तिक विश्वास है, लेकिन दोनों विश्वासी हैं। मैं अविश्वासी होने को नहीं कह रहा हूं, मैं यह नहीं कह रहा हूं कि आप आस्तिक हैं तो नास्तिक हो जायें, आस्तिक भी एक धर्म है, नास्तिक भी एक धर्म है, क्योंकि दोनों विश्वास पर खड़े हैं और दोनों अंधे हैं। मैं आपसे यह कह रहा हूं कि आप विश्वास मात्र छोड़ें, और अपने विवेक को जगाने में लगें। और यह पहली बुनियाद है, जिसको विवेक जगाना हो उसको विश्वास छोड़ना ही पड़ेगा क्योंकि विश्वास के रहते विवेक कभी नहीं जगाया जा सकता। कोई कारण नहीं रह जाता विश्वास के रहते विवेक को जगाने का। जब हमारे सब सहारे गिर जाते हैं तो हमें अपने पैरों को खोजना पड़ता है, और उन पर खड़े होना पड़ता है। जब तक हमारे हाथ में सहारे होते हैं, तब तक अपने पैरों पर खड़े होने का कोई कारण नहीं है। कोई महावीर का कंधे का सहारा लिये खड़े हैं, कोई बुद्ध के, कोई क्राइस्ट के कंधों का सहारा लिये खड़ा है। जब तक आप किसी का सहारा लिये हैं, तब तक स्मरण रखें आपके भीतर सोये हुए विवेक को जगने का कोई कारण नहीं है। वह तभी जग सकता है, जब आप समझें कि मैं बेसहारा हूं, कोई सहारा नहीं है। किसी मनुष्य को कोई सहारा नहीं है, प्रत्येक मनुष्य अकेला है, अकेली उसकी अपनी ताकत और शक्ति है। उसके पास अपनी चेतना है, वही उसका सहारा है।
एक पुरानी घटना है। एक घर में एक बूढ़े आदमी की आंखें चली गईं। अस्सी साल का बूढ़ा था। उसके दस लड़के थे, दस बहुएं थीं, पत्नी थी। उन सबने उससे कहा, आंखों का इलाज करवा लो। उस बूढ़े ने कहा क्या करूंगा? अस्सी साल का हुआ, दो-चार वर्ष जीना है। फिर दस लड़के हैं मेरे, दस लड़कों की बीस आंखें हैं, दस बहुएं हैं उनकी बीस आंखें हैं एक मेरी पत्नी है उसकी दो आखें, ऐसा मेरे पास बयालीस आंखें हैं। क्या बयालीस आंखें इस बूढ़े आदमी के लिए पर्याप्त नहीं हैं। दलील उसकी दुरुस्त थी। तर्क उसका बिल्कुल ठीक था, गणित में कोई भूल-चूक न थी। ठीक था उसका नतीजा, जिस घर में बयालीस आंखें हों, जिसके आस-पास, उस अस्सी साल के बूढ़े को अपनी आंख की क्या जरूरत है? वह नहीं माना। मानने का कोई कारण भी नहीं था। समझाया-बुझाया नहीं माना। बूढ़े किसकी मानते हैं? बच्चे तो किसी की मान भी लें, बूढ़े किसी की मानते हैं? मानने के लिए सरल चित्त चाहिए, बूढ़े का चित्त बहुत जटिल हो जाता है, वह कभी किसी की नहीं मानता। इसीलिए तो बूढ़े के जीवन में कोई क्रांति नहीं होती। बच्चे के जीवन में कोई क्रांति हो सकती है। बूढ़ा तो धीरे-धीरे जड़ हो जाता है, वह बूढ़ा भी जड़ हो गया था, उसने कहा कि नहीं, क्या गलत कहता हूं मैं, बयालीस आंखें हैं, मुझे क्या जरूरत। लेकिन उसके पंद्रह दिन बाद ही मकान में आग लग गई, रात का वक्त था, वे बयालीस आंखें एकदम बाहर हो गईं, और उन्हें खयाल भी न आया कि एक दो बिना आंखों वाला आदमी भी घर में है। जैसे ही आग लगी सब अपने शरीर को लेकर बाहर भाग गये, जिस शरीर की आंख थी उसको साथ दिया। जब

वे बाहर पहुंच गये और लपटों में सारा मकान जलने लगा तब उन्हें ख्याल आया कि कोई बाबा को भी लाया कि नहीं? सबसे पूछा, पता चला, उनको तो कोई नहीं लाया। वह बूढ़ा उसी जलते हुए मकान में जल गया। शायद जलते वक्त उसको पता चला हो कि अपनी एक ही आंख हो तो काम की है, दूसरे की बयालीस आंखें भी किसी काम की नहीं हैं। लेकिन तब क्या फायदा था, तब तो आग लग गई थी और वह जल रहा था। हमको भी मृत्यु के क्षण में पता चलेगा कि न महावीर की आंख काम दे सकती है, न बुद्ध की, न कृष्ण की, न राम की; कितनी ही बड़ी आंखें हों, कितने ही बड़े महापुरुष हों, तीर्थंकर हों, ईश्वर हों, नामालूम क्या हों? जो भी हों, कितनी ही उनकी बड़ी आंख हो, कितनी ही तेजस्वी आंख हो, आपके किसी काम की नहीं है। आपकी धुंधली आंख ही जलते हुए मकान से आपको बाहर ले जाने में साथी होगी। दूसरे की चमकदार सूरज जैसी आंख भी किसी काम नहीं पड़ सकती। लेकिन यह अगर उस वक्त पता चले जब मकान में आग लग गई हो, तो फिर कुछ भी नहीं किया जा सकता, और यह उसी वक्त पता चलता है, उसी वक्त पता चलता रहा है। जो आदमी पहले जाग जाता है, वह अपनी आंख को पैदा करने के उपाय करने लगता है।
पहली जरूरत है, विश्वास को जाने दें, और विवेक की खोज में संलग्न हों।
आप कहेंगे विवेक हम कहां से लाएं? मैं आपको स्मरण दिलाऊं, जैसे हम कहीं भी जमीन में गड्ढा खोदें, यह दूसरी बात है कि किसी जमीन में गड्ढा जल्दी खुद जाये और पानी निकल आये। और किसी जमीन में गड्ढा थोड़ी देर से खुदे और पानी जरा मुश्किल से निकले और तीसरी जमीन में बहुत पत्थर हों और बहुत मुसीबत पड़े और बहुत गहराई में पानी निकले। लेकिन जहां जमीन है, वहां गड्ढा खोदने पर पानी मिलना अनिवार्य है। इसलिए जहां मनुष्य है, वहां खोदने पर विवेक मिलना अनिवार्य है। यह दूसरी बात है कि किसी मनुष्य में खोदने पर जल्दी मिल जाये, और किसी मनुष्य में खोदने पर देर से मिले, और देर और जल्दी भी इसीलिए पड़ेगी कि हमने बहुत से संस्कार इकट्ठे करके कहीं पत्थर इकट्ठे कर दिए हैं, और उनके कारण पानी के स्रोत दूर हो गये हैं। लेकिन अगर हम अपने मन की खुदाई करें, तो ऐसा एक भी मनुष्य नहीं है, जिसके भीतर विवेक का स्रोत न हो। लेकिन हम खोदते नहीं, हम तो बाजार से पानी खरीद लाते हैं और काम चला लेते हैं। कुआं कौन खोदता है। हम तो बाहर से पानी ले आते हैं और काम चला लेते हैं। घर में एक हौज बना लेते हैं, नौकरों से उसमें पानी भरवा लेते हैं और काम चला लेते हैं। लेकिन कभी आपने हौज के विज्ञान और कुएं के विज्ञान को समझा? जब हौज बनानी पड़ती है तो क्या लाना पड़ता है? पत्थर लाना पड़ता है, सीमेंट लानी पड़ती है, मिट्टी लानी पड़ती है, फिर उनको जोड़कर दीवार बनाते हैं। फिर उस दीवार में बाहर से पानी लाकर भरना पड़ता है। कुआं बनाते हैं तो क्या करना पड़ता है, कुआं बनाने में बिल्कुल उलटा काम करना पड़ता है। हौज बनाने में मिट्टी, गारा, ईंट, चूना, पत्थर लाना पड़ता है, कुआं बनाने में मिट्टी, गारा, ईंट, चूना पत्थर जो भी हो उसको खोदकर बाहर करना पड़ता है। हौज बनती है तो पानी बाहर से लाना पड़ता है और कुआं बनता है तो पानी अपने आप आता है। हौज का पानी थोड़े दिन में सड़ जाता है, कुएं का पानी जीवित होता है, वह लीविंग होता है। वह सड़ता नहीं है। उसके जीवित स्रोत होते हैं। लेकिन हम में से अधिक हौज की तरह हैं, और बहुत कम लोग कुएं की भांति। हम सारा ज्ञान बाहर से लाते हैं, और उसको खोपड़ी की दीवारों में भरते हैं। चूना, ईंट, मिट्टी, श्रद्धा के इकट्ठे करके दीवारें बनाते हैं और उन दीवारों में वह ज्ञान भर देते हैं। यही तो पंडित का लक्षण है। दिमाग में सब पानी बनाकर हौज भर लेता है। और इसलिए तो पंडित का दिमाग बहुत जल्दी सड़ जाता है। डिटोरिरेट हो जाता है। इसीलिए कि कोई भी बाहर से लाई हुई चीज सड़ जाएगी उसके कोई भीतर तो स्रोत नहीं होते। और यही तो कारण हैं कि पंडितों के दिमाग से दुनिया चलती है, इसलिए दुनिया में झगड़े और उपद्रव होते हैं। क्योंकि विकृत, अस्वस्थ, बीमार मस्तिष्क से जो भी निकलेगा, वह उपद्रव लायेगा। मस्जिद का पंडित, मंदिर के पंडित से लड़वाता है। गीता का पंडित, कुरान के पंडित से लड़ जाता है। महावीर का पंडित, बुद्ध के पंडित से लड़ जाता है।
पंडित लड़ते हैं, पंडित हिंसा पैदा करवाते हैं क्योंकि मस्तिष्क में बाहर से आया हुआ पानी बहुत जल्दी सड़ जाता है, वह जीवित नहीं है। लेकिन

ज्ञानी, जिसने जाना है वह लड़ाता नहीं, जोड़ता है। उसके भीतर जीवित ज्ञान का स्रोत है, उसने कुआं खोदा है, हौज न बनाएं, कुआं खोदें। हौज बनानी हो श्रद्धा की दीवाल बनायें, कुआं बनाना हो, सब श्रद्धा के नाम पर इकट्ठे पत्थर अलग करें, हटायें अपने मन से उस सबको जो आपने इकट्ठा कर रखा है। जो भी आपको लगता है कि मेरा जाना हुआ नहीं है, धर्म के लिए कह रहा हूं, इंजीनियरिंग के लिए नहीं कह रहा हूं, कि आप इंजीनियरिंग की किताब में पढ़े हों तो उनको हटा दें, और भूल जायें कि नक्शा कैसे बनाया जाता है। यह नहीं कह रहा हूं कि आपने डाक्टरी की किताबें पढ़ी हों, तो भूल जायें और समझ में न आए कि कौन सी दवा किस मरीज को दी जाती है। यह नहीं कह रहा हूं कि आप यहां तक आयें हैं तो घर जाने का रास्ता भूल जाएं, यह नहीं कह रहा हूं। यह कह रहा हूं कि आत्मा के संबंध में जो भी जाना हो, सीखा हो, उसे हटा दें। जो चीजें बाहर हैं, उनके बाबत बाहर का ज्ञान काम दे सकता है। इंजीनियरिंग, डाक्टरी या कोई और जो चीज भी बाहर है, उसके संबंध में बाहर का ज्ञान काम दे सकता है, लेकिन आत्मा बाहर नहीं है। जो बाहर नहीं है, उसके संबंध में बाहर का कोई ज्ञान काम नहीं दे सकता। जो भीतर है, उसे भीतर ही जानना होगा। इसलिए आत्मा के संबंध में कोई लर्निंग, कोई नॉलेज, कोई ज्ञान सार्थक नहीं है। विज्ञान सीखा जा सकता है, धर्म सीखा नहीं जा सकता। विज्ञान रटा जा सकता है, धर्म रटा नहीं जा सकता। लेकिन हैरान होंगे लोग धर्म को रट रहे हैं, रोज सुबह उसको पाठ कहते हैं। कोई गीता का पाठ कर रहा है, कोई कुरान का, कोई बाइबिल का, कोई कुछ और का। रोज सुबह से रट रहे हैं, जिंदगी बीत गई उनके रटते हुए, रटते-रटते उनका दिमाग जड़ हो गया। रटते-रटते उनका दिमाग स्टूपिड हो जाएगा क्योंकि जो जितना रटेगा उतनी मस्तिष्क की ऊर्जा और तेजस्विता नष्ट हो जाएगी। और इस जड़ मस्तिष्क को हम धार्मिक कहते हैं। यह धार्मिक मन नहीं है। धार्मिक मन है तेजस्वी मन, रटने वाला नहीं देखने वाला। पाठ याद करने वाला नहीं भीतर के ज्ञान को खोदने वाला।
पहला सूत्र हैः श्रद्धा को, विश्वास को हटा दें। फिर क्या करें? फिर जीवन में जो भी प्रश्न खड़ा हो, जो भी समस्या खड़ी हो, वहां विवेक का उपयोग करें। हमेशा खोजें कि मैं जो रिस्पोंस कर रहा हूं, जो उत्तर दे रहा हूं, कोई भी समस्या खड़ी है, क्या मैं उत्तर ग्रंथों से दे रहा हूं? जैसे मैं आपसे पूछूं कि क्या आत्मा है? और अपने भीतर देखें क्या उत्तर आता है? अगर आपके भीतर उत्तर आता है, हां, आत्मा है या उत्तर आता है कि नहीं, आत्मा नहीं है, तो पूछें अपने से कि यह उत्तर मुझसे आ रहा है या शास्त्रों से आ रहा है। यह कहां से आ रहा है? यह मेरा सीखा हुआ उत्तर है या मैं जानता हूं? और अगर आपको लगे सीखा हुआ उत्तर है, हटा दें। उस कचरे को बाहर करें। फिर कोई उत्तर नहीं आयेगा, जब आपसे मैं पूछूंगा, आत्मा है? तो आपमें एक साइलेंस पैदा हो जायेगी, उत्तर नहीं आयेगा, क्योंकि उत्तर था शास्त्र का, उसको आपने हटाया। तब मैं पूछता हूं, आत्मा है? एक साइलेंस भीतर रह जाएगा। आप अपने से पूछें, आत्मा है? और अगर उत्तर आये, तो देखें यह उत्तर कहां से आ रहा है? अगर शास्त्र से आ रहा है, हटा दें। फौरन हटा दें। फिर पूछें आत्मा है? और जब कोई उत्तर न आये और भीतर एकदम साइलेंस रह जाये, तो समझें कि शास्त्र से छुटकारा हुआ। शास्त्र हट गया, और यह बड़े आश्चर्य की बात है उस साइलेंस से, उस शांति से उत्तर मिलना शुरु हो जाता है। क्योंकि वह शांति आत्मा का हिस्सा है, क्योंकि वह शांति आत्मा का स्वरूप है। शास्त्र का उत्तर अटकाये हुए था, वह भीतर नहीं जाने देता था, उसको हटा दें। रह जायें मौन, पूछें आत्मा है? और कोई उत्तर न आये और सन्नाटा रह जाये। और गहरे पूछें, आत्मा है? गहरा सन्नाटा रह जाये। सब शास्त्र को हटा दें, सब बुद्धि की सोची हुई बातों को हटा दें, फिर देखें क्या होता है? उस साइलेंस से, उस शांति से, उस मौन से आत्मा की अनुभूति आनी शुरु हो जाती है। शास्त्र को हटाएं, सत्य आपके भीतर है। प्रश्न पूछें और चुप रह जायें, बाहर के किसी उत्तर को आने न दें। उस स्थिति में जब बाहर का कोई भी उत्तर नहीं आने दिया जाता, प्रश्न मेरा होता है, और अकेला प्रश्न मेरे प्राणों में गूंजता रह जाता है, तो एक वक्त आता है जब शांति पूर्ण होती है भीतर, तो आपको अनुभूति के द्वार खुल जाते हैं। उत्तर है शास्त्र में नहीं, शून्य में। उत्तर है

शब्द में नहीं मौन में। उत्तर है शास्त्र में नहीं, स्वयं में। उत्तर है भीतर। प्रश्न जहां है, वहीं उत्तर है, लेकिन हम उधार उत्तर लेकर उस उत्तर को जो हमारे भीतर है, नहीं आने देते। इस स्थिति को मैं ध्यान कहता हूं। पूछें--मैं कौन हूं? और चुप रह जाएं और महावीर को, बुद्ध को, कृष्ण को, क्राइस्ट को किसी को भीतर न आने दें, कहें कि बाहर, बहुत आदर है आपके प्रति लेकिन कृपया बाहर। क्योंकि उन्होंने भी अपने भीतर कभी किसी को नहीं आने दिया। महावीर ने अपने भीतर किसी को नहीं आने दिया। क्राइस्ट ने अपने भीतर किसी को नहीं आने दिया। कहा कि बाहर। बहुत सम्मानपूर्वक कह दें कि कृपा कर तीर्थंकरों, अवतारों बाहर रुको, मुझे खोजने दो मेरा उत्तर, तुम बाहर रुको। क्योंकि उन्होंने भी यही किया। जिस आदमी को भी सत्य को पाना है, उसे सत्य के संबंध में सीखे सब उत्तरों को विदा कर देनी आवश्यक है। और फिर देखें क्या होता है? फिर देखें, उस साइलेंस से क्या पैदा होता है, देखें? उस सन्नाटे से किसका जन्म होता है, देखें? कौन आता है उस गहन प्रगाढ़ता में से, उस निब्रता में से कौन पैदा होता है, देखें? उस बीज से कौन सा अंकुर निकलता है, देखें? वह अंकुर आपको मुक्त कर देगा। वह अंकुर आपके जीवन को शांति से, आनंद से भर देगा। वह अंकु र आपको वहां पहुंचा देगा, जहां महावीर और क्राइस्ट पहुंचते हैं, जहां बुद्ध पहुंचते हैं, जहां कोई भी मनुष्य कभी पहुंचा है। लेकिन वह उत्तर आता है मौन से। वह आता है, निरंतर, घने से घने मौन से। मन को मौन करें और जब तक शास्त्र भरे हुए हैं, मन मौन नहीं हो सकता। जब तक शब्द भरे हुए हैं मन मौन नहीं हो सकता।
ये स्वयं को बाहर के प्रभाव से निष्प्रभाव करना ध्यान है। समाधि है।
इस समाधि से जो साक्षात है; वह अननॉन जो अज्ञात सत्य है, अनंत और अनादि, वह जो सनातन जीवन की धारा है, वह जो गहरे से गहरे में प्राणों में जो स्वर है; वह जो संगीत है, जो पौधे में फूल बन रहा है, पक्षी में गीत बन रहा है, आपके प्राणों में धक-धक है, चारों तरफ जो प्राणवंत आंदोलित हो रहा है, वह जो प्राण की सब तरफ लहरें और तरंगें उठ रही हैं, उसके मूल स्रोत से आपको जोड़ देता है। उस स्रोत का द्वार आपके भीतर है। लेकिन द्वार पर शास्त्रों की दीवार रखी है, दरवाजे पर बड़ी-बड़ी मोटी किताबें रखी हैं। दरवाजे पर बड़े-बड़े महापुरुष आपने बुलाकर खड़े कर लिये हैं। उनको भी कष्ट दे रहे हैं, खुद भी कष्ट पा रहे हैं। उनको कहें कि जायें, शास्त्रों को कहें कि विदा हो जायें, मुझे मेरे भीतर जाने का द्वार दें। जाएं और वहां देखें। केवल वही व्यक्ति जो सब भांति की श्रद्धाओं से अपने को मुक्त कर लेता है, आत्मश्रद्धा से भरता है। केवल वही व्यक्ति जो बाहर की सब श्रद्धाओं से मुक्त हो जाता है, उसके भीतर आत्म श्रद्धा उत्पन्न होती है। केवल वही व्यक्ति जो बाहर की सब भांति की शरणों से अपने को अशरण कर लेता है, उसे आत्मशरण मिलती है।
ये थोड़ी सी बातें मैंने आपसे कहीं, इस स्थिति के बाद जिस व्यक्ति को भीतर सत्य की, शांति की अनुभूति हो जाती है, उसके आचरण में आलोक प्रेम का, सेवा का फैलना शुरु हो जाता है। मुझे अभी किसी मित्र ने पहले-पहल आकर कहा कि मैं प्रेम पर बोलूं, मैं प्रेम पर नहीं बोला; कोई मुझसे कहे फूल पर बोलो, मैं फूल पर नहीं बोलूंगा, मैं तो बीज पर बोलूंगा। फूल पर बोलने से क्या फायदा? मैं तो बीज पर बोलूंगा, बीज के बोने की बात करूंगा, बीज को बढ़ाने की बात करूंगा, बीज को कैसे पानी दें, कैसे संभालें, कैसे बागडोर लगाएं उसकी बात करूंगा। फूल तो अपने आप आ जाएगा, फूल तो अपने आप आता है। लेकिन जो आदमी फूलों की चिंता में पड़ जाता है और फूलों का विचार करने लगता है और बीज को भूल जाता है, उसका फूल तो कभी नहीं आता, कभी फूल आ नहीं सकता है। एक छोटी सी कहानी और अपनी चर्चा को मैं पूरा करूंगा।
माओत्से तुंग का नाम आपने सुना होगा? माओत्से तुंग ने बचपन की एक घटना लिखी है। उसने लिखा है कि मेरी मां को बगिया लगाने का बहुत-बहुत प्रेम था। उसकी बगिया में ऐसे खूबसूरत फूल थे कि दूर के गांवों से भी लोग देखने आते। लेकिन मां बूढ़ी हो गई, बीमार पड़ गई। बीमारी में उसे एक ही चिंता थी, अपने मरने की नहीं, अपने फूलों के मर जाने की। वह बहुत दुखी थी तो माओत्से ने कहा कि ठीक है तुम चिंता न करो, मैं तुम्हारें फूलों की देखभाल कर लूंगा।
वो छोटा सा लड़का था। वह फूलों की देखभाल करने गला, पंद्रह या बीस दिन बाद

मां ठीक हुई। वह दिन भर बगीचे में ही लगा रहता था कि कहीं मां के फूल नष्ट न हो जायें, लेकिन खुद भी हैरान था, सारी मेहनत के बाद भी फूल थे कि कुम्हलाते गये, सूखते गये, पौधों के पत्ते भी फीके पड़ गये, मुर्दा पड़ गये, उदास हो गये। वह बड़ा हैरान था दिन भर मेहनत करता था।
पंद्रह-बीस दिन बाद मां जैसे ही थोड़ी उठने लायक हुई, फौरन पहले बगीचे में आई। देखा तो उसकी आंख में आंसू आ गए, उसने कहाः तुमने यह क्या किया? बगिया तो उजाड़ डाली, यह तुमने किया क्या? उसकी आंखों में आंसू आए बगिया उजड़ने से, माओ भी रोने लगा, वह बोला कि मैं क्या करूं, मैं तो एक-एक फूल को चूमता था, एक-एक फूल को प्रेम करता था, एक-एक फूल पर पानी छिड़कता था, कपड़े से एक-एक फूल को झाड़ता था, पत्ते-पत्ते को साफ करता था; पता नहीं क्या हुआ कि फूल तो सब मरते ही चले गये। उसकी मां हंसने लगी, उसका रोना हंसने में बदल गया। उसने कहाः तू है पागल। फूलों के प्राण फूलों में थोड़ी होते हैं? फूलों के प्राण तो जड़ में होते हैं, जो दिखाई नहीं पड़ती। फूलों को थोड़ी पानी देता होता है, जड़ को पानी देना होता है। फूलों को थोड़ी पोंछना और प्यार करना होता है, जड़ को सम्हालना होता है। अदृश्यमय है जड़। दृश्य में है फूल। अदृश्य को संभालें, दृश्य अपने आप संभल जाता है। और जो फूल को सम्हालता है और जड़ को भूल जाता है, वह नष्ट हो जाता है।
हमारे मुल्क में अहिंसा को सम्हालते हैं, प्रेम को संभालते हैं, अपरिग्रह को संभालते हैं, ब्रह्मचर्य को संभालते हैं, ये सब फूल हैं। और जड़, जड़ की कोई फिक्र नहीं है। और इसलिए फूल कुम्हलाते जाते हैं। अहिंसा की बकवास होती है, अहिंसा कहां है? हिंदुस्तान पूरा मुल्क अपने को अहिंसक कहता है, इस जैसा हिंसक मुल्क खोजना कठिन है। क्या हुआ हिंदुस्तान-पाकिस्तान बंटवारे के वक्त? किसने किया वह सब? अभी चीन और पाकिस्तान का हमला हुआ तो क्या हुआ? सारे मुल्क में कैसा फीवर चढ़ गया, हिंसा का? सारे कवि एकदम हिंसा उगलने लगे। सारे राजनैतिक हिंसा उगलने लगे। जिनके दिमाग में भी थोड़ा पागलपन था, क्रोध था वो भी भाषण करने लगे, वे भी गीत लिखने लगे। इनको छोड़ दें, साधु और संत भी कहने लगे कि इस वक्त तो अब अहिंसा की रक्षा के लिए हिंसा की जरूरत है। अहिंसा की रक्षा के लिए हिंसा की जरूरत? साधु और संत भी कहने लगे कि जाओ और अहिंसा के देख की रक्षा के लिए हिंसा करो। वरन करो अब तो युद्ध। यह कहां की अहिंसा है, अहिंसा, यह कोई अहिंसा नहीं है। सब थोथा पाखंड और झूठ है। हो नहीं सकती अहिंसा, हो नहीं सकता प्रेम, हो नहीं सकती शांति, हो नहीं सकता अपरिग्रह। क्योंकि जड़ आत्मा को तो हमने खो दिया है। अहिंसा कैसे हो सकती है? जो आत्मा को पाता है, उसके जीवन में अहिंसा आती है, प्रेम आता है, करुणा आती है, दया आती है, सेवा आती है। सब अपने आप आता है, ये तो फूल हैं, आत्मा की जड़ हैं। इसलिए मैंने प्रेम की बात नहीं की, क्योंकि प्रेम की बात तो व्यर्थ है। बात मैंने की कैसे आपके भीतर जो आपका स्वरूप है, वह प्रकट हो सके। जब स्वरूप प्रकट होगा उसके साथ ही ये सब फूल अपने आप आएंगे। अगर इन फूलों को लाना है तो स्वयं को मुक्त करना होगा और स्वयं के विवेक को जाग्रत करना होगा। उसके सिवाय और कोई मार्ग नहीं है।

मेरी इन बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना है, उससे मैं बहुत अनुगृहीत हूं। और आप सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।